गोपाल कवि

कृत

रीतिकालीन साहित्य के वैविध्य मे

दंपति वाक्य विलास

संपादक

डा० चन्द्रभान रावत

[हिन्दी विभागाध्यक्ष, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान]

डा० राम कुमार खंडेलवाल

[रीडर, हिन्दी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद]

प्रकाशक

हिन्दी अकादमी

हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)

क्रमाणिका

आभार

रीतिकालीन साहित्य के वैविध्य की चर्चा प्राय रीतिकार के ममन विद्वानो ने की है। 'दंपति वाक्य विलास' उसी मत को अपने ढंग से सिद्ध करने वाली रचना है। इसका इस रूप में प्रस्तुत करने में अनेक सूत्रों का सगठन हुआ है। इन सभी सूत्रों का महत्त्व है हम सभी के प्रति आभारी है।

सबसे पहले हम वृन्दावन स्थित श्रीरंग जी के मन्दिर के गद्दी नशीन स्वामी श्री रंगाचार्यजी महाराज के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। इस ग्रंथ की सबसे बड़ी प्रति श्री रंगलक्ष्मी पुस्तकालय वृंदावन में ही है। श्री रंगाचार्यजी की कृपा से वह पाठ शोधन के लिए प्राप्त हो सकी। उनकी इस कृपा के बिना इसका संपादन कार्य किस प्रकार पूर्ण नहीं होता।

जब इस ग्रंथ का प्रकाशन निश्चित हो गया, तब हमने स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल को पत्र लिखा कि वे ज्ञानकोश की संस्कृत प्राकृत, और आधुनिक भाषाओं की परम्परा को स्पष्ट करते हुए एक विशद भूमिका लिखें, और आपने भूमिका लिखना स्वीकार भी कर लिया था। उन्होंने-पत्र लिखा

काशी विश्वविद्यालय

प्रिय श्री चन्द्रभान जी,

'दपति वाक्य विलास' पुस्तक की सामग्री रोचक जान पडती है। आप अवश्य सम्पादन कर। जब मुद्रित फाम भेजगे, मैं भूमिका लिख दूगा।

शुभेच्छु
वासुदेव शरण

और हमे खेद है कि मुद्रण-काय टलता गया। हम एक दिग्गज पारखी मे भूमिका का प्रसाद न ले सके। परिणामत पुस्तक उनकी भूमिका के बिना ही प्रस्तुत की जा रही है। उनके प्रोत्साहन की गूज तो बनी ही रही। सामग्री पर उनकी छाप तो लग ही गई। हम इस के लिए उस दिवगत आत्मा के प्रति ऋणी है।

योजना यह भी थी कि हम श्री प्रभुदयालजी मीतल से कवि के जीवन सबधी एक लेख लिखवा कर इस पुस्तक मे दे दें। मीतलजी ने कवि का कुछ परिचय 'चैतन्यमत और व्रज साहित्य' मे दिया है। साथ ही आपने दपतिवाक्यविलास' पर एक लेख भी लिखा है। हमार पूछ ने पर उन्होने कवि के सबध मे महत्वपूण सूचनाएँ भी दी। इन सभी अन्तवहि़य सूत्रा के आधार पर कवि का परिचय प्रस्तुत किया गया है। श्री मीतलजी के सहयोग का मूल्य हम हृदय से स्वीकार करते हैं।

श्री अगर चन्द नाहटा का सहयाग भी कम महत्वपूण नही रहा। आपने ही हमारा ध्यान इस ग्रथ की मुद्रित प्रतियो की ओर

आकर्षित किया । आपने हमे उसकी मुद्रित प्रति दिलवाई भी, साथ ही कुछ अन्य प्रतियो की सूचना भी दी । 'सरस्वती' मे आपने इस ग्रथ पर एक लेख भी लिखा ।

हम हिन्दी अकादमी के उन सभी सदस्यो के प्रति अपना आभार प्रकट करते है, जिन्होने इस ग्रथ के प्रकाशन का भार स्वीकार किया ।

व्रज भाषा के मर्मज्ञ विद्वान तथा कवि प० मधुसूदनजी चतुर्वेदी आचार्य सर बसी लाल बालिका विद्यालय, हैदराबाद के प्रति आभार प्रकट करने के लिए हमारे पास शब्द नही है । हिन्दी अकादमी के मत्री होने के नाते उन्होने प्रकाशन की पूरी व्यवस्था की तथा प्रूफ सशोधन मे बहुत सहायता दी । सपादन मे भी उनके व्रज-भाषा ज्ञान का हमने पूरा लाभ उठाया तथा उनके अमूल्य सुझावो को अपनाया ।

अकादमी के अध्यक्ष श्री वासुदेव नाईक उपाध्यक्ष डॉ० राम निरजन पाडेय (प्रोफैसर व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय), तथा अन्य स्थायी सदस्य डॉ० राज किशोर पाडेय, डा० गया प्रसादजी शास्त्री, श्री व्रज नाथ जी चतुर्वेदी, श्री ऋभुदेवशर्मा तथा श्रीमती शैलबालाजी आदि के हम बहुत आभारी हैं, जिनकी सहायता से पुस्तक प्रकाशित होसकी ।

अत मे हम उन सभी के प्रति आभारी है जिनसे हमने इस कार्य मे मार्ग दर्शन एव सहयोग प्राप्त किया ।

चन्द्रभान रावत
दीपावली, स० २०२५ वि० रामकुमार खडेलवाल

प्रिय श्री चन्द्रभान जी,

'दपति वाक्य विलास' पुस्तक की सामग्री रोचक जान पडती है। आप अवश्य सम्पादन कर। जब मुद्रित फाम भजेंगे, मैं भूमिका लिख दूगा।

शुभेच्छु
वासुदेव शरण

और हमे खेद है कि मुद्रण काय टलता गया। हम एक दिग्गज पारखी से भूमिका का प्रसाद न ले सके। परिणामत पुस्तक उनकी भूमिका के बिना ही प्रस्तुत की जा रही है। उनके प्रोत्साहन की गूज तो बनी हो रही। सामग्री पर उनकी छाप तो लग ही गई। हम इस के लिए उस दिवगत आत्मा के प्रति ऋणी है।

योजना यह भी थी कि हम श्री प्रभुदयालजी मीतल से कवि के जीवन सबधी एक लेख लिखवा कर इस पुस्तक मे दे दें। मीतलजी ने कवि का कुछ परिचय 'चैतन्यमत और ब्रज साहित्य' मे दिया है। साथ ही आपने दपतिवाक्यविलास' पर एक लेख भी लिखा है। हमारे पूछ ने पर उन्होने कवि के सबध मे महत्वपूण सूचनाएँ भी दी। इन सभी अन्तर्वहित्य सूत्रो के आधार पर कवि का परिचय प्रस्तुत किया गया है। श्री मीतलजी के सहयोग का मूल्य हम हृदय से स्वीकार करते है।

श्री अगर चन्द नाहटा का सहयोग भी कम महत्वपूण नही रहा। आपने ही हमारा ध्यान इस ग्रथ की मुद्रित प्रतियो की ओर

आकर्षित किया । आपने हमे उसकी मुद्रित प्रति दिलवाई भी, साथ ही कुछ अन्य प्रतियो की सूचना भी दी । 'सरस्वती' मे आपने इस ग्रथ पर एक लेख भी लिखा ।

हम हिन्दी अकादमी के उन सभी सदस्यो के प्रति अपना आभार प्रकट करते है, जिन्होने इस ग्रथ के प्रकाशन का भार स्वीकार किया ।

व्रज भाषा के मर्मज्ञ विद्वान तथा कवि प० मधुसूदनजी चतुर्वेदी आचार्य सर बसी लाल बालिका विद्यालय, हैदराबाद के प्रति आभार प्रकट करने के लिए हमारे पास शब्द नही है । हिन्दी अकादमी के मत्री होने के नाते उन्होंने प्रकाशन की पूरी व्यवस्था की तथा प्रूफ सशोधन मे बहुत सहायता दी । सपादन मे भी उनके व्रज-भाषा ज्ञान का हमने पूरा लाभ उठाया तथा उनके अमूल्य सुझावो को अपनाया ।

अकादमी के अध्यक्ष श्री वासुदेव नाईक उपाध्यक्ष डॉ० राम निरजन पाडेय (प्रोफैसर व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय), तथा अन्य स्थायी सदस्य डॉ० राज किशोर पाडेय, डा० गया प्रसादजी शास्त्री, श्री बैज नाथ जी चतुर्वेदी, श्री ऋषदेवशर्मा तथा श्रीमती शलबाल्जी आदि के हम बहुत आभारी है, जिनकी सहायता से पुस्तक प्रकाशित हो सकी ।

अत मे हम उन सभी के प्रति आभारी है जिनसे हमने इस कार्य मे मार्ग दर्शन एव सहयोग प्राप्त किया ।

चद्रभान रावत

दीपावली, स० २०२५ वि०　　　　रामकुमार खडेलवाल

प्रकाशक की ओर से

हिंदी अकादमी की स्थापना सन १९५६ ई० में हुई थी। इसके संस्थापक सदस्यों में श्री डा० एम० भगवन्तम डा० आर्येन्द्र शर्मा प० नरेन्द्रजी, डा० एम श्री देवी श्री बदरी विशाल पित्ती, श्रीमती सुशीला देवी विद्यालंकार प्रमुख हैं। अपने अत्यन्त सीमित साधनों के बल पर भी अकादमी ने हिंदी में ग्रंथों के प्रकाशन का कार्य अपने हाथ में लिया है। अकादमी मलिक मुहम्मद जायसी की शोध म प्राप्त कृति 'चित्ररेखा' का प्रकाशन करना चाहती है। डा० राम निरंजन पांडेय उसकी भूमिका लिख रहे हैं। अकादमी ने दक्षिण की पांच प्रमुख भाषायें- तेलुगु तामिल, मराठी, कन्नड, और मलयालम की दो दो चुनी हुई कहानियां लेकर 'श्रेष्ठ कहानियां" संग्रह प्रकाशित किया है। इसको के आर्थिक सहयोग से अकादमी "साझक स्वर" और 'साहित्यक चिन्तन' प्रकाशित कर सकी है। 'दम्पति वाक्य विलास" अकादमी का चौथा प्रकाशन है।

'दंपति वाक्य विलास का प्रकाशन अकादमी के इतिहास का एक गौरवपूर्ण अध्याय है। डा० चन्द्रभान रावत हिंदी विभागाध्यक्ष वन स्थली विद्यापीठ, राजस्थान और डा० रामकुमार खंडेलवाल, रीडर हिन्दी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद के प्रति आभार प्रकट करना अकादमी अपना परम कर्तव्य समझती है, जिन्होंने वृन्दावन निवासी राय गोपाल कवि के युग को प्रतिबिम्बित करने वाले इस ज्ञान कोष का श्रम पूर्वक सम्पादन कर अकादमी को इसके प्रकाशन का अवसर प्रदान किया।

अकादमी ने आंध्र प्रदेश के शिक्षा मंत्री माननीय श्री पी वी नरसिंह राव की सेवा में अनुदान के लिए आवेदन प्रस्तुत किया है। अनुदान प्राप्त होने पर अकादमी अपने प्रकाशन कार्य में बहुत आगे बढ सकेगी।

दम्पति वाक्य विलास' को यथा संभव सुन्दर बनाने का प्रयास किया गया है। सुहृदजन अकादमी के इस प्रयास को अपना कर हमारा साहस बढाएँगे- ऐसी आशा निराधार नहीं है।

राजा बहादुर सर बंसी लाल बालिका विद्यालय, **मधुसूदन चतुर्वेदी**
बेगमबाजार, हैदराबाद दक्षिण (आ० प्र०) मंत्री
चैत्र शु १, २०२६ वि १९-३-६९ हिन्दी अकादमी

प्रस्तावना

कवि

नाम– श्री प्रभुदयाल मीतल ने इस कवि का मूल नाम गोपालदास दिया है। साथ ही उन्होंने 'गुपाल कवि' को उनका उपनाम माना है।[1] 'दपतिवाक्यविलास' में गोपालदास तो किसी स्थान पर नहीं आया है। उसकी छाप में तीन नाम ही प्राय मिलते है। गुपाल कवि या कवि गुपाल राय और गुपाल। गुपाल कविराय भी मिलता है। दपति वाक्यविलास की मुद्रित प्रति के ऊपर छपा है दपति वाक्य विलास कविवर गोपालराय कृत।[2] विज्ञापन से भी यही नाम दिया गया है। इस प्रकार कवि का नाम गोपाल राय ही प्रतीत होता है, गोपालदास नहीं। मुद्रित प्रति में प्रत्येक विलास के अन्त में भी 'गोपाल कविराय विरचित' दिया हुआ है। पता नहीं, मीतल जी को 'गोपालदास' नाम कहा से मिला। 'राय' वश में उत्पन्न होने के कारण गोपालराय नाम ही ठीक प्रतीत होता है। वश में रायान्त नामो की परम्परा भी प्रतीत होती है। इनके पिता का नाम प्रवीण-राय या परगराय था।

काल

श्री जी मीतलजी ने इनके काल निर्धारण के सबध मे अपना मत इस प्रकार दिया है। 'उनके जन्म और देहावसान के ठीक ठीक सवत् अज्ञात हैं। किन्तु उनके रचना काल से उनका अनुमान किया जा सकता है। उनकी एक रचना 'श्री वृन्दावन धामानुरागावली' की पूर्ति स० १९०० में हुई थी। इससे उनका जन्म स० १८६० के लगभग और देहावसान स० १९२० के

---

१ चैतन्य मत और ब्रज साहित्य पृ ३१३

२ दपति वाक्य विलास, (प्रकाशन स १६६८) मुख पृष्ठ।

लग भग अनुमानित होता है।[1] वृन्दावन रामानुरागाचार्य से पूर्व ही 'दम्पति वाक्य विलास' की रचना हुई थी। सं १८८८ में यह ग्रंथ बना।[1] इसके रचना काल से भी मीतल जी द्वारा निर्धारित तिथियों को मानने में बाधा नहीं पड़ती। 'दम्पति वाक्य विलास' की तृतीयावृत्ति सं १९६८ में हुई। किन्तु यह आवश्यक नहीं कि उस समय तक कवि जीवित ही रहे हों। मुद्रित प्रति में इस संबंध में कोई सूचना नहीं मिलती। प्रकाशकों को इस ग्रंथ की प्रति भी कवि से प्राप्त नहीं हुई थी। अतः कहा नहीं जा सकता कि सं १९६८ में कवि जीवित था या नहीं। इन सब तिथियों के आधार पर कवि की वास्तविक स्थिति के संबंध में निश्चित तो कुछ नहीं कहा जा सकता, फिर भी मीतल जी का अनुमान ठीक प्रतीत होता है। कवि का संबंध रीतिकाल के अवसान-काल से है। रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ कवि की कृति में स्पष्ट परिलक्षित होती है। साथ ही अंग्रेजी शासन भी जम गया था। उसकी व्यवस्था पर कवि ने विस्तार के साथ प्रकाश डाला है। किन्तु इस समय तक आधुनिकता का साहित्यगत उन्मेष नहीं हो पाया था।

३ स्थान

अन्तर्साक्ष्य से इतना निश्चित होता है कि कवि का जन्म वृन्दावन में हुआ था। अपने पिता के विषय में कवि ने लिखा है कि उनका निवास वृन्दावन के मनीपारे नामक मुहल्ले में हुआ था। पर आज उस मुहल्ले में रायों के घर नहीं है। पूछने पर भी इनके वंशजों के संबंध में कोई विशेष सूचना नहीं मिली।

---

२ चैतन्य मत और ब्रज साहित्य, पृष्ठ ३१३

१ अठारह से छियासिया पूर्या अगहन मास, द बा वि १। १५

कुछ वयोवृद्धा ने इतना अवश्य बतलाया कि पहले यहा कुछ राधा के घर अवश्य थे। कवि ने मनीपारे का वणन बड गव के साथ किया है। गोपाल ने स्वय लिखा है कि यहा मुख्यत मिश्र लोगो के घर हैं और दावार घर राय लोगो के भी है। "भनत गोपाल ताम चारिस हमारे घर'।[2] इस मुहल्ले म अधिकाश ब्राह्मणो का निवास थे। इस प्रकार गोपाल कवि वृन्दावन के मनीपार नामक मुहल्ले के निवासी थे। वही उनका जन्म भी हुआ था। कवि ने वृदावन-वास पर गव भी किया है —

> तीनि लोक जानी, जहा वह पटरानी, एसी
> वन्दावन जू की हम रह राजधानी म।

४ कविवश

'दपति वाक्य विलास' में कविने अपने वश का परिचय दिया है। इस परिचय म प्राप्त शृखला इस प्रकार है। मुरली धर—घनश्याम—प्रवीणराय—गोपालराय।[1] इस प्रकार कवि के पिता प्रवीणराय ठहरते हैं। मीतलजी ने लिखा है। "उनके पिता का नाम खड्गराय था। व चैतन्य मतानुयायी रामवक्स भट्ट के शिष्य थे।" "उनके प्राचीन आश्रयदाता पटियाला महाराज कर्मसिंह के छोटे भाई अजीतसिंह थे।[2] ये सूचनाय मीतलजी ने 'दिग्विजय' भूषण के आधार पर दी है। आगे के एक दोहे म गोपाल कवि ने अपने पिता का नाम खडगराय भी दिया है। "परगराय परवीनसुत गोपाल यह नाम"[3]

---

१ प्रस्तुत ग्रथ, ११४
२ चैतन्य मत और ब्रज साहित्य पृ ३१३
३ प्रस्तुत ग्रथ ६।५

उनम पिता के नाम नाम प्रवीनराय और परमराम-भाय है। अनुमान लगाया जा सकता है कि परमराम सभवत प्रवीणराय का बिरुद होगा।

गोपाल कवि के वश म काव्य रचना की परम्परा रही। उनके पिता परमराय ने कई रचनाएँ की थी –

जनमि प्रवीन ग्रंथ पिंगल औ रमसार
एकादसी महातम मराम को गायो है।   १

इस प्रकार काव्य शास्त्रीय और पौराणिक काव्य धारा कवि गोपाल के पूर्वजो के प्रातिभ तम्पदा मे गति ग्रहण करती रही। स्वय गोपाल कवि ने इसी परम्परा का निर्वाह किया। उनकी कृतिया भी इन्ही दो वर्गों म विभाजित की जा सकती है। काव्य ग्रंथ गोपाल की तीसरी पक्ति म सबद्ध है। दम्पति वाक्य विलास' एव ज्ञान-प्रकाश है। इसकी प्रेरणा भी कवि के अनुसार, उसे अपने पिता प्रवीणराय से ही प्राप्त हुई। इस ग्रथ की योजना और इसका उद्देश्य, दोनो ही आध्यिक है।

कवितावृत्ति सुखदुख के कवित बनाए दोइ।
कवि प्रवीन पितु का जबहि जाइ सुनाए सोइ।
है प्रसन्न ताही घरी आज्ञा मोका दीन।
दपतिवाक्यविलास सुत की जग्रथ प्रवीन।
जिनकी आज्ञा पाय म दीनौ ग्रथ प्रकाश।
कहत-सुनत याके सदा, होइ बुद्धि परगास।

कवि के वश म काव्य की चार प्रवृत्तिया मिलती हैं, काव्य शास्त्रीय भक्तिभाव सबधी, पौराणिक और ज्ञानप्रकाशय। इनका प्रतिनिधित्व कवि गोपाल की कृतिया करती है।

---

१ वही १।४

५ कवि का सप्रदाय

कवि के पिता चतय मतानुयायी थे। [2] व्रजम चैतय मत का घनिष्ट सबध रहा है। व्रज के अनेक स्थानो पर चतन्य मत और उसके आचाय एव भक्तो से सबधित स्मतिचिन्ह वतमान ह। इस दृष्टि से राधाकुड और वृन्दावन का नाम विशष उल्लेखनीय है। [3] गोपाल कवि का वश भी इसी सप्रदाय में दीक्षित था। इस कवि के समान अन्य अनेक कवि भी इस सप्रदाय से सबधित रहे है। बहुत से कवियो को व्रजभाषा साहित्य को समद्ध करने का श्रेय है। किंतु अन्य सप्रदायो के व्रजभाषा कवियो की अपेक्षा, इस सप्रदाय के कवियो की सख्या कम अवश्य है।

इस सप्रदाय के कवियो ने माधुय भाव से सबधित काव्य ही किया है। [4] गुपाल कवि की रचनाओ में कुछ म इस भाव की विवृत्ति अवश्य है। सभवत मान पचीसी, रासपचाध्यायी जैसी कृतियो म माधुय की फुहारो की सिहरन है। अय रचनाओ म कवि का बौद्धिक पक्ष ही अधिक प्रकट हुआ है। सभी रचनाओ में श्री वदावनधाम [1] की महिमा का गायन अवश्य ह। कवि 'काव्य शास्त्र के अच्छे विद्वान और व्रज-वृदावन के अनुपम अनुरागी थे। उहाने जहा काव्य के विविध अगो का विस्तत विवेचन किया है, वहा व्रजभक्ति और

---

१ प्रस्तुत ग्रथ १। १०–१२

२ प्रभुदयाल मीतल चतय मत और व्रज साहित्य, प ३१२

३ विषय विवरण के लिए दष्टव्य वही पृष्ठ १२४–१२५

४ इस प्रकार क कवियो में सूरदास मदनमोहन, गदाधर भटट जस कवियो का नाम स्मरणीय है।

१ श्रीवृन्दावन धामानुरागावली में उसका वन्दावन प्रम बौद्धिक विवरण और अगमधान क सात कूट पढन है।

व्रजमण्डल पर भी यथेष्ट प्रकाश डाला है वृन्दावन वासियों की कृपा-कटाक्ष की कामना भी कवि ने की है वृन्दावन वासियों की कृपा कटाक्षहिं पाऊं ।[3] आज भी वृन्दावन वासी अनेक चैतन्यमतानुयायी बंगालियों की ऐसी भावना मिलती है ।

'रूपतिवाक्यविलास' के मंगलाचरण में भी कवि का वृन्दावन प्रेम छलक रहा है। मंगलाचरण में 'राधिकारमण' का स्मरण है -'राधिकारमण के चरन की सरनि में,। मातभूमि वंदना' में कवि ने वृन्दावन का स्यामा स्याम धाम सब पूरन करन काम 'कहा है। यमुना को' पटरानी नाम से अभिहित किया है। इस प्रकार कवि के वन्दावन प्रेम में चैतन्यमत के प्रभाव की छाया ढूंढी जा सकती है।

६ आश्रयदाता

मीतलजी के अनुसार इनके पिता पटियाला राज्याश्रित कवि थे।[4] हो सकता है गोपाल कवि भी पटियाला राज्य से सबद्ध हो। पर इसका स्पष्ट उल्लेख कहीं प्राप्त नहीं होता। मुद्रित प्रति के विज्ञापन में प्रकाशक ने लिखा है, आजदिन महा राज श्री १०८ श्रीकृष्णगढाधिपति की कृपाकटाक्ष से रूपति वाक्यविलास नामक ग्रंथ श्रीयुत कविगोपालराय निर्मित कवीश्वर श्री जयलाल के द्वारा मेरे हस्तगत होने से मेरी आशा पूरी हुई।

इससे प्रतीत होता है कि खेमराज श्रीकृष्णदास को पुस्तक की प्रति कृष्णगढ नरेश से प्राप्त हुई थी। ग्रंथ के अंत में कृष्णगढ के राजा पृथ्वीसिंह की प्रशस्ति में दो छंद भी है -

२ प्रभुदयाल मीतल चैतन्य मत और ब्रज साहित्य पृ ३१३

३ श्री वन्दावन धामानुरागावली का आरम्भिक छन्द, मीतलजी द्वारा पृ ३१४ पर उद्धृत।

४ चैतन्य मत और ब्रज साहित्य, पृ ३१३

राजन के राजाधिपति, पृथ्वीसिंह भूप ।
रजधानी श्रीकृष्णगढ़, राजत दुर्ग अनूप ।
गो द्विज पालक वृत दृढ घालक अरिदल शाल ।
दिनकर दिनकर वंश के, पृथ्वीसिंह महिपाल ।[1]

यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि ये दोहे कवि गोपाल के द्वारा रचित है अथवा प्रकाशक-सपादक की रचना हैं। अन्य प्रतियों में ये दोहे नहीं है, अतः इनका गोपालराय के द्वारा रचा जाना सदिग्ध है। यदि ये कवि के द्वारा रचे हुए है, तो कृष्णगढ के राजा पृथ्वीसिंह से भी कवि का सबध स्थापित हो जाता है। किशनगढ़ में उस समय इस प्रकार के कवियों का सम्मान विशेष था। पर, यदि कवि का सबध इस दरबार से होता तो वृन्दावनवाली प्रति में अवश्य ही इसका उल्लेख होता। इस लिए कृष्णगढ से कवि का सबध न मानना ही उचित प्रतीत होता है। इतना अवश्य है कि कवि का किसी राजा के दरबार से सबध था। यह लगता है कि गोपालराय के पूर्वज पूर्णतः किसी राजा के दरबार से सबद्ध होंगे। गोपाल कवि का सबध उस दरबार से नाममात्र का रह गया होगा। यदि किसी राजा के पूर्णतः आश्रित होकर गोपाल अपनी रचनाएँ करते तो कहीं न कहीं आश्रयदाता का नाम भी आता। वशवृत्ति का निर्वाह करते हुए भी कवि ने अपनी काव्य-साधना सभवतः स्वतत्र रहकर ही की।

२ कृतित्व

गोपाल कवि को प्रतिभा, अभ्यास और वंश-परम्परा सभी कुछ मिला। इसी विरासत ने उन्हें एक बहुत कवि बना दिया। गोपाल कवि ने दपति वाक्य विलास के अन्तिम भाग में अपनी

---

१ दपति वाक्य विलास (मुद्रित प्रति) पृ १२८

अठारह रचनाओं की सूची दी है। दूसरी प्रस्तुत की श्री मीतल जी ने दी है। इस सूची में मीतलजी ने सत्रह रचनाएँ गिनाई हैं। इन दोनों सूचियों में समान रूप से उल्लिखित केवल चार रचनाएँ हैं। ध्वनि वाक्य विलास, मान पचीसी, रसमागर राम पंचाध्यायी, और व्रजयात्रा। मीतलजी ने इनके अतिरिक्त य रचनाएँ और गिनाई हैं। दूषण विलास, ध्वनिविलास, भावविलास भूषणविलास व्रजयात्रा, वृन्दावन महात्म्य, श्री वृन्दावन धामानुरागिनी, वंशीलीला, वर्षोत्सव, गोपालभटट चरित, वृन्दावन वासिन कवित और भक्तमालटीका। इन रचनाओं में काव्य शास्त्रीय रचनाएँ अधिक हैं। कवि द्वारा दपतिवाक्यविलास क अत म दी हुई सूची में ये रचनाएँ ऐसी हैं, जिनका उल्लेख मीतल जी ने नही किया ह दानलीला, प्रश्नोत्तर, षटऋतु, नखशिख, चीर-हरण, वनभोजन वेणुगीत, दशम कवित, अकलनामा, गुरुकोमुदी जमुनाष्टक गंगाष्टक और वन्दावन विलास। इनम अधिकाश रचनाएँ कवि के भक्तिभाव को प्रकट करने वाली रचनाए है। मीतल जी ने अपनी सूची के स्रोत के सबध में कुछ भी सूचना नही दी ह। इससे इसकी प्रामाणिकता के सबध म कुछ भी नही कहा जा सकता।

उक्त दोनों सूचियो को ध्यान म रखकर, गोपाल कवि क कृतित्व का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता ह। कवि गोपाल के कावकम की तीन दिशाएँ हैं काव्य-शास्त्रीय भक्तिमूलक, और ज्ञानपरक। दूषणविलास, भूषणविलास जैसी रचनाएँ कवि के भक्तिभाव की परिचायिका ह। अकलनामा और दपतिवाक्यविलास कवि की बहुज्ञता से सबधित हैं। परिणाम की दृष्टि से भी कवि की उपलब्धि उल्लेखनीय है। मीतलजी ने कवि की अभिरुचि पर यह वक्तव्य दिया ह—'वे काव्यशास्त्र के अच्छे विद्वान और व्रज वृदावन के अनुपम

अनुरागी थे। उन्होंने जहाँ काव्य के विविध अंगों का विस्तृत विवेचन किया है, वहाँ व्रजभक्ति और व्रजमहत्व पर भी यथेष्ट प्रकाश डाला है। मीतलजी ने गोपाल-रचित जितने ग्रंथों का देखा है, यह तो नहीं कहा जा सकता है किन्तु ग्रंथों के आधार पर उन्होंने जो निष्कर्ष निकाले है, वे वैज्ञानिक हैं।

कवि का कृतित्व परपरा से सम्बद्ध तो है ही, उसका युग-बोध भी पर्याप्त तीव्र और वशिष्ट्य-पूर्ण है। प्रबन्ध और मुक्तक दोनों ही किनारों के बीच कवि की भावधारा प्रवाहित हुई है।

३ दंपति वाक्य विलास

१ प्रेरणा

कवि ने ग्रंथ की प्रेरणा अपने पिता से प्राप्त की। इसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। गोपालराय ने एक दिन दाम्पत्य रचना व सुख दुख पर दो कवित्त बनाकर अपने पिता को सुनाए। पिता ने प्रेरणा दी कि इसी प्रकार जीवन के प्रत्येक कार्य-व्यवसाय के दोनों पक्ष स्पष्ट किये जा सकते है और प्रस्तुत ग्रंथ का बीज वपन हो गया।[1] इस ग्रंथ को मुद्रित प्रति के विज्ञापन में ग्रंथ की प्रकृति का स्पष्टीकरण किया है "इस पुस्तक का प्रश्नोत्तर की रीति से उक्त कवि ने बड़ी उत्तमता से बनाया है, जिसमें पुरुष ने प्रत्येक उद्यमों का गुण दोहा और कवित्त में वर्णन किया है और स्त्री ने उन्हीं छन्दों में उसका दोष दिखाया है।" ऊपर के मुखपृष्ठ पर लिखा है 'सम्पूर्ण उद्यम-व्यापार तथा हुनरों के गुण-अवगुण परम मनोहर दोहा सोरठा कवित्त आदि छन्दों में वर्णित हैं।' इस प्रकार जीवन व्यापार के विभिन्न पक्षों के गुण-दोषमय रूप को अंकित

---

१ दंपतिवाक्य विलास १।१०-११

रग्गे की प्रग्णा रवि रो मिन्गे और उसी प्रग्णा रा परिणाम विरमित होता गया।

मबसे बडी प्रग्णा कवि रा युग स मिन्गी। गोपार कवि न अपने पूव र वनिरम पर विचार किया उसने रस सागर आदि अनेक विग्ल्ट रचनाएँ री थी। उन रचनाओ का ग्राहर वग अयन्त मीमित था। तव कवि न जन की प्रवत्ति र अनरूप यह मुगम रचना की

रससागर दै आदि वहु, किए ग्रथ अ रिाम।
कठिन अथ अर ग्लेपयुत कीने तिनमे काम।
सव कोऊ समर्थ न जह, ममझ जिन प्रबीन।
याते लौकिर ग्रथ यह, कीनौं मुगम नवीन। [1]

इस प्रकार कवि का लोकप्रिय रचना करने की प्ररणा अपन अतर मे ही मिली। उसकी अवतक की रचनाएँ रीतिकालीन चमत्कारी, श्लिप्ट, और किल्प्ट काव्य की परम्परा म आती थी। प्रस्तुत कृति मे कवि ने उस माग को छाडा है। कवि को युग रुचि की पहचान भी है रीतिकालीन काव्य-रुचि का ह्रास हो गया था। तत्कालीन जन मन को समय कर ही कवि क इस प्रकार की रचना मे प्रवत्त होना पडा —

समय वमूजिव देखि कीयो ग्रथ प्रकास।
आज काल के नरा के, सुनि मन होइ हुलास। [2]

---

१ ग वा वि (मुद्रित प्रति) २१। १२ १३

२ २१। १४

कवि अन्त में क्षमा प्रार्थना भी करता है—

> याते मुकवि गुपाल को, देउ दोष मति कोइ।
> ना मजिम देखी हुवा, ता सम बरणी होइ।

इस प्रकार कवि ने युग-रुचि का देख कर ही इस ग्रंथ की रचना की प्रेरणा ग्रहण की। युग-रुचि एक प्रकार से काव्य-शास्त्रीय संस्कारों से मुक्त हो रही थी। उस समय राज्याश्रय शिथिल होने लगा था। आदर ऐसी रचनाओं का था, जिनमें युग के सजीव स्पंदनों की वाणी मिली हो।

२ विषय-वस्तु

इसमें वाक्य विन्यास एवं ज्ञानकोश है। कवि ने अपने युग का प्रायः सभी शासकीय, धार्मिक एवं सामाजिक इकाइयों का परिचय दिया है। सम्भवतः कोई संस्था या जाति ऐसी नहीं बची जिस पर कवि ने अपनी मौलिक दृष्टि व्यक्त न की हो। अपनी बात को निर्भय रूप से कह देना जैसे कवि का स्वभाव है। यही कारण है कि शब्दों के जंजाल और रूढ़ियों के बीच भी कवि के सत्य एवं यथार्थ कथन जगमगा उठते हैं। विषय वस्तु का जीवन इन्हीं पंक्तियों में है।

कवि का युग मुस्लिम शासन और उस युग की संस्कृति के अवसान का युग है। अंग्रेजी प्रभाव भारतीय क्षितिजों पर एकत्र होकर गहराने लग थे। अंग्रेजी नौकरशाही के पुर्जों की वास्तविकता सामने आने लगी थी। जनता उस नवीन व्यवस्था में जकड कर कसमसाने लगी थी। प्रस्तुत कृति के विषय का सीमाओं के निर्धारण में युग की इन्हीं परिस्थितियों का हाथ है। वस्तु के अनुकूल और प्रतिकूल दोनों ही पक्षों के अनिवार्य सन्निवेश के कारण उसमें पूर्णता आई है।

परिस्थितियो की निराशापूर्ण जटिलता व्यक्ति की पराजय का मगर बना देती है । उसका मन एक टडन धुग सा भर जाता है । जीवन कुछ किरकिरा सा हो जाता है । ये भाव स्पनितावय-विलाम मे भी प्रकट है । कवि व्यक्ति की उस निराशा का जमे अकित कर रहा हो जो प्रत्येक दिशा से माग पूछता हो और दिशा उसे माग बतलाने के स्थान पर एक व्यगपूर्ण अट्टाहास कर उठती हो । कवि की पत्नी भौतिक जीवन के अनेक मार्गों को, कभी धार्मिक विश्वासो के आधार पर और कभी व्यावहारिक कठिनाइया एव बाधाओ का सकेत करके अवरुद्ध करती मिलती है । इस प्रकार की वस्तु ध्वनि इस रचना मे मिलती है ।

वस्तु विकास की अतिम कडी कवि का परलोक चिन्ता की आर मुड जाना है । कभी विनय के स्वर सुनाई पडने लगते है करुणाष्टक मे भक्तिमूलक पुराणाश्रित करुणा ही बिगलित हो उठी है । कभी पश्चाताप की घुटन का कवि अनुभव करने लगता है - 'धोबी को सो कुत्ता भयो घर को न घाट को । पत्नी की यथार्थवादी चोटो से तिलमिला कर कवि अपनी हार स्वीकार कर लेता है, और वह कह उठता है -

> सुनिके तेरी बात को, उपज्यौ हिय मे ज्ञान ।
> भजन-भावना भक्ति बिन, वृथा गय दिन जान ।

अन्त मे स्वार्थ और परमार्थ का समन्वय ही श्रेयस्कर कहा गया है -

> यह 'गुपाल' तिय सीख सुनि, कीनो उद्यम जोइ ।
> स्वारथ ही के करत मे, परमारथ जिमि होइ ।

इस प्रकार का वस्तु-विकास जीवन की निराशापूर्ण, सघर्षमय परिस्थिति मे ही होता है। यह भी हो सकता है कि यह वस्तु कवि की वृद्धावस्था जन्य विवशता का ही परिणाम हो। कवि ने तुलसी की भाति कलिकाल के दोषो का भी भरपूर वर्णन किया है। ग्रथ के प्रयोजन के सबध मे कवि ने स्पष्ट कहा है कि इसकी रचना वैराग्य की ओर मन को प्रवृत्त करने के लिए की गई है।

'राय गुपाल' विराग वद्धामन दपति वाक्य विलास बनायौ।[1]

इस प्रकार की रचना मे सासारिकता के दोषो का वर्णन अधिक होना ही स्वाभाविक है।

वस्तु के सबध मे एक बात और भी दृष्टव्य है। इसमे कवि के स्वानुभव का ही अधिक समावेश है। वस्तु की दृष्टि से इसी लिए इसमे कुछ अधिक नवीनता और विलक्षणता आ गयी है। थोड़े से ही ऐसे विषय इसमे हैं, जिनके केवल मे कवि रूढियो से मुक्त नही हो पाया है। अन्यथा कवि के निजी अनुभव ही वस्तु योजना के मूल मे है। इसी लिए सारी भूमिका अधिक सजीव है। रीतिकालीन जडता से विषय वस्तु बोझिल नही है। वस्तु की इसी नवीनता ने इस ग्रथ की लोकप्रियता मे योगदान दिया। इसकी अनेक प्रतिया तैयार की गई।

'देपि भई रचना वचनानि की, सो सुनिकै सबने लिखवायौ[2]'

वस्तु के क्षेत्र मे यह एक नवीन प्रयोग ही था। उस युग म प्राप्त मनुष्य का अस्तव्यस्त रूप इस रचना मे प्रकट हो जाता

---

१ दंपति वाक्य विलास १।१७

२ दपति वाक्य विलास १।१७

प्राप्त कोषो में सबसे प्राचीन है।[1] आगे इसकी अविच्छिन्न परम्परा चली।[2] बहुत से कोष लुप्त भी हो चुके हैं। अमरकोष अवश्य प्राप्त होता है। इस ग्रंथ में समानार्थक, नानार्थक प्रत्यय शब्दों के विभाग भिन्न है। आगे भी नानार्थक शब्दों की नाम-मालाएँ चलती रहीं। प्राकृत में भी कोषों की परम्परा अविच्छिन्न रही।[3] देशी नाम मालाओं का नवीन सूत्र[4] देशी तत्वों की लोकप्रियता को प्रकट करता है। अपभ्रंश ने प्रायः प्राकृत शब्दकोषों की सामग्री को काम में लिया। हिन्दी में भी नाममाला कोषों की परम्परा चलती रही।[5] हिन्दी नाममालाएँ प्रायः छन्द ग्रन्थ हैं। इनका उद्देश्य शब्दकोष तैयार करना नहीं था। 'इस उद्योग का उद्देश्य यही विदित होता है कि हिन्दी के कवियों की शब्द संपत्ति को बढ़ाया जाए। हिन्दी कवियों को अपने काव्य में विविध रूपेण एक शब्द के विविध पर्यायों के प्रयोगों की आवश्यकता थी। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए ये नाममालाएं लिखी जाने लगीं'।[6] संस्कृत काव्य

---

१ भगवद्दत वैदिक कोष पृ. २८ (भूमिका)

२ इस परम्परा में ये ग्रंथ आते हैं : कात्यायन कृत नाममाला, वाचस्पति का शब्दकोष, विक्रमादित्य का शब्दार्णव, समासावत तथा व्याडिकृत उत्पलिनी आदि।

३ उदाहरण के लिए धनपाल (१००० ई०) कृत पाइअलच्छि ग्रन्थ लिया जा सकता है।

४ हेमचन्द्र (१०८८–११७२ ई०) की देशी नाममाला, अभिमान चिन्ह का देशी कोष, गोपाल का देशी कोष, द्रवराज के छन्द संबंधी ग्रंथ का देशी कोष आदि को इस सूत्र के अन्तर्गत रखा सकते हैं।

५ सूची के लिए द्रष्टव्य सत्यवती सहगल नाममाला साहित्य, भारतीय साहित्य (वर्ष ३ अंक ४) पृ. ७७–७८

शास्त्र म भी महाकवियो के उपयोग के लिए कुछ वर्णन सूचिया मिलती है। अत यह आश्चर्य की बात नहीं कि मध्ययुगीन स्वंय साहित्य के परीक्षण से भी यह सिद्ध हो जाता है कि उसपर नाममालाओ का प्रभाव था। नददास की नाममाला (मानमजरी) की रचना मे प्रच्छन्न रूप मे भक्ति मूलक उद्देश्य भी लक्षित है। इस प्रकार मध्यकालीन नाममाला-साहित्य काव्य या भक्ति के उद्देश्यो का स्तर चलो उनम कोषकार की सी वैज्ञानिक तटस्थता का प्राय अभाव है। अकारादि क्रम का भी व्यतिक्रम हो जाता है।

ज्ञानकोषो की स्पष्ट परम्परा मध्यकाल म नहीं मिलती। गोपाल कवि ने भी अपने पूर्व की परम्परा का उल्लेख नहीं किया है। वैसे नीति साहित्य की परम्परा सर्वत्र मिलती है। कभी सामान्य रूप से नीतिकथन, बिना किसी साहित्यिक आवरण और सज्जा के कर दिया जाता है। कभी कथा, लोकोक्ति या अन्योक्ति की सज्जा मे नीति निखर उठती है। ज्ञानकोष को भी नीति साहित्य की एक विधा के रूप म स्वीकार किया जाना चाहिए। पर इस विधा का उल्लेख प्राय नीति साहित्य सबधी अध्ययनो मे नही मिलता। हिन्दी के नीतिसाहित्य के प्रतिपाद्य के डा० भोलानाथ तिवारी ने ये विभाग किये है धर्म आचार व्यवहार और समाज, राजनीति, नारी, स्वास्थ्य खेती, व्यापार शकुन।[1] गोपाल कवि ने इन सभी पर कुछ न कुछ कहा है किन्तु उसका विशेष बल सामाजिक व्यवहार पर है। डा०-तिवारी ने नीतिसाहित्य की इन शैलियो पर विचार किया है उपदेशात्मक, सूक्त्यात्मक, अन्योक्ति, कथात्मक मुकरी और

---

[1] हिन्दी नीतिकाव्य (आगरा १९५८) अध्याय-

वस्तुनाना→विवेक-- | -पुरुष कथन (गुण)- / -पत्नी कथन(दोष)- | →सवाद→वैराग्य
→आध्यात्मिक तत्त्व→प्राप्ति की प्र
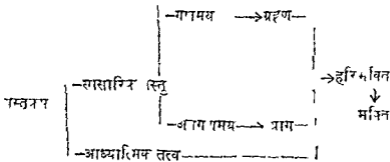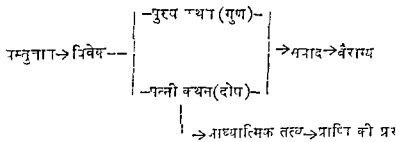
इस प्रकार समाज वस्तुस्थिति पहले विवेक की कसौटी चढ़ाई जाती है। विवेक उसके पूर्व पक्ष, और उत्तर पक्ष सामने लाकर निर्णय करना चाहता है। यह समस्त प्रक्रि तर्काश्रयी है। परिणामत मिथ्या के त्याग के लिए भूमिका जाती है। त्याग के पश्चात ग्रहण की प्रक्रिया और ग्राह्य स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। ग्रहण की प्रक्रिया म ज्ञाना मक म भक्ति भाव मे अभिसिंचित हो उठता है और काव्य का समाप हो जाता है।

वस्तुज्ञान का विवेकपूर्ण संस्कार सवाद' शैली मे उतर आ है। सवाद ही किसी वस्तु के उभय पक्षीय रूप को सामने सकता है। सवाद का अत निर्णय बिंदु पर पहुँच कर हो जा है और कवि की वाणी अकेली रह जाती है। कवि वाणी पत्न ताप और युग प्रवृत्ति का कथन करती हुई अध्यात्म घोषणा कर देती है और ग्रंथ की समाप्ति हो जाती है। संक्षे मे कहा जा सकता है कि दपतिवाक्यविलास एक सवादात्मक ज्ञानकाव्य है।

४ प्रतियां

४ १ खोज

दपतिवाक्यविलास की एक प्रति हमे रग जी मन्दिर (वृन्दावन) म मिली। उसका विवरण, 'भारती

दंपतिवाक्यविलास की, पोथी सत्र सुख राम।
लिपि वृन्दावन मध्य म श्री वृन्दावन दास॥

इन सूचनाओं स य निष्कर्ष निकाले जा सकते है : तीनो प्रतियो म आरम्भ करने की तिथि एक ही है - सवत् १८८५, तीनो ही प्रतियाँ वृन्दावन म लिखी गई। दो प्रतियो का लेखन स्वय कवि ने किया और मुद्रित प्रति किन्ही वृन्दावनदास जी ने लिखी। तीनो प्रतियो के अन्त म जो अन्त का सवत दिया गया है उसम अन्तर मिलता है -

वृन्दावनवाली प्रति	अत सवत १९०० वि
हैदराबादवाली प्रति	„ १८९० वि
मुद्रित प्रति	„ १९१४ वि

इस प्रकार १८८५ से लेकर १९१४ तक इस ग्रथ का लेखन हुआ। हैदराबादवाली प्रति आरम्भ होने से पाच वर्ष पीछे समाप्त हुई और वृन्दावनवाली प्रति दस वर्ष पश्चात। ग्रथ विकास की दृष्टि से हैदराबादवाली प्रति छोटी है इसम पाच वर्षो की साधना का ही फल है। वृन्दावनवाली प्रति इन सब मे बडी है। आकार का यह विस्तार कवि की १५ वर्षो की साधना का फल है। इसम ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने समय-समय पर इस ग्रथ के मूल रूपो मे छेद जोडे है। इससे आकार का विकास होता गया। इस समय उपलब्ध प्रतियो मे सबसे अधिक पूर्ण आकार वृन्दावनवाली प्रति का है। यही ग्रथ विकास की अन्तिम कडी है।

ग्रथ के अध्यायो का विलास के नाम से अभिहित किया गया है। हैदराबादवाली प्रति मे केवल आठ विलास है। मुद्रित प्रति मे २१ है और वृन्दावन वाली प्रति म सत्ताईस है। हैदराबाद

५ २ भाषा– लखक की मातृभाषा ही व्रजभाषा है। पर उसने परिनिष्ठित साहित्यिक व्रजभाषा का प्रयोग ही सामान्यत किया ह। कुछ स्थानीय या आचलिक विशेषताओ को भी लेखक छोड नही पाया है। साथ ही कुछ राजस्थानी और पूर्वी रूप भी मिलते हैं।

५ २ १ ध्वनि सबधी विशेषताएँ–

५ २ ११ (ण)– व्रजी म ण, न की प्रवृत्ति प्रमुख ह। राजस्थानी म इसक विपरीत न ण की प्रवृत्ति मिलता ह। लखक न दोनो प्रवृत्तियो का परिचय दिया है णारि–नारि म राजस्थानी प्रभाव स्पष्ट ह।

५ २ १२ घोषीकरण–यह प्रवृत्ति व्रजी के ध्वन्यात्मक मृदुलीकरण का ही एक भाग कही जा सकती ह अघोष ध्वनियो की अपेक्षा सघोष ध्वनिया मृदुतर होती ह परगट–(प्रकट) परगास–(प्रकाश) गातिग–(कार्तिक) जसे उदाहरणो म यह प्रवृत्ति स्पष्टत परिलक्षित ह।

५ २ १३ अल्प प्राणीकरण–यह भी मृदुलीकरण की प्रक्रिया का ही एक भाग ह। स्फुट रूप से यह प्रवृत्ति भी मिलती ह। उदाहरण क लिए निपद–(निषध) कबी–(कभी) जस शब्दो को लिया जा सकता ह।

५ २ १४ स्वरागम–इस प्रक्रिया स भाषा की स्वर बहुलता म वृद्धि होती ह। दूसरी ओर सयुक्त व्यजनो की सख्या घटती है। परिणामत भाषा अधिक काव्योपयोगी हो जाती ह। यह प्रवृत्ति व्रजभाषा म बढती ही रही। उदाहरण के लिए इन शब्दो को लिया जा सकता ह – परगास–(प्रकाश), परगट–(प्रकट) परवीन–(प्रवीण), मरम–(मर्म), जिनिरि–(जिन) बरन–(वर्ण) प्रापति–(प्राप्ति), सवाद–(स्वाद)

वाली प्रति ग्रथ की आदि स्थिति की सूचना देती है। वृन्दावन वाली प्रति अन्तिम कडी है। मुद्रित प्रति की स्थिति या तो बीच की है अथवा वृन्दावनवाली प्रति से नष्ट सकलित है। सकलन मे कुछ अध्यायो को छोड दिया है। तीसरी सभावना यह भी है कि मुद्रित प्रति का आधार कोई अधूरी प्रति हो सकती है। उसके अन्त मे सपूर्ण समाप्त शब्द भी नहीं है। केवल यह लिखा है – "इति श्री दपतिवाक्यविलास नाम काव्ये प्रवीणराय आत्मज गुपाल कविराय विरचिते ग्रथफल स्तुति वणन नाम एकोनिंगो विलास ।' निष्कर्ष रूप मे इतना ही कहा जा सकता है कि वृदावन के रगजी के मदिर से प्राप्त प्रति प्राप्त प्रतियो मे सबसे बडी है तथा स्वय कवि द्वारा लिखी गई है, अत प्रामाणिक है। उसी को मूलाधार मानकर इस ग्रथ का पाठ सपादन करने की चेष्टा की गई है। यदि अन्य प्रतियो मे छन्द आदि की शुद्धता की दृष्टि से अनुकूल पाठ मिला है, तो उसे ही दिया गया है और पाठान्तर पद टिप्पणी के रूप मे दिया गया है।

भाषा और लिपि सबधी विशेषताएँ –

१ लिपिकार सदैव हैं (ष) को ख मान कर चला है। प वा ध्वन्यात्मक मूल्य कहीं भी मूर्धन्य (ष) जैसा नहीं है। लिपि की दूसरी विशेषता (अ) पर विविध मात्राये लगा कर विभिन्न स्वर ध्वनियाँ का प्रकट करने की है – अ ए आदि। यह प्रवृत्ति सार्वत्रिक तो नहीं है पर एक सीमा तक मिलती अवश्य है। लिपिक (ब) और (व) के अन्तर के प्रति सचेत है। सामान्यत (व) लिपि चिह्न (ब) की ध्वनि का ही प्रकट करता है। अन्त स्थ व रूप मे उसने व के नीचे एक बिन्दी लगाई है व–व व–व।

इसके अतिरिक्त लिपि की अन्य विशेषताएँ नहीं मिलती।

५ २ भाषा– लेखक की मातृभाषा ही ब्रजभाषा है। पर उसने परिनिष्ठित साहित्यिक ब्रजभाषा का प्रयोग ही सामान्यत किया है। कुछ स्थानीय या आचलिक विशेषताओं को भी लेखक छोड नही पाया है। साथ ही कुछ राजस्थानी और पूर्वी रूप भी मिलते ह।

५ २ १ ध्वनि सबधी विशेषताएँ–

५ २ ११ (ण)– ब्रजी मे ण, न की प्रवृत्ति प्रमुख ह। राजस्थानी म इसके विपरीत न ण की प्रवृत्ति मिलती ह। लेखक ने दोनो प्रवृत्तियो का परिचय दिया ह णारि–नारि म राजस्थानी प्रभाव स्पष्ट ह।

५ २ १२ घोषीकरण–यह प्रवृत्ति ब्रजी के ध्वन्यात्मक मदुलीकरण का ही एक भाग कही जा सकती ह अर्थात ध्वनियो की अपेक्षा सघोष ध्वनियो मदुतर होना है परगट–(प्रकट) परगास–(प्रकाश) गातिग–(कार्तिक) जैसे उदाहरणो म यह प्रवृत्ति स्पष्टत परिलक्षित है।

५ २ १३ अल्प प्राणीकरण–यह भी मदुलीकरण की प्रक्रिया का ही एक भाग ह। स्फुट रूप से यह प्रवृत्ति भी मिलती ह। उदाहरण के लिए निषद–(निषध) कबा–(कभी) जैसे शब्दो को लिया जा सकता है।

५ २ १४ स्वरागम–इस प्रक्रिया म भाषा की स्वर बहुलता म वृद्धि होती है। दूसरी ओर सयुक्त व्यजनो की सख्या घटती ह। परिणामत भाषा अधिक काव्योपयोगी हो जाती ह। यह प्रवृत्ति ब्रजभाषा म बढती ही रही। उदाहरण के लिए इन शब्दो को लिया जा सकता ह – परगास–(प्रकाश), परगट–(प्रकट) परवीन–(प्रवीण), मरम–(मम), जितिरि–(जित्र), बरन–(वण) प्रापति–(प्राप्ति), सवाद–(स्वाद)

५ २ १६ व्यगत

इम प्रवत्ति के कारण भी ऱ्यान-ददुर भाषा की क्राग्नता न वमी जाती है। यह प्रवत्ति मध्यकाल न आर भाषा।। दं गया प्रमुग प्रवत्ति थी। इस प्रवत्ति के द्योतक उदाहरण सातिमादप लिलाम ' म भी प्रचुर ह। जोइमी (ज्योतिषी)

५ २ १७ अन्य प्रवत्तिया

व्रजी की मग्य प्रवृत्ति ल—र का है। किन्तु कुछ शब्द र न की प्रवत्ति के द्योतक भी ह सैर-सल। स्वर व हस्वीकरण का प्रवत्ति के परिचायक शब्द भी हैं निसाष (नराग)। द्वित्वी करण मध्यकालीन भाषा शली म बहुत प्रचलित था। पीछे यह प्रवृत्ति ओजपूर्ण शली का आवश्यक अग बन गई। कही यह मध्यकालीन प्रवत्ति के रूप मे, कही शैली का अग होकर और कही छद पूर्ति की आवश्यकता के रूप म द्वित्वीकरण मिलता है।

५ २ २ शब्दावली

व्रजभाषा के साहित्यिक रूप म प्रचलित रूढ शब्दावली के प्रयाग की ओर तो कवि झुका हुआ ह ही आचलिक शब्दावली के प्रयोग के द्वारा भी उसने भाषा मे सजीवता लाने का प्रयत्न किया है। कुछ शब्द इस प्रकार के हैं दरन—राउ (सचक) उकर (प्रतिष्ठा, समद्धि), मतीर (मतीरा), गरा (खप्पर),

गाम (पाणनाकिा), औटी (गहरा), लाली (चिता), ज्यान (नुकमान), जुगादी (बडा), आदि। भाषा को सजीव बनाने मे ध्वन्यात्मक शब्दावली का योगदान भी कम नही है रल–फैल (अधिकता), झलाबार (शराबार) दहाड़, भिगारत, घनघोरत, रहसि-बहसि आदि इसी प्रकार के शब्द ह। अरबी–फारसी के शब्द भी कम नही है ताकना, ग्वारुना, जरकसी, पसमीना जवीना, तरफ, दरफ, हरफ, ग्याप, तमासा, गरक, शुका, दिाक (दिक) आदि शब्द उदाहरण के रूप म लिए जा सकते ह। अधिक शब्द शासकीय नौकरिया के नामो म आए ह मीरमुंशी, मुसिफ, आदि। माल (Revenue) आदि से सबधित शब्दावली भी कम नही है।

६ शैली

कवि ने पुस्तक की व्यवस्था बौद्धिक आधार पर की है। भाव-सौन्दर्य की स्थितिया प्राय नही आई है। करुणाष्टक म अवश्य ही करुणा का सौदय प्रकट हुआ है। अन्त मे कवि ने शात रस म काव्यधारा को समाविष्ट कर दिया है। शृगार की झलकिया मास-वर्णन जैसे प्रसगो म छुटपुट रूप मे आई है। प्राय कवि को भाव सौदय प्रकट करने के अवसर नही मिले है। मदम की बौद्धिकता म कवि अवगत भी ह और कवित्व के प्रति सावधान भी।

कवित्व की धारा परम्परागत सौदर्य का स्पर्श करती हुई प्राय प्रवाहित हुई है। कवि ने पाय अर्थालकार योजना म रुचि नही दिखलाई है। उसे प्रायशन सौदरय प्रिय है। ध्वन्यात्मक योजना के सौन्दय मे ही कवि को सतोष लाभ करना पडा है। प्राय योजना के कुछ उदाहरण नीचे दिए जाते है।

१ एक सन रहत प्रेम, परम रगरग भरी चहुधा। (११९)

२ तरणि, तरुण, तन तान मा तपन त

तूलस तमोल सवही के मन भाए ह। (३।२०)

इसी प्रकार मे वहुत से उदाहरण खोजे जा सक्ते ह। यमक भी कवि को प्रिय है। यमक की कुछ पक्तिया इस प्रकार ह —

धन धन ही ते धनिधनि धन ही ते प्यारी
धन धन ही तें, सब धन धन ही ते ह।

एक और उदाहरण इस प्रकार ह। —

दक्षण मुनि पिय कान द दक्पन, दक्पन जात।
लक्पन, लच्छिन लपि लाधि, लक्पन ही लगि जात (२।१२)

सक्षेप म कहा जा सकता है कि कवि को शब्दालकार योजना मे विशष रुचि ह। ध्वनि और शब्द की आवति के द्वारा वह शलीगत चमत्कार की सप्टि करता ह। आवत्ति-गत सौदय इस चरण मे देखा जा सकता ह।

साधिके समाधि साध साधना न साधि याहि,
माधि के अमाध्र कैमे प्रभु को अराधि ह। (१।२७)

अनेक कविता मे सिहावलोकन का चमत्कार भी मिलता ह। ध्वनिमूलक चमत्कार के अतिरिक्त पुस्तक की बौद्धिक योजना म रुचि का और कोई माग नही मिला है। अन्य ग्रथो म उसकी भाव याजना भी मार्मिक ह। यदि शली म कही आचलिकता मिलती ह ता स्थानीय मुहाविरा आर लोकोक्तियो क प्रयोग म ही मिलता ह। वमे कवि म रूढ रीतिकालीन शली का ही आधिक्य ह, पर विषय की विविधता और विचित्रता के कारण रूढ शैली के बीच कुछ शलीगत प्रयोग भी दृष्टिगत होत ह।

चन्द्रमान रावत
राम कुमार खण्डेलवाल

प्रथम विलास

भूमिका*

श्री गणेसायनम

अथ गुपालराय कृति दपति वाक्यविलास गृथ लिष्यते ॥

मगलाचरण

कवित्त

सामल वरण[1] अरुनाई अधरण[2] माथ
चन्द्रका धरण[3] कलकुडल करण[4] म ।
फलि रही तरुण[5] किरनि[6] की सी आभा ओप
आभरन वीच गरें मोती की लरन में ।
वरन वरन अतरन तर अवरन[7]
राजत 'गुपालकवि' दरन दरन में ।
विघन हरण सुष सपति करन एस
राधिकारमन के चरन की सरनि में ॥१॥

दोहा

गणपति गिरिजापति गिरापति देववुद्धि विसाल ।
दपतिवाक्यविलास को वरनत सुकविगुपाल ॥२॥
वुधि विवेक गुण हीन हों कविताको नहिंवोध ।
गुण दूपन भूपन जिते लीजो[8] 'तुम कवि साधि ॥३॥

---

* हस्तलिखित प्रति (वृ०) म 'धूनिका' शब्द है ।
१ वरन । २ अधरन । ३ धरन । ४ करन । ५ तरुन ।
६ किरिनि । ७ अवर । ८ लीजहु ।

कवि-वंश

कवित्त

परम प्रतापी कवि भए जुगराजराय,
जाके[1] मुरलीधर प्रगट नाम पायो है।
जाके[2] घनस्याम सुत वृंदावन बसे आनि[3]
हरि परतीति जस जगम बढ़ायो है।
जानि प्रवीन नृप विमल आ रसराज
एकादसा यातन[4] महातम को गायो है।
जाको[5] सुत प्रगट गुपाल कविराय तिनि
दपतिहि यावय के विलास को बनायो है ॥४॥

दोहा

परगराय परवीनसुत कविगुपाल यह नाम।
मध्य मनीपारे बसें श्रीवृंदावन धाम ॥५॥[6]

---

१ ताके। २ ताके। ३ बासकानो। ४ गातिग। ५ ताको।
६ ता गुपाल कवि का सदा बदावन म वास।
मध्य मनीपार रह ब्रजरायन को दास॥

कवि वंश वृक्ष:

जुगराजराय – मुरलीधर – घनस्याम – प्रवीणराय – गुपालराय

सम्भवत परगराय, प्रवीणराय का विरद हो। कवि न अपना निवास-स्था वृंदावन लिखा है। वृंदावन म मनीपारे मुहल्ले मे इस कवि के वशज रहते थे पर आज उस मुहल्ले म कोई 'राय' का घर नहा है। पूछन पर कुछ वयोवृद्धा बतलाया कि यहाँ पहले राय' लोगो के घर थ। पर आज वहाँ कोई राय नहा है कवि न मनीपारे का गव पूवक उल्लेख किया है। स्वय गुपाल कवि न लिखा कि मनीपारे म मिश्र लोगो का निवास है पर दो चार घर राय लोगो के भी हैं यह मुहल्ला ब्राह्मणो का मुहल्ला ही है।

मातृभूमि-वृंदावन

कवित्त

चाहे लोकपाल भूअपाल यो गुपालकवि
हाल ही निहाल होत जाकी रजधानी म ।
स्यामास्याम धाम सब पूरनकरन काम
लेत जाको नाम पाप पिरत ज्यौं घानी म ।
कहा लग बरनबनाइ कै सुनाव कोऊ
जाते जस गाइवे की सकति न वानी म ।
तीनि लोक जानी जहा वह पटरानी ऐसी
वदावनजू की हम रहै रजरानी म ॥६॥*

मनीपारौ

परम सुथान भूमि निकट विहारीजूके
इन राधा मोहन[1] के घरे को मिलाउसो ।
जामें मिश्र परम उदार करें वास पुनि
जोइसी[2] जवर थोकदारन मराउसौं ।
भनत गुपाल तामे चारिक हमारे घर
भूमिया वनिकद्वक परन पराउ सौं ।
एक त[3] अधिक एक थोक मवही ह, परि
मनीपारो विप्रनसो जटित जराउसो ॥७॥

---

* इस कवित्त म कविने वृन्दावन की महिमा का गायन भक्ति और श्रद्धा
रा म किया है। कवि चतन्यसम्प्रदाय से सम्बन्ध रखता है। इसलिए
[illegible] की निकुञ्जलीलाभूमि का दिव्य रूप कवि की वाणी म मुखरित हो
।

[1] मोहन। [2] जोइसा। [3] एक ते।

ग्रंथ हेत

जग दुष पान जानउ जे विराग ग्यान
आमेंगुण घणे गुणमाननि रिझवेके ।
कर जोई काम तामें दगा नहि पाई हानि
टोटो नहि आवै, आमें हुन्नर कमवे के ।
सवही को ज्ञान धनमाननको राजीकर्ने
धरन नरन गुणमानन रिझवेके ॥
कुजस गमैवे के औसुजस वढेवे वे
सुवेते हेत दपतिविलास के वनैवेके ॥९॥★

ग्रंथ प्रियोजन

कविता[1] कृति दुपसुष[2] के कवित वनाअेदोइ ।
कवि प्रवीन पितुको जवहि जाइ सुनाअे सोइ[3] ॥१०॥
है प्रसंनि[4] ताही घरी आज्ञा मोको दीन ।
दपति वाक्यविलास सुत कीजे गृथनवीन ॥११॥
जिनकी[5] आज्ञा[6] पायमे कीनौं, ग्रथप्रकास ।
कहत सुनत याके सदा होइ वृद्धि परगास ॥१२॥
जिनि वातनते जगतमे काम परत नितआइ ।
तिनके गुण दूपन सकल कह गुपाल कविराइ ॥१३॥[7]
पिय प्यारी मिलि परमपर, कहि गुणदोप प्रकास ।
यातेनाम धरयौ सुकवि दपति वाक्य विलास ॥१४॥

★ यह है० प्रति मे नही है ।

१ लेपक । २ सुप्य । ३ कवि प्रवीन कौं जाय कें तबह सुनाये सं
४ प्रसन्न । ५ तिनकी । ६ अना ।
७ तिनि रुजिगारन करि जगत कुरम करत प्रतिपाल ।
तिनि रुजिगारन कौं जब बरनत सुकवि गपाल ॥
यह दोहा मुद्रित प्रति में भी है ।

,संमत

ठारह से पिच्यासिया पून्यो अगहनमास ।
दपति वाक्य विलास को तव कीनो परकास[1] ॥१५॥

ग्रंथ सूची

कवित्त

मन दुप सुप घर बाहर प्रदेस देस
अमल अनेक पेल सूची परकासके ।

सास्त्रअुपसास्त्र वर्नाश्रमसोध मदराज
सहर प्रवध अगरेजन के पास के ।

वनिज, रकानि सव जातिमे विधान अघ
मावमजिहान गुण प्रकृति' तिहासके ।

सुकृत प्रकास ज्ञान भवित फल तासमे
गुपालजू विलास कहे दपतिविलासके ॥१६॥*

सवैया

देपि नइरचना वचनानि की सो सुनिके सवन लिपवायो ।
पंडित राज समाजनि में कविराजन के मनमें अति भायो ।
दपति वादहि[2] को मिसुकें सव वातनको[3] सुपदु प्प[4] दिपायों ।
'रायगुपाल विराग वढामन दपतिवाक्य विलास वनायो'[5] ॥१७॥
नारि निपेद कियो रुजिगार को प्रीतम जो करनो ठहरायो ।
प्यारहिप्यारमें प्यारी प्रवीननें चातुरी त पियको विरमायो ।
रतिदिनां[6] बिछुरे[7]नहि नेकहू भोगविलास करे[8] मनभायो ।
रायगुपालको पाम ही रपिकें कीयो नलोअपनो मन भायो ॥१८॥

---

१ परगास । २ वादहो । ३ रजगारनको । ४ दुप्य । ५ रायप्रवीन के मद गुपाल ने दपति वाक्य विलास वनायो । ६ रेनिदिन । ७ बिछुरे । ८ करें ।
* यह कवित्त ह० प्रति मे नही है पर मुद्रित प्रति मे है ।

अेकसमें रहस वहसें वरसें रसरग भरी[१] चहु घात ।
सुदरि वैठी सुगधित मेजपें सोभासिगानकी[२] सरसात ।
प्रीतम आइके वैठे तहा गऊवाही दियदिपैअगप्रभात ।
अैसे समे रुजिगारनकी[३] कही वालसो लालगुपाल ने वात ॥१९॥

जग विवस्था पुरसवाच ईस्त्रीप्रति

कवित्त

कुटम के पालिवे को वोल नूठमाच दिन
रॅनि यह प्यारी बूढे वैलली वह्यो कर[४] ।
जिकिरि फिकिरि वीच व्याकुल रहनऊ
घरको मरम नहि[५] काहूसौं कह्यो कर[६] ।
सुकविगुपाल धन पाएही निहाल होत
विन रुजिगार[७] देहदुपसो दलो[८] कर[९] ।
वस्ती वीच प्रभुही करत परवस्ती यह
हस्ती कोसो परच गृहस्तीके रह्यो करे[१०] ॥२०॥

दोहा

याते कोऊ रुजिगारको कीजे कछूउपाइ ।
धन कमायकें लाइय जात[११] सव दुप जाइ ॥२१॥

इस्त्रीवाच[१२]

जग हिताथ काज मलो प्रश्न करयौ तें अंन ।
ज्यौं मननें वुधि तियाते प्रम्नकरयो सुप दनि ॥२२॥*

---

१ झरी। २ मिगारत। ३ वहा। ५ नही (४) (६) (९) (१०) करें। ७ रुजगाल। ८ न्हूरो। ११ तान। १२ इस्त्रावाच पुरुष पति।

*दै० प्रति में नहा है।

सो मन, बुधि सवाद अब वरनि सुनाऊ तोहि ।
जाके कहत' रसुनत में द्रढ विराग उर होहि ॥२३॥*
दपति के सवाद मिस जग दुषसुषकी बात
सोगुपाल तोसों अब करत सबै विष्यात ॥२४॥*

धन सुष-दुष वर्णन

कवित्त[१]

रीतें सबहीतें नित गाम गुनी गीतें दिन
आनदमे बीतें काज[२] होइ[३] चित चीतें हू।
रापें वडी सीतें डरें काहूकी न भीत होते
अुपजें गुपालकवि नित नई नीतें हैं।
अरिकें अरीतें जे अनीतहू अजीत ते करीत
पालिकीते जें वलीतेजग[४] जीते हैं।
धन धनहीत, धनि धनि धनहीते प्यारी
धन धनहीतें सब धनध नही तेंहैं ॥२५॥

इस्त्रीवाच

काया कू डर नाहिना मायाकूं डर होत।
याते याके दुष सुनो जो जग होत अुदोत ॥२६॥

कवित्त

काम क्रोध लोभ माह डार वाधि वाधि नित
जारतमे जाके[५] अपराधनते दाधिहै ।

---

१ इससे पूव है० प्रति में यह दोहा है
"धन पायें सुप हो जा हमसों कहा गुपाल।
ताके सबें उपाय कौं तुमें भजि हें हाल ॥'
२ काम। ३ होत। ४ जग। ५ ज्याके।
* ये दोहे है० प्रति मे नही हैं।

आधि रहै मनमे, नराधिपति वाधिवेक
पोदिके[1] अगाध घरघरें होति व्याधि ह।
साधिके समाधि साध साधना न साधि याहि
साधिकै असाध कैसे प्रभु को अराधिहै
सुकविगुपाल क्यों कहावत धनादिपति[2]
नित धनमाझ अेती रहति अुपाधि ह ॥२७॥

पुनि

निधन गरीबनकी बूझतु न कोअु वात
जातिपाति नातहू के होत हित हाते ह।
हौतौ देपि घरमें पुसामदि करत सव
जिकिरि वसाइ आइ निकट बसाते ह।
उकर वढावै धन ही में धनआवै सदा
या के घर आअेहीते वने सव वाते हैं।
मिलि चहुघाते करैं कारज सुहाते याते
सुकवि गुपाल सव दौलतिके नाते ह ॥२८॥*

इस्त्रीवाच

सवैया

पाल्ह जो तिहु लोकनकौ छिन अेकहि माझ करे सुनिहाल है।
हालहि होत कृपाल दयाल कृपा करि जाकौ जगावतु भाल है।
भाल्है सूरजकासो सदा वहु वातनकौकरै बुद्धि विसाल है।
सालहै सो तिहु लोक्नकौ सोई लाजकौ रापनहार गुपाल ह ॥२९॥*

दोहा

सपतिकी पति रापिहू श्रीपति पति पति आप।
मिलिक दपति म'टय रतिपति कौसताप ॥३०॥

---

१ पदिकैं, २ पिय।

* यह है० प्रति मे नहीं हैं।

तन ते उद्यम होतु है उदयम ते धन होत।
धन ते सुष जस पाइयै याते[1] नाम उदोत ॥३१॥

याते उद्यम करत में कबहु रोकियै नाहि।
धन की प्रापति पाइयै प्यारो याके माहि ॥३२॥

बिना गये पर देस के धन प्रापति नहिं[2] होइ।
धन प्रापति बिन जगत में क्यौ सुख पावै कोइ ॥३३॥

इस्त्रीवाच

कवि गुपाल हमसौं अबै कहो सुष्प परदेस।
जब[3] जयो परदेस को धन कमान सुविसेस[4] ॥३४॥

इति श्री दंपति-वाक्य विलास नाम काव्ये प्रवीनराय आत्मज गुपाल‡

---

१ हैं० ताते २ ह० क्यौं ३ हैं० तब ४ हैं० कमान के हेत।
‡ हैं० प्रति में नहीं है।

द्वितीय विलास

प्रदेस सुष

पुरुसउवाच

दोहा

देस छोडि परदेस में इतनें सुष सरसात ।
प्यारी सो सुनि लीजियें तिनकी मो सौं बात ॥१॥†

कवित्त

देसन की सैल धनहू की रेलफल आव
चातुरी की गल मन लगत कमेवे में ।
दारिद की हानि धान[1] मानन पे मान गुण[2]
मानन[3] सौं जानि होति पहचानि छवे म ॥
फिकिरि[4] न एक गुन आवत अनेक यौं
गुण लजू विसेष[5] वस्तु आवति मुलेवे में ॥
पवे अरु दवे जस लवेवौं सवाद प्यारी ।
एते सुष होत परदेसन के जवे में ॥२॥

---

† है० में नहीं है ।

१ है० धन, २ है० गुन, ३ है० मानन, ४ फिरि, ५ है० विवेक ।

प्रदेस दुख

दोहा

देस रहैं सुख नाहिं बिना गय परदेस कै।
कहतु कहा करि पाइ उद्यम कृत कीए बिना ॥३॥

इस्त्रीवाच

कवित्त

ठौर ठौर वास मन रहत उदास चास
बासकौं प्रवीन[1] पिय परघर जाइबो[2]।

अपनी खबरि पहुचाइबो कठिन पुनि
घरकी पबरि बडे जतनन पाइबो ॥

समर्थ न बानी लगै देसन कौं पानी ठगु
चोरत नहानी मिल समै पै न पाइबो[3]।

हाय बिसलाइ मरि जाइबो सहज परि
जाइक कठिन[4] परदेसकौ कमाइबो ॥४॥

है० प्रति में इसके स्थान पर यह सोरठा है।

"जेते कहे न जात तेते दुख परदेस के।
निस दिन साँझ रु प्रात घरकी लौं लागी रहै।

प्रसंग से अनुमान होता है कि यह सोरठा स्त्री द्वारा कहा गया होगा।

१ गुपाल [हो सकता है कि कवि ने अपने पिता 'प्रवीन' के रचित छंद ग्रंथ में समाविष्ट किए हों। इस छंद में आया 'प्रवीन' नाम इस बात की ओर संकेत करता है। है० में इसके स्थान पर 'गुपाल' कर दिया गया है।]

२ जायबो ३ पायबो ४ कठन

पुरुषवाच

पूरब

दोहा

रूप विसेस बिसेस न भूमि सुहामन देस ।
जाय करं याते अवं पूरब को परदेस ॥५॥†

कवित्त

ताफना रुवाफता मुस्सज्जर श्रीमाफ
मपमल रुमु केसी पट नाना सुपदाइयें ।
सरस कृपान तरकस रुकमान बाण
जरकसी चीरा हीरा जहाँ जाइ लाइयें ।
सुकवि गुपाल फुलवारी धाम धाम अव
श्रीफल कदलि पौंडा पानन को पाइयें ।
बडे बडे केस होइ नदुल असेस प्यारी
पूरबके देसमे विसस सुप पाइयें ॥६॥†

दोहा

जीवन जीवन हरहि जग प्रान हरं जग प्राण ।
पूरबमे जमदूतिका सबको देति पिरान ॥७॥†

इस्त्रीवाच

सोरठा

लगें चोर ठग वाय पेट चलें पानी लगें
कोज कबहु न जाइ पूरब परेस को ॥८॥†

---

† ह्रि० में नहीं है ।

कवित्त

पांनीं लगि जात बहु फूलि जात गात पुनि
पेट घालि जात कछु पाय जात कबहूँ ॥
आदू करि करि कै समोग सुपकाज पमु
पछी करि रापें नारि नरन वौं अबहूँ ॥
ब्राह्मन बनिक मीन मास मधु पात तेल
हरद लगाइ न्हात नारी नर सबहूँ ॥
फांसी दकं हाल मारि डारै ठग जाल याते
जयं न गुपाल दिसि पूरबकी कबहू ॥९॥†

दक्षनदिसा

पुरुषवाच

दोहा

दयामान धनमान पुनि लोग बडे गुनमान।
याते पछिम देसकी कीज सदा पयान ॥१०॥†

कवित्त

चीरा चीर सालू सेला समला बहाल दार
जरकसी काम जाम होत नाना भाति हैं ॥
सुकविगुपाल लाल रतन प्रवाल मनि
मानिक विसाल मोती महगी सुजाति है ॥
मेवा औ मिठाई फल फूल मूल धूल गूज
तरुनी अनूपरूप झलकत गात है ॥
देपे बने बात सब सोभा सरसात प्यारी
दक्षन दिसा के सुप कहे नहिं जात हैं ॥११॥ †

---

†दि० में नहीं है

सुकवि गुपाल ताते तरल तुरग मिलै
मधुर मतीर भूप लगति जहाँ कहूँ ॥
पार नहि लहू हिय सोचत ही हूँ प्यारी
पछिम दिसा के नृप बरनि कहा कहूँ ॥१५॥†

इस्तीवाच

दोहा

मरत रयनि दिन वारि बिन भटकि भटकि नर नारि।
करियै नही पयान पिय पछिम ओर निहारि ॥१६॥

कवित्त

धूरिन के थल आवैं ढोलकै ढमकै जल
तरु बिन थल तामें साभा नाहि पामे हैं॥
चामर र गहू रस गोरस ना फलफूल
मोठ बाजरी कों पाय दिवस बितामें हैं॥
रहत मलीन धम कम हरि हीन सदा
पहरत पीन पट ऊनन के जामे है॥
सुकवि गुपाल जते कहत न आमे सदा
तते दुप होत जात पछिम दिसा मे है॥१७॥†

उत्तरपड

पुरुपवाच

हरदवार हैकै परसि बद्रीनाथ किदार।
होत कृतारत जीव यह उत्तरपड मधार ॥१८॥†

---

†हि० में नहीं है।

कवित्त

लाइची ल्वग दाप दाडिम बदाम सेव
सालिम अँगूर पिस्ता पय उठि भार कौं।
यस्तूरीर पेसरि जविन्नि जाइफल दाल
चीनी दयदारकी सुगधि चहु ओर कौं।
साल औ दुसाला दुसा नाना पसमीना ओढ़ि
देपत रहत आछी तियन की मोर कौं।
सुकवि गुपाल प्यारी सुनिय निहोर मोपै
कह्यो नहि जात सुप उत्तरको ओर कौं ॥१९॥‡

इस्तीवाच

सदा सीत भयभीत नर ग्राघ्र सिंघ ग्रप घोर
करिये नही पयान पिय उत्तर दिस की ओर ॥२०॥‡

कवित्त

विकट पहार झार घने सिंघ स्यार निरवाह
नहि होत रथ बहल की जामें ह।
गिलटीरु गिल्लर अनेक रोग होत जहाँ
चारिहु वरन जीवहिंसक हरामे हैं।
सुकवि गुपाल सदा सीत भयभीत नर
बरफ के मारे दुरे रहत गुफा में है।
राह मे नगामें छोके उतरत तामे जात
बहु दुष पामे लोग उत्तर दिसाम है ॥२१॥‡

इतिश्री दपति-वावय विलास नाम काव्य प्रदेससुखदुख बनन नाम द्वितीयविलास।

---

‡है० में नही है

तृतीय विलास

मास प्रबध "चैत्रमास"

पुरुसवाच

दोहा

चत प्रवासहि कौं भलो सस महिनन मैं होइ।
सीत गरम जामें न बहु दुप व्यापत नहि कोइ ॥१॥‡

कवित्त

होत पतिभार झार फूलै फुलवारि कोप
उलहत डारनपै भ्रमर भूमायँ हैं।
बोलत बिहग सर सरिता उमग अग
अग जे अनग की तरग करि छाए हैं।
सुकवि गुपाल जामै सीत न गरम सम
रजनी दिवस मानो तोलि कैं बनाए हैं।
सुप सरसाअे होत दपति के भाअे बडे
भागिन ते आए दिन चत के सुहाए हैं॥२॥‡

इस्तीवाच

कवित्त

सीतल समीर उर तीर सी करेगी पीर
लहरि उठैगी पाँचबानजू के बादिनी।
कोकिला की कूक हूक करेगी करजे सुप
सेज न सुहैहै घनै दूप ह्व है ता दिनी।

---

‡है॰ प्रति म नही हैं।

केसू कचनारिन के फूलेफूले हार बन
बागन में लगेंगे अँगार सम ता दिनी ।
मेरी कही यादि जब आवैगी गुपाल तब
करैगी बिहाल हाल चैतहि की चादिनी ॥३॥‡

वैसाखमास

भमर विदेसी नर गंध होते अंध होत
त्रिविधि पवन दिसविदिसन छाइये ।
सुकवि गुपालजू पराग बरसत अति
अवनि अकासम सुगंधि सरसाइये ।
सरसरितानमें कमरुकुल फूले बहु
अबन में कोकिल सबद सुषदाइय ।
हयाही बिरमाइय अनत नहि जाइयै
विसाष की बहार बडे भागिनसो पाइय ॥४॥‡

कफ कीयो राज वाय पित के अकाज उठै
गरम बढति जाके प्रथमहि पापतें ।
जानकी जनम अषतीज नरसिंघव्रत
वरि सब नरनारी रहे तरु सापतें ।
देषत गुपाल फूल बँगला कुसुम केलि
जल बाग बिपिन बिहार अभिलाषत ।
मानि मेरी भाष प्यार प्रेमरस चाषि आछो
देषो बयसाष बयसाष बयसाषतें ॥५॥‡

वैसाखमास के उत्सव जानकी जन्म अखतीज, नृसिंह व्रत और फूलबंगला आदि विभिन्न प्रकार की लीलाएँ।

‡ हे० प्रति में नहीं है।

जेष्ठ मास

पासें पसपाने तहखाने सुपसाने हौद
अतर गुलाबन के ठाने तहठा रहैं।
छूटत गुपालजू तिवारन फुहारे न्यारे
जहा जलजतुन¹ की परत फुहार हैं।
चदन किवार द्वार द्वारन पे टाटी
दीह चलत बयारि फूलि रही फुलवारि हैं।
फूलन के हार घर सीतल अहार सोये
सेजन समरि लेत जेठकी बहार है ॥६॥‡
पथ थँबि जाति लघु होति अति राति सूर
तपत प्रभात ही से चड कर कीना मैं।
सुकवि गुपाल जे प्रबल जल थल जीव
बिकल कल न पल परत जबीना मे।
मोर अहि मृग सिंघ सोवत अवनि अबु
अनिल अकास ए अनल समचीना मैं।
बल होत हीना अग भीजत पसीना यातें
जाइये कहीना पिय जेठके महीना म ।७॥‡

आसाढ

चक्र देकें चचल प्रचड चलै पौन चारयो
ओर ते घमडि घन गरजे धुका ढके।
सुकवि गुपालजू सन्यासी साध सत द्वज
नारी नर पक्षी पशु बैठे गहि आढ के।
देषि चला बोर नभ ओर जोरसोर कै
पपैया मोर दुर चकोर चितचाढ के।
दामिनि दहाड देषि काम घरी बाढ़ जब
दपति कौं आढ परी आवत असाढ के ॥८।‡

---

१ जल-जत्र जलयत्र=फुहारे
‡ है० प्रति में नहीं हैं।

कीच औ मचक टपका की है ससक पर
तियसी असक लगि जात काम जागे ते।
मदिर चुचात पपरा की लियें हाथ सौंज
सव सहलाति है सरद सब जागे ते।
काटें डस माछर गुपाल तन आठौं जाम
दादुर पपया फोरें डारें कान रागे ते।
मेह झर आगे धरनी ते उठ आग एते
होत दुप आगे ते आसाढ मास लागे ते ॥९॥‡

सामन

सुनि घनघोर कौं झिगारत है मोर देपि
दामिनी की ओर सुप हरित मही के हू।
सुकवि गुपाल द्रुम लपटी ललित लता
केतुकी कदब गध कुद की कली के हैं।
भूपन बनाइ के मलारन को गाइ गाइ
मचक[1] बढाय सग झूलत अली के हू।
प्यारी पिया पीके मनभाए होत जीके स्वाद
सेज प अमी के होत सामन में नीके हू ॥१०॥‡
घनन की घोर पिक मोरन को सोर सुनि
परति न कल सुपसेज पर तजनी।
झीगुर झिगार औ बहार फुलवारिन की
देपत अपार दुप होत हिय हजनी।
सुकवि गुपाल मौन भूपन वसन पान
पान परिधानन सुहानि सैंन सजनी।
प्यारे मनभामन की आमन की ओधि टरें
हग होति वामन की सामन की रजनी ॥११॥‡

---

१ पेंग
‡ है० प्रति में नहा हैं।

भादौं

गाज[1] सुनि बाधत हैं गाज व्रजराज तामें
जनमे गुपाल जदुनाथ कुल जादौं के ।
करि वनजात्रा करवटनी करत लोग
लेन सुप राधा अष्टिमी में दधिकादौं[2] के ।
रहि रिषि पंचिमी सतोहैं[3] न्हाइ देवछटि
वामन दुआदसी अनत पूजि आदौ के ।
साझी कौ मरादौ पित्र पक्ष लगै यादौं याते
पाइयत दिन भूरि भागिन ते भादौं के ॥१२॥‡
झिल्ली झनकार ससा पवन झकोर घर
धार घरघार अंधियार अंधि कादौ में ।
सुकवि गुपाल घनघोरत घमडि घने
जायौ न परत दिनरैनि व दिवा दौ में ।
समरसता वत सरीर कौ सरस सो सुमन
सर साधि साधि व्याप्यौ सत सादौ मैं ।
देषौ दधिकादौ ज म लीयो हरि जादौ पूरौ
काम कौ मरादौ करौ रहि घर भादौ मे ॥११॥‡

क्वाँरमास

निमल त्रम नद नदिन के नीर नीके
सीत न गरम लागें भोजन बहार के ।

---

१ गाज बांधना ब्रज का एक त्यौहार है। गाज कुछ धागा का समूह होता है। उसके बांधने और खोलने दोना के अनुष्ठान प्रचलित हैं।

२ कृष्ण और राधा के जन्मोत्सव पर दधि में हल्दी मिला कर परस्पर छिड़कना इस उत्सव का प्रमुख क्रिया है।

३ बलदेव छट या देव छट बलदेवजी की जन्मतिथि है। ब्रज में देव छट के स्थान य हैं दाऊजी (बल्देव सताहा वरटन बेगमा। कवि न यहाँ सताहू की देव छट का उल्लेख किया है।

‡ है० प्रति म नहीं है।

पूजत पितर नवदुरगा दसरा लोग
सरद सुपद सुप सेज में विहार के ।
फूले कास केतुकी कमोदिनी कमलकुल
साची रास रग के विलासन निहारिकें ।
सुकविगुपाल चदचाँदनी अपार जोति
सब ते सरस ए सुहाए दिन क्वाँर के ॥१४॥‡
आतप अधिक तम बढत अनेक रोग
भोग घरही में सुप रहै तनही कौं ना ।
पितर भ्रमत ओ भियामने[1] लगत दिन
भूषन वसन तन धारियै तिही कौं ना ।
सुकवि गुपाल रितु पानी बदलत अति
रति म लगत मनत मान नहीं कौं ना ।
सुप लै मही कौ चैन दीज हमही कौं मेरी
मानियें कही को जैय क्वाँर में कही कौं ना ॥१५॥‡

कातिक मास

प्रात समें उठि नीकें न्हाति नर नारि राइ
दामोदर[2] पूजति बजाय सुर बीना के ।
कपति चरित्र णारि चित्रनी विचित्र घर
घरन चरित्र चित्र चित्रन के मीना के ।
सुकवि गुपालजू अकास जल थल दीप
दीपति दिपति दान देत दुज दीना के ।
काम के अधीना होत दपनि प्रवेना सुप
देपिय कही ना जसे कातक महींना के ॥१६॥

---

१ भयावन भयानर

२ कार्तिक-स्नान एक पुरानी प्रथा है। स्नानोपरान्त ब्रज म राधा दामोदर की पूजा होती है। यहाँ शब्द यदि आभीर साहित्य की 'राही' की ओर भी सकेत करे तो अनुपयुक्त नही।

‡ ह० प्रति में नहीं है।

राधाकुंड न्हान दीपदान गिरराज वडौ
लहुरी दिवारी जुआ पैल निसि कुहू कौ।
अन्नकूट गोरधन जमद्वतिया[1] सनान
मैयाद्वैज गोकल प्रदक्षना दैउ हूँ कौ।
गउ गोपआठ अर्पनोमी की परिक्रमा
दैलीजै हरिलीलनि कौ सुप छाडि महु कौ।
देवन जगायौ पचभीपम आन्हाइ नहिं
जाइय गुपाल कत कातिग[2] में कहूँ कौ ॥१७॥

अगहन मास

षट रस विजन के भावत ह भोग काम
केलि के अधिक मन लागत सबन कौ।
सर सरितान फूल फूलत सुगध गुरु
कहुक कलित कल हसन के गन कौ।
सुकवि गुपाल हरि अस है प्रसस यही
स्वारथ में देत परमारथ जतन कौ।
सुप होत तन कौ वढत मोद मन कौ
सुमोहै महा मन कौं महीना अगहन कौं ॥१८॥‡
द्वार लग डग पग मग में धरयो न जात
अतन अधीन तन भए दुहू जन के।
छेदत हृदयै पौन गौन मौन भीतरहू
ठाढे होत रोम रच छुऐं जलकन के।
सुकवि गुपाल हरिअसह प्रसस यही
स्वारथ मैं देत परमारथ जनन कौ।
सुप होत तन कौ वढत मोद मन कौ
सुमोहै महा मन कौ महीना अगहन कौ ॥१९॥‡

१ यमद्वितीया पर मथुरा मे वडा भारी स्नान-पर्व प्रतिवर्ष होता है।
२ ख ग कातिग कातिर
‡ है० प्रति में नहीं है।

पूसमास

तरुणि तरुण तन ताप सौं तपन तेल
तूलद तमोल सबही पे मन भाए है।
जल थल अबर अवनि घर बाहर हू
असन बसन सब सीतलता छाए है।
सुकवि गुपाल रजनी में घडे अग होत
दिवस में कहूँ दिन जात न जनाए है।
सुष सरसाए रसरग बरसाए बडे
भागिन ते आए दिन पूस के सुहाए है ॥२०॥‡

कटति न राति नही दिन जा यों जात सोंज
सीरी न सुहाति बात जाति सु कही ना में।
ठिरि फटि जात गात बारे परि जात न्हात
बाजै दात हाथ चीज रहति गही ना मैं।
चाहियें गुपाल घने असन बसन दीन
पति के उधार दिन दुपद दही ना म।
माम जी रहीना ठड जाति सु सही ना कल
परति महीना कहु पूस के महीना म ॥२१॥‡

माह मास

मृगमद मलय कपूर घूरि धूसरत
फैलत बसत सत दसहू दिसान म।
कोकिला कपोत कीर कोइला कहुक करे
भौरन की भीर भ्रम्यो करति लतान मैं।
तालदै गुपाल गुनी गावत पियाल वीन
सारगी मृदगहि मिलावत है तान में।
व्यापै काम आनि भले लाग पान पान सुप
सबते निदान होत माहके दिसान म ॥२२॥‡

---

‡ है० प्रति मे नही है।

जमति वरफ चार्यो तरफ दरफ सीत
सिरफ दुपहि एक हरफ न चन चाह।
सुकवि गुपाल भौन भीतरहू बैठ चलि
सीतल पवन करै डारतिहै नरगाह।
नेंक हल चल वल गल जात सीत पलै
कलै न परति पग धरयो नहि जात राह।
हियें होत दाह जब जब उठ कामदाह
कोऊ रहै न उमाह उतसाह विन नाह माह ॥२३॥‡

फागुन मास

छाडि कुलकानि मुष माडि छौडि छाडि पट
गहि नर नारि गाठि जोरे पट झोना में।
सुकवि गुपाल जू उडावत गुलाल लाल
डारें रगलाल पट पीतम क सींना म।
पेलत पिलावत औ हँसत हँसावत
दिवावन औ देत गारि रहत न कीना म।
प्रेंम पन पीना होत काम के अधीना सुष
देषिय कहीं ना जैसे फागुन महीना में ॥२४॥‡
लोक लोक लोक लाज काजन बिसारि लोग
गारी दै बकाम बकैं मानत हैं नहिनां।
सुकवि गुपाल परनारिन सौं राचें गाँठि
जोरि सँग नाचै पारे मामरि दे देहिना।
छोटे बडे ऊच नीच एक सम होत बहु
रुपिया सें डोल लाज रहति सुकहिना।
सहिना परति मिष तहिना न देत याते
सबमे निलज यह फागुन को महिना ॥२५॥‡

---

‡ है० प्रति म नहीं है।

घुरेंडी

निलज वकत कोऊ धाहूत सकत नाहि
रोके ते रुकत धूरि उडावत खेंडे की।
सुकवि गुपाल कीच गाटीमे अटत चादि
लट्ठन पिटत राह निकरत छेंडी की।
गदहा पै चढि बढि भडुआ बनत लोग
लहँगा पहरि वात करत छलडी की।
जोरत है लडी काम करत कुपेंडी याते
ऐंडी बेंडी देखी वात फागुन म घुरेंडी की ॥२६॥

"इतिश्री दपतिवाक्यविल सनामकाव्ये वारेमास प्रबध वणन नाम तृतीय विलास"

चतुर्थ विलास

निजदेस प्रबन्ध : बरात सुप

पुरसवाच

सोरठा

जात बरातहि[1] जाइ[2] वर जूयो जयो परदेस ते ।
सुनियें कान[3] लगाइ ताके[4] सुप वरनन करूँ ॥१॥

कवित्त

हिलनि मिलनि को सरस सुप होत नाना
भातिन की रहसि बहसि बतरात मे ।
देदि नई नारिन के ख्याल औ तमासे राग
रगन में गरर रहत दिनराति म ।
सुकवि गुपाल फूलें गात न समात जब
बठि जाति पाति गारी पात भात पात में ।
बन बडी बात जब दवति[5] घरात तब[6]
जीवत को लाहो लोग लेतहे[7] बरात म ॥२॥

इस्तीवाच

दोहा

जितने जात बरात में दुख नितप्रति जहाँ होत ।
कवि गुपाल तितो सुनो हमसो बुदि उदोत ॥३॥

---

† है० पति में नहा है ।
१ है० बरात तो   २ है० जाय,   ३ है० कांन,   ४ है० याके
५‡है० दबत   ६ है० तहा   ७ है० लेत हैं

कवित्त

राह चल धरती में सौगनौ परत पुनि
भोजन मिलत वाइवे कौं आधी राति म ।
दामनि घटपै होन गाठिकौ परच जव
आवत सरम घटि चलन की बात म ।
सबही सौं करत रमूज मसपरी लोग
सायनि विगरि जो प देवत घरात में ।
कहत गुपाल कछु आवत न हाथ सात
दिनकौं सनीचर लगतु हैं बराते म ॥४॥

पुरस वाच

जातिसुष[1]

वह एक ठौर म अनेक ठौर राज वह
जडय चित न्यहाल चगा करै नगा को ।
उहु वहि लोक उच्च पदवी कौं देति इह
देति इहि लोक ही लागत नेंक रगा को ।
सुकवि गुपाल उह पातिकीन तार आप
सम करि डार यह पोलि सब दगा को ।
मन की उमगा करि करौ सतसगा याते
गगा ते सरस ह दरस जाति गगा को ॥५॥
सादी औ बधाई सव याही ते सुहाई लगै
याहीते मिलन भलौ होन गोत नात ते ।
याही ते परत काम जीवत मरत पुनि
यही निसतारौ कर पातक को बात त ।

---

१ यहाँ से "व्याह सुष' तक क प्रसग है० प्रति म नहा हैं ।

और की तनक छिद्र मेरु सो करन्त निज
मेरु ते सरस छिद्र कर तुच्छ गात तैं
जीती नहि जाति तासों कछु न बसाति याते
भूलिकें न पालों कवो पार राम जाति त ॥

इस्ती वाच

हालही सुलपी को कलकी करि देत औ
सुलपी को कलकी कैं मिलावै गोत नात त ।
कबहू गुपाल याती पीवतो न देषि सक
ऐबन उघारि कें दिपावै नीची बात त ।
और को तनक छिद्र मेंरुसो करत निज
मेंरुते सरस छिद्र कर तुच्छ[1] बात त ।
जीती नही जात तासों कछ न बसात याते
भूलिकें न पालो कबी पारे राम जाति त ॥७॥

पुरस वाच

मिजमानी पाइवे के सुष

मिजनानी को जो कबहुँ नहुत दिनन में जाइ ।
तब गुपाल मिजमान को इतन सुष सरसाय ॥८॥

कवित्त

यातन कों मारिके निलाले रोट मारयो करै
आदर अधिक होत हुक्का अरु पानी कौं ।
सुकवि गुपाल देषते ही हरे होत औं
कुसल पैम पूछि मीठी बोल्त हैं बानी कौं ।

---

१ तुच्छ

नेह में घघत अपनायसि राघति मित
भेटत म भारी सुप होत जिदगानी कौं।
करि महरमानी प्रीति बढत पुरानी बडी
होति मिजमानी जउ जात मिजमानी को ॥९॥

इस्त्री वाच

दोहा

आगे पाछे औरक, सेपी मारत जाय।
याते काहू क न मिज मानी पय आइ ॥१०॥

कवित्त

पराई पछीति बैठि बानो परै आपनो
जिमावत में जाको सूजयो रहै मो लुगैया की।
सुकबि गुपाल सदा दबनौ परत घर
आजे बाटवानो पर भोजन बिछया कौ।
देनी परै जाइक मिठाई सहुगाति ओ
हल्दा ह कटाव बदनाम बाप मैया की।
करत चवैया हितू यार जाति भया सदा
एते दुष होत मिजमानी के पवैया कौं ॥११॥

मिजमानी पवाइबे कौ सुख

दोहा

कुल घर होत पवित्र पुनि, जग जस होत विख्यात।
बडी बात जाकी सदा, जाव जमल जानि ॥१२॥

कवित्त

घोरेई करे त दस देसन में नाम होन
ओडो[1] घडे धन लगे श्रुत्रन कमाए ते।

---

१ ओडा = गहरा

मित्त गुपाल बडो पचन में मान ठोर
ठोर होत आदर अधिक आए जाए ते।
नर देही पाय लेत जीवत को फल सब
ही में सेर रहै नहिं दबत दबाए ते।
रह लोग छाए नाम लेत हुहुताए जस
जग में सवाए होत जाति के जिवाए ते ॥१३॥
नपै न कवी जाको ऊपर न बजै लालो
रह दिनेरनि आए गए न को मरको।
पीसत पवत घर वारी दिक्य रह लोग
पाइ औ विगूचै जिनें आवै नहिं दरको।
जाइ न सकत मुप दुपत वकत औ अनक
ज्यान होत यह काम बडो जर को।
सुकवि गुपाल चिरिया को पत पायो याते
होवुह सवायो घर पाहुन के घर को ॥१४॥

पुरुप वाच

ब्रेटा ब्याह

दोहा

या विधि सादी होइ जो, तो वरात तो जाइ।
बनत ब्याह जिन बात ते, सुनिय[1] श्रवन[2] लगाइ ॥१५॥

कवित्त

बढिक न माप[3] औ दलेल मन राप बात
पच को न नाप[4] वन[5] सुने नाहि वादी के।

१ है० गुनियें २ है० नान ३ है० माप ४ है० नप ५ है० बन

नयँ राह रक दाम[1] रारन ।सार नहि
मीग यन अर मन राग ओग जारी है[2]।
चूसँ राय बाहू आप रह मुग पार मुनत्यार
पर साहू पवि गावत जुगारी है।
लाख नाहि मादी मूल जसकी न यादी ए
गुपाल कवि लखन सुधारिवेके रादी है ॥१६॥

इस्ती वाच

दोहा

वेटा वारे की तरफ, जिनते[3] विगरत[4] व्याह।
ते बाते सुनि लीजिय[5] कवि बुधि बल[6] अवगाहि। १७॥

सवैया

मागत दाम न देत छदाम जे दानि के लवे कौं[7] हाथ पसारे।
मारे[8] रहै[9] मन सूमता[10] धारि क[11] मगित दूरि ते देपि विडार
काहू सलाही की मानें न वात जे गाल को[12] मारिके[13] पेत मैं हार।
राय गुपाल बदावदी क[14] जे बडाई विदा करि ब्याह बिगार ॥१८

कवित्त

जाचिक को देखत में हुलस्यौ न मन देत
कोडी एक मागें सोई जम महा लगे।
नेगिन के नेग काज पकरत ठोढी दाँति
पातिहि ते लैवे काज पात है हहा लग।
सुकवि गुपाल जाम परच न होइ बनो
ऐसी आप आइ सुध वावत सहालगे।

---

१ है० दाम २ है० जारी ३ है० इनते ४ है० विगरे ५ है० लीजियें
६ हैं० हमसौं मोत ७ है० कू ८ है० मारें ९ है० रहें १० है० सूमता
११ है० कें १२ है० मालकू १३ है० मारिकें १४ है० कें

करिके कुजस ब्याह अपनौ बिगारे कही
    और कौ बिगारत में तिन कौं कहा लगै ॥१९॥†

ब्याह बेटी कौ

दोहा

जिनि बातन ते बनतु है बेटी कौ भल ब्याह ।
ते बातैं बरनन करत सुनहु सकल कवि नाह ।२०॥

कवित्त

लैके कुस कन्या भूप दाति की न कहू जारैं
    हाय सबही पै बानी बोलैं ममिरत हैं ।
सुकवि गुपालजू बरात त पुस रापै घटि
    चलन हूं देपि हुलपाउन करतु हैं ।
रोटी कौं बनाव दाने घास पै चलाव न
    करावै पच घनौ मन सब कौ हरत है ।
बडो रापै जीव ढढ आप ते गरीब यन
    बातन ते बेटी कौ बिवाह सम्हरतु है ॥२१॥

इरली वाच

दोहा

जो बेटी के ब्याह में चलति बात जे आइ ।
तौ बेटी के ब्याह कौं ढोल लगति है नाइ ॥२२॥

कवित्त

होत रहैं जहां दुल्पाउ बात बातन म
    जमत है सम में निकारैं जाति हेटी कौं ।

---

† यहां से 'ससुरारिके' तक का अंश है० प्रति म नहा है ।

दैकैं दाति पाच की पचास की यतावें आप
परच कराव घनौ दौलति इकेठी कौ।
सुकवि गुपाल नेंक काहूँ सौ न नवै औ दवाइ
लेइ सब देत बलत धन भेटी कौ।
सुजस के हेती कोऊ करौ क्यौं न केती येती
बात के करे ते बिगरत ब्याह बेटी कौ ॥२३॥
चहल पहल रथ बहल भए तौ कहा
महल म घास आंप सरम स यौ नहीं।
बडन सौं रीति प्रीति नप सौ करी तौ कहा
दौलति धरी तौ बिन धरम धनौ नहीं।
भनत गुपाल बडें मन में भए तौ कहा
सादी गमी माह जाति बघन ग्यौ नहीं।
जगत मे आइ के कमाइ कहा कीयौ घर
आयें जौ बिरादरि कौ आदर ब्यौं नहीं ॥२४॥

सुसरारिके[1]

दोहा

समध्यानै ते[2] जो रहे, तौ जैहै[3] सुसरारि।
तहाँ[4] होत सुप नित नयौ, सासु सुसर के प्यार ॥२५॥

कवित्त

नित नई प्रीति रम रीति नई नारिन सौं
आदर अधिक देपि भूलै घरवार कौ।
पौढिवे कौं पलिग पैं गदुआ[5] गिलम धौरि
पाड पकवान मिलै भोजन वहार कौ।

---

१ यह प्रसग है० प्रति म समध्याना क परचात है।
२ है० सो ३ है० जहँ ४ है० जहाँ ५ है० गेंदुआ

नितप्रति होत देवि हिय में हुलास सारो
सारे सरिहज सासु सुसर[1] के प्यार कौं।
कहत गुपाल फूलें अग न समान मोप
कह्यो नहिं जात कछु[2] सुप सुसरारि कौं ॥२६॥

सोरठा

इतने सुप नहिं होत, बहुत रहै सुसरारि में।
जाय रहै हरि पोत‡ तो ऐसी दरि होइगी ॥२७॥

कवित्त

चाहत न सारो औ ससुर जर्‌यो बर्‌यो जात
सासु साह्मी परि जहाँ ठानति लराइ है*।
सारी सरहज कह्यो करति रसोई बीच
पय पय हारी पात सेरुक अढाई हैं।
सुकवि गुपाल[4] घर घर ही रहत इह[5]
याने यहा[6] आय रहटानि भली पाई है।
जाइ लेक सग कुल कीरति गमाई ऐसी
जाय सुसरारि धरकार* वा जमाइ है ॥२८॥

इस्तीवाच

समध्यानै

सोरठा

छोडो[7] व्याह वरात समघयानै तो जाइय।
जहा जे सुप सरसात सो[8] प्यारी सुनियँ[9] सुपद ॥२८॥

---

१ है० सुजर २ है० कछू ‡ हर वार * धिक्कार ३ हैं० कौं (पर यह आगे की तुक की दृष्टि से लेखक की ही भूल है।) ४ है० कहत गुपाल ५ है० यह ६ है० इहा ७ है० छोडयो ८ है० ते ९ है० गुनियें

कवित्त

अलम चलन देपि करी न बडाई काची[1]
करतत जाके नहिं एक मन आयो हैं।
नित मन मझ यही रह्यो[2] पछितायो जाको
मव ही[3] न रहसि बहसि बतरायो है।
सुकवि गुपाल समधिनि ममधी ने नाऊ
नगिन सौं दुद छना धरत[4] मचायो है।
दौलति परचि पछिताय बेट[5] व्याहि हाइ
ऐसे ममध्याने जाइ[6] काने सुप पायो है ॥३०॥

पुरुष वाच

दोहा

जाको समधी होति है, सोई[7] समधो होति[8]।
जो एसो ममधी मिल, जहां सब[9] सुप होइ। ३१॥

कवित्त

होत नित नयो जहां देपत ही मान पाव
दान[10] सनमान जब करत पयाने कौं।
सग जात जामे ताके अग में उमग होत
बठ जब तिया आइ[11] गारिन के गाने कौं।

---

१ है० कबू २ है० यही मन माझ नित रह्यौ ३ है० हूं
४ है० दन्द जहा सदाही मचायौ है। ५ है० वेट ६ है० जायि
*इस कवित्त से पूव है० प्रति मे वह दोहा है जो मूल प्रति म इससे आगे के कवित्त से पूव है। (जाकी—- सुपहोइ) इस कवित्त के पूव का दोहा (छोडौ——सुप०) आगे वाले कवित्त से पूव है० प्रति मे है।
७ है० जोइ ८ है० होइ ९ है० तहां नही सुप कोइ १० है० दान
११ है० आय

वहसि वहसि होइ[1] रहसि अनेक भांति
भांति भांति भोजन मिलत जहां पाने[2] को।
सुकवि गुपाल[3] कोऊ[4] कहा[5] लौ वपान[6] मोप
कह्यौ नहि जात कछु सुप समध्यारे को ॥३२॥

पुरुष वाच

तीरथ जात्रा

रापे घर ही माझ[7] तो तीरथ जाना करे।
जहां जे सुप सरसात मो प्यारी सुनियै सुपद[8] ॥३३॥

कवित्त

सुरग में वास सब व्याधि को विनास परगास
भवित परम पवित्रताई गात में।
हरि अनुराग होत घ य धन्य भागि जाके
सुभ गति धामें सब पितर अन्हात में।
सुकवि गपालजू कृतारत कुटम होत
जगमें सुजस वडो नाम होइ जात[9] में।
माला रहै हाथ औ जजार छुटि जात एते
सुप सरसात सदा तीरथ के जात म ॥३४॥

स्त्रीवाच

दोहा

जो साचो मनहोइ तो तीरथ मन ही माहि[10]
कपट कतरनी पट में, कहा होतु है नाहि[11] ॥३५॥

---

१ है० होति २ है० पाने ३ कहत गुपाल ४ है० कोई ५ है० कहां
६ है० वपानें ७ है० माहि ८ जहां जे सुपसरसाहि ते सुनियें निज
श्रवन दे। ९ जाति १० माहि ११ हाइ

कवित्त

तीरथ गयो तो न गयो तो भयो कहा जाके[1]
दया दान सुचि हिय तीरथ अभगा हैं।
हरि पद पाइयें कों सुष सरसाइबे[2] कों
पाप के जराइ[3] बे कों अगिनि पतिगा हैं[4]।
सुकवि गुपाल भाव भगति हिये में धारि
साचे[5] श्रीगुपालजू के रग में जो रगा है।
करि सतसगा कबो[6] पर न कुसगा सदा
जाको मन चगा तो कठोठी ही में गगा है ॥३६॥

पुरुस वाच

दरसन जात्रा[7]

दोहा

मन परसन ह्वके जबै हरि दरसन कों जात।
साह्मी हरि सन होत अघ बरसन के कटि जात ॥३७॥

कवित्त

साझ अरु प्रात हरि मदिर म जात जब
पाप कटि जात जेते करे बरसन ते।
सुकविगुपाल बहु नेननि को सुष होत
ममता अधिक घटि जाति घरसन तें।
रूपमाधुरी में जसौं आवत सवाद तसो
आवै न सवाद कबो भूलि छरसन ते।
करि अरचन साह्मी होत हरि सन मन
परसन होतरु करत दरसन त ॥३८॥

---

१ है० जाकें २ है० है० मरसाय ३ है० जराय ४ है० हैं ५ है० कबू
६ है० साचो ७ यह प्रसग हैदराबाद की प्रति मे नही है।

स्त्री वाच

दोहा

चित जोरी में रहत मन, तियन देखि चलि जात ।
ऐसे दरसन करत में, कछू न आव हाथ ॥३९॥

कवित्त

साचौ करि भाव मन द्रढ करि बैठि घर
मदिरन जाइ-जाइ काहे सिर पटके ।
प्यारे श्रीगुपाल को दरस हाल ह्वह जोपै
हिये ते करैगो दूरि कपट के पटकै ।
यह अटकरि हटकरि क कहति मति
सटकै क्हू को त्यागि जगत के पटकै ।
जाको नाम रटि सोधि देखि निज घट तेरा
राम तेरे तट में अनत जिनि भटके ॥४०।

पुरुष वाच

कथा-कीरतन[1]

दोहा

हुलसत हिय पुलकत सुतन गदगद सुर ह्वै जात ।
कथा कीरतन सुने ते, होति बुद्धि अवदात ॥४२॥

---

१ यह प्रसग हैदराबाद की प्रति मे नही है ।

कवित्त

होइ हरि रति क्यी पाव न अगति प्रभु
चरित म रति गति पावें मति दीये ते ।
सुकविगुपाल सतसगति वढति मेर
मिल्त मुकति औ सुन्नत होनि जाये ते ।
मिटत अपान सदा उपजें विराग गयान
काम क्रोध लोभ मद मोह मिट छीए ते ।
पाप जात कीयें मिट त्रियतापो भीये होत
एते सुप हीए कृष्ण कथामृत पीये ते ॥४२॥

रती वाच

दोहा

कथा कीरतन मनन करि करत न जो मन सोघ ।
उपजत नही विराग मन व्रथा जात परमोद्य ॥४३॥

कवित्त

विन मन सुद्धः होत हित म न ज्ञान जसे
उपज न भु यौ बीज ऊसर के लुने ते ।
मोह मद मान ते कुसगिन के सग झूठौ
साधत जे जोग देवादेपी इन उनो ते ।
सुकवि गुपाल जाइ श्रद्धा सतसग विन
सोइ कें अज्ञान नीद व्रथा सिर धुने ते ।
जिन हिय गुनें जे निकारयौ कर कुनें ऐस
होइ नहि कछु कथा कीरतन सुने त ॥४४॥

पुरुष वाच

मेला-तमासो

दोहा

सुहृद मित्र सँग साथ में मेला[१] को गव जात ।
जीवन[२] को लाहो मिल[३] हिय अरु नयन सिरात ।४५।।

कवित्त

आलम हजारण की जामें मुप जात्रा नई
नारिन कौं देपि पुस रह मन रेला में ।
जाति ओ बिरादरि मिलाधिन के सग मिलि[४]
देख्यौ करै सेल यार वासन के मेला मे ।
सुकवि गुपाल मजा पाइवे[५] पवाइवे[६] को
देपिवे दिपाइव को होनु है[७] झमेला मैं
जाइ के सवला ओ झुकाइ पाग सेला सदा
एते सुप छला बनि लेन मेला-ठेला म ।।४६।।

स्त्री वाच

दोहा

सब बातन को होइ सुप तब कछु दीसे सेल ।
नातर मेला[८] म फिरे ज्यौ तेली को बैल ।।४७।।

---

१ है० मले कू २ है० जीवत ३ है० लहै ४ है० नित
५ है० लायवे ६ है० समायव ७ है० हैं ८ है० मेल

कवित्त

चलैमान होत मन सुदर सरूप देषि
भरयौ करै मान मजा आव ना अवेला में।
सुकवि गुपाल सानि सौष गाठि दाम भलौ
पान पान चाहै[1] यारवासन के मेला में।
हारे पग या[2] में वह डोलतु है ता में[3] हाल
पुदि पिचि जानु है[4] हजारन के रेला में।
आवत अवेला[5] हाथ पर न अघला सदा[6]
एते दुष होन नित जात मेला—ठेला में।४८॥

पुरुष वाच

घोरे की सवारी

दोहा

सौष सानि[7] आछो वनति[8] चलत सवारी माहि।
राह चलत हारत नहा देषत रिपि‡ दवि जाहि[9]॥४९॥

कवित्त

हारत न मग, मग मारत मजलि हाल
सारत सकल काम आग निकरत मे[10]।
सुकवि गुपाल सौष सायनि वनति भली[11]
होत नहि कष्ट वहु वातन गढत मे।

---

१ है० चय २ है० जाम ३ है० असवारी बिन तामे ४ है० हैं
५ है० अवली ६ है० याते ७ है० सानि सौष ८ है० बनत
‡ रिपु=शत्रु ९ है० जरि जाहि १० है० म ११ है० भल

सुप होत गात जानि मानें वडी वात औ
मटीप दबि जात जात बरात कढतमें ।
भरम बढन जस जग में मढत सेज
तनमें पढतु हैं तुरग के चढत म ॥५०॥

स्त्री वाच

दोहा

असवारी के राप ते इतने दुप नित होत ।
कवि गुपाल तिलन सुनो हमसो बुद्धि[१] उदोत ॥५१॥

कवित्त

ठौर की फिकिरि दाने घास को फिकिरि, चोर
ढोरको फिकिरि, मन रहै बडी ख्वारी में ।
राति होइ जब तब छाती प चढत हाथ
पाय टूटि जात[२] गिरि परै जो अँध्यारी में ।
सुकवि गुपाल हिलि-मिलि न सकत औ
निचित है कै बैठि न सकत हितू यारी मे ।
रग छिलै न्यारी[३] देह अकडत भारी[४] सदा
ऐते दुप जारी होत घोरे की सवारी म ॥५२॥*

इतिश्री दपति वावय विलास नाम काव्य निज देस प्रबन्ध वणन चतुथ विलास ।

---

१ है० वुद्ध   २ है० जाय   ३ है० भारी   ४ है० न्यारी

* है० प्रति म इसके पश्चात यह दोहा है

"तीरथ, जात, बरात, को तब धूक दीसै सैल ।
अरु पार भगहि रिप चत्र सुदारी गैल ।"

पंचम विलास

अमल प्रबन्ध : भाँग

पुरुष वाच

दोहा

होइ रक ते राज मन, उमग होइ बहु गात ।
पीवत भगहि के सुरग नेक दूरि रहि जात ।।

कवित्त

भोजन में स्वाद और स्वाद[1] आवै बातन में
बादि के बिवादिन सों जीत जरि[2] जग में ।
उठति गुपाल राग रग की तरग[3] यार
बासन के सग फुरसति रह अग म ।
जात ओ, बरात मेला[4] तमासे की दीसे सल
काम[5] की तरग उठ तरुनी के सग में ।
छूटयौ करै जुग दिल रहयौ कर दग दीस्यौ
कर कऊ रग सदा भग की तरग म ।

इस्तीवाच

दोहा

घर छप्पर घूम्यौ करत फाटि जात मुप नैंन ।
होइ[6] बाबरौ भग त हँसत कढत मुप बैन ।।

---

१ है० सवाद   २ है० जुरि   ३ है० उमग   ४ है० मेले   ५ है० अनग
६ है० होत

कवित्त

ऐस की सवाद पाइवे को बढ़ो[1] चाहै स्वाद
हाँसी बकबाद बाप तोरे बकवैया की।
उडौ[1] रहै मन, रहु घूम्यौ करै तन, राति-
दिन मैं लगी रहति लगी के उठैया की।
सुकवि 'गुपाल' यह चाहति[3] है जब, तब
लाज न रहति बाप आप अरु मैया की।
परच को लगी, लोग कहैं भगी जगी, याते
मति होति भगी बहु[4] भंग के पिवैया की।

अफीम

पुरुस वाच

दोहा

गरमाई तन मैं रहै, ऐस स्वाद सरसात।
आव कबहुँ न गाफिली, नित अफीम के पात॥

कवित्त

गाफिल रहै न, असमजस कहै न बैन,
रहैं चित चैन मैं, न थमन कदीम कौं।
सुकवि गुपालजू पचावत पुराक पासी,
पात[5] उमराव[6], बस करन[7] गनीम कौं।
कफ कौ घटावै[8], घनी भूप कौ मिटावैं[9], बाय
ढिग नहि आवै, औ' नसावै दुप नीम कौं।
भिरिबे[10] कौं भीम, रोग आवत न सीम, याते,
सब मैं मुनीम, यह अमल अफीम कौ।

१ है० घनो २ है० उड्यो ३ है० चढति ४ है० नित ५ है० पाय
६ है० उमराय ७ है० ऐस करत ८ है० नसावै ९ है० घटाव
१० है० भोजन

इस्त्री वाच

दोहा

सब में अमल अफीम को याते पोटो होइ ।
पाए पीछ फिरि कबहुँ छूटि सकें[1] नहि सोइ ॥

कवित्त

झुके रहै पलक, नीद परन न पलक,
परति न कल, घनै दाम चहैं[2] हाथ म ।
चाहत पुराक, मुप निकरै न वाक, पेट—
रहत कबज, झूमें आवत ओ'जात मे ।
सुकवि 'गुपाल' फेरि छूटि न सकति नेंक
लहम न लागै बिन मिलै मरि जात में ।
सूपे रहै गात महु[3] करुओ रहात एते
सुप सरसातहैं, अफीमहि[4] के पात[5] में ।

पोस्ती

पुरुस वाच

रुक्यो रहै दस्त बडी होत परबस्त, तन
रहत दुरस्त, अल्मस्त होत जीव तें ।
सुकवि गुपालजू अमल माँनि झूम्यो करै
फिकिरि अनेक जाकी जाति रहै हीव तें ।
बोलनो परै न, घनो डोलनो पर न, पान—
पान भलो मिलै घर बैठे ही नसीब ते ।
साति होत जीवनहि चाहिय तबीब, एते
सुप होत जीव सदा पोसत के पीव त ।

१ है० सक्तु २ है० चय ३ है० मुप ४ हैं० अफीम ५ हैं० सुपान

स्त्री वाच

दोहा

मियाँ पोस्ती कहत सब देत रहत तिय दोस ।
पोसत बारे कों कबहु रह न हिय को होस ॥

कवित्त

भागिनो सती कौं, परि जाति ओसती को, तौ कौ
मलिन सुभाव जस रहै ग्रसतीं को हैं ।
सुकवि 'गुपाल' मियाँ पोसती कहत, बल—
के सती को घटै, देह होत बोसती को हैं ।
छोडि दे सती को, तौ को, नीको न लगन रोस,
दोस देत तो को दिन जात कोसती को है ।
जात जोसतो कौं, नहि रहै होस तोको, सबही
में सोसतो को, ये अमल पोसतो को हैं ।

आसव के गुण

पुरुस वाच

नित मध्पान हि पीजिय, चिकनै भाजन माय ।
प्रात समें असनान करि मैन समें मे राति ।
प्रात समे छै टाक भरि, चारि टाक मध्यान ।
आठ टाक भरि रजनि में आसव पी सुष दानि ॥

कवित्त

चोगुनो बढावै काम, मन म प्रसन्न राप,
पराक्रम तेज बुद्धि बल बढै होए ते ।
हरष समृत, बहु मप को उढावै, स्वाद—
भोजन में आव सुष होत तिय छाए त ।

सुकवि 'गुपाल' करे अमृत को गुण, रोग—
आमन न देइ ढिग, तीयौं काल पीए ते।
विधि पूरवक चोयो, कडयो नसा लीय तोपै
एते गुन होत सदा आसव के पीये त।

स्त्री वाच

कहूँ क्रोध करि, अर भोजन बिना कर ही
निरतर दिन रेनि याकौं नहि पीजिय।
भय में, औ' अधिक पियास में न पीज पद—
युत मल मूत्रहि के वेग में न लीजिय।
सुकवि 'गुपाल' निरमल भए बिना कोई
तरे की गरम म न बिना विधि छीजिय।
तुरसाई साथ बहु रोग उपजावें, याते
भूलि मदरा कौ पाण कबहूँ न कीजिय।

स्त्री वाच

जात सुमिरन, बहु बकिबे लगत, बावरे—
की गति होति, बानी चेष्टा के छीव ते।
आलस ही रहै, अनकहिवे की कहै बात
काठ सो रहत, तन, सज्ञा जाति जीव ते।
देविके 'गुपाल' जो बडेन कौ न माने, जो
अगम्या गम्य ठान, भप्या भक्ष हि के लीव त
रोग उपजाय औ सरीरहि गमाव सदा
एत दुप पाव नर आसव क पीव ते।

मदरा गुण

पुरुष वाच

दोहा

होइ तेज वल पून, पुनि ऐस स्वाद उतपत्ति ।
कवि 'गुपाल' मद के पियत रहत सदा उनमत्त ॥

कवित्त

वल होत दून, बढ़ि जात बहु पून, एस
बडवडी दीसै[1] तन तरुनि को छीए ते[2] ।
सुकवि गुपाल' नैन होत लाल लाल, तेज
बढत विसाल एक प्यालो भरि पीए ते ।
साह्मी चल्यो जाइ हो लरेन को चाइ रण
मरन को त्राय मय जात रहैं हीए ते[3] ।
मद मांझ भीये रहै, बोतल को लीये, होत
एते सुष हीयै मदरा को पान कीए ते ।

स्ती वाच

दोहा

समझें वाद विबाद नहिं मन[4] सताप अति[5] होत ।
हात सदा मद पियै ते[6] दोष सहस्र उदोत ॥

---

१ है० बडी होति २ है० तरुनी सग छीएते
३ है० "कहत गापाल कवि लरत में इन बीच
मरिबे को डर जाको जात रह हिएते ॥"
४ है० चित ५ है० नित ६ पियत मे

कवित्त

टूठि जात पाय, छिद्रि आवति ह हाय, मुष
लगत न जाइ, बुरो आवति नियति म।
सुकवि 'गुपाल' वोप सहस उदोत होत,
सील ते कुसील होत, मरत जियत में।[1]
लाज ओ घरम धन विद्या मीत भूलि जात
सील ते कुसील होत मरत जियत म।
जात मुधि बुधि गिरि पर ल्द पद वडे[2]
होत उणमद सदा मदके पियत में॥

तमापू पॅानी

पुरुष वाच

दोहा

याकी महि महिमा अधिक, कलजुग की सहुगाति।
राजा रक फकीर सब कोऊ तमापू पात॥

कवित्त

रहै गरमाई, नित मुष अठनाई, सुष-
दाई लग भोजन, प पान के पवया[3] को।
सुकवि 'गुपाल', याते कठ रहै साफ भलो
सिष्टाचारो होत हितू यार जाति भैया को।

---

१ है० प्रति म यह पक्ति इस प्रकार है —
सुकवि गुपालजू सहस न्दोस होत वडो
लागत है पाप जाके हाथन जियत में।
२ है० वडे ३ है० पवया

कढ़े[१] कैयो काम, घने चाहिऐ न दाम, कबू
कष्ट को न काम, ह आराम के लिवैया को।
कहै भैया माया[२], रुप रावत नगैया याते
येते सुप होतह[३] तमापू के पवया कों।

स्त्री वाच

दोहा

थूकत होत हिरान नित, आवनि है अति धांस।
बहुत तमापू षात में, नैननि की होइ नास॥

कवित्त

नैन जोति जाति, कही जाति नहिं बात, औ
पिनात हारी जात गात, थूकै थल-थल में।
जीभ फटि जात, पीक लील लगि जात, मागि
के[४] हूँ चलि जान मन दूसरे सू पल मे।
सुकवि गुपाल तुरें दात परि जान हाथ
मुष रहै करुवो न आवै स्वाद जल मे।
परति न कल, रह्यो जात नहि पल, जरि
जातु है कमल या तमापू के अमल मैं॥

हुलासके

पुरुष वाच

दोहा

बढ़ति जोति नैननि सदा, चलत स्वाफ सब स्वास।
यतने[५] सुप तिन होन हैं, सूघन जबै हुलास॥

१ है० होत २ है० भैया ३ है० हैं ४ है० के ५ है० इतने

कवित्त

स्वाफ रहै मगज, गरगमी न आवै पाग
जाति यदि जाइ मॅग होंइ परगास के ।
सुकवि 'गुपाल' कवीर सीत न समाव आइ,
जाकी लेत वो लोग राजी रह पास के ।
अमल न आव मई' रोगन घटाव बास
दिन नहि' आव दाम धारे न्ग तास के ।
दकत न स्वाग, आत रह फफ पाग एत
होत हैं' हुलास सदों सूघत हुलास के ॥

इरसी वाच

दोहा

सनन सनन करिरी वर', घुनमुनाति जब नाँक ।
सूघत बहुत हुलास के बहुत लगति है आँपि ॥

कवित्त

बह्यो करै नाक, ठोर रहति न पाग, देपि
आवति उबाक, थूक थाकत मयास के ।
वठि न सकत सुभ कारज के बीच सदां
सनन सनन कीयो कर लेत नाँस के' ।
वहुन 'गुपाल' कवि बेर वर छीकत म
ठौर ठौर गारी लोग देत रहैं पास के ।
छाई रहे वास, बहु आयौ कर बास, एते
दुप परगास होत सूघत हुलास के' ॥

---

१ है० कवू २ है० कऊ ३ है० पछु कष्ट न कराव । ४ है०
५ है० करत ६ है० सन सन कियौ कय सिनकत नास के ।
७ है० प्रति मे तीसरी और चौथी पक्ति में विपयय है ।

हुक्का[१]

पुरुस वाच

मिलि के जात बरात में, जब भरि हुक्का लेत ।
पच पँचायति बीच में, बडी ठसक तब देत ॥

कवित्त

जाति रद्दै बाय, लोग बैठे बहु आय, औ स-
रीप दबि जाय जाके[२] सुनिके तडक्का ते ।
दीसै बडी बात जानी जाय नाति पाँति, बहु
आवति है बात याके लेतहि सडक्का ते ।
सुकवि 'गुपाल' याकी महिमा[३] अधिक होत[४]
सभा कौ सिंगार दिपि उठै हुक्का दुक्का ते ।
सचत असफ, बढै हिय की कसक, बनी
रहति ठसक बडी पीवत ही हुक्का ते ॥

इस्त्री वाच

दोहा

हाथ जरै, महुडो बर, जरै करेजा जोइ[५] ।
जारत हियो[६] कुटब कौ, पियत तमापू सोइ[७] ॥

कवित्त

मुरसत हाथ औ' कमल जरिजात पाँनी[८] ।
भरि भरि जात मुप लेतहि सरक्का ते[९] ।
रहत 'गुपाल' कीच कूरो करकट बहु,
आवति[१०] है बाम मुप[११] घूंअन के चुक्का ते ।

---

१ है० पीमने तमपू को मुप दुप २ है० ताके ३ है० महमा
४ है० होति ५ है० सोइ ६ है० हयो ७ है० जोइ ८ है० पान
९ है० सडरकाते १० है० मुर आयो करें बाम ११ है० बहु

होइ सरभगी, बठि सकतु न सगी, जाति
पाति न दुरगी, चलि जाइ इक्का दुक्काते।
घर होइ पुप्पा, नित होइ घुर घुक्का, ओ–
कहावतु हैं लुक्का बहु[१] पीवत ही हुक्का ते ॥

चरस के गुन

दोहा

करि सुलफा तयार जब, चिलम लेत हैं हाथ।
चरस पिबया नित नए, लागे डोलत साथ ॥

कवित्त

रहत निसोग[१], सग लगे रहैं लोग, जाय
रहत[२] न डर कहूँ काहू के तरस को।
सुकविगुपाल' आब सरदी न पास, पाब
देतही रकेब आब अमल अरस को।
मिलि दस पांचन में चिलमहिं लेत हाथ
पैचत ही[४] दम स्वाद आवत छ रस को
इमत बरस होत, हिय में हरस याते
सब में सरस यह अमल चरस को

स्त्री वाच्य

दोहा

मद्द भभूरयो सो नित रहत, सहुबति रहति कुटांट।
चरस पिबैयन को सदा घर होइ बारह बाट ॥

---

१ हैं० लोग २ है० चाहत न भोग ३ है० कहूँ ४ है० मे

कवित्त

हाथ रहैं दाग, औ' करेज जाप[1] लागि, दृढ
आगि जाग जाग परि जाइ[2] वम जिस के।

सुकवि 'गुपाल' छाय जाय वहु बास, लोग–
वैठि न सकत पास, अरस परस के।

पाग घटि जात[3], पुनि आदि कटि[4] जात, हाल
होत लोट पोट, दम पचन ही इस के[5]।

सूपि जात नस, कलू आवन न रस, एतै
होतह[6] कुजस सदा पीवन चरस के॥

इतिश्री दम्पति वाक्य विलास नाम का ये अमल प्रबंध वर्णन नाम पचमो विलास

---

१ है० जान २ है० जात ३ है० जाति ४ है० घटि ५ है० यसवे
६ है० हैं।

षष्ठ विलास

अथ पेल प्रबंध

पुरुस वाच

सिकार पेल

दोहा

वन, बेहड, गिरि, सरित, सर, सब की लेत बहार।
ह्वै सबार हय पै जबै, पेलत जाय सिकार॥

कवित्त

लीयो कर स्वाद, सदा आमिष अनकन का
बाह तरवारि सिंघ सूकर की धारि में।
सुकवि 'गुपाल हुक हय पै सवार दव्यो–
करत बहार गिरि, झरना, पहार में।
पहरत बम, करि छत्रिन के धम, जात
मारि बाधि लामें पसु पछिन हजार म।
होत ह हुस्यार, सूरताइ के मझार, एते
रहै सुप त्यार, सो सिकारिन सिकार में॥

इस्ती वाच

दोहा

सूकर सिंघहु स्यार चिर याम डारत मारि।
याते बन बहुड बिप पल न पल सिकार॥

कवित्त

सहनो परत भूप, प्यास, सीत, घाम, औ–
अकेलो गाहनो परै गहन बन झारो कौं।
सुकवि 'गुपाल' वहु गात थकि जात, छूटि
गए ते सिकार मारैं भोजन न थारो को।
मन रहै त्रास होत जिय को विनास औ'–
चलावत हथ्यार, काम बडोई हुम्यारी को।
मास को अहारी, होति हथ्या हाथ भारी वहु
पाप होत जारो, या सिकार में सिकारी कौं॥

पटेवाज खेल

पुरुस वाच

बने रहै नित बोकडे पटो हाथ ले मल।
राजन की राजी करन पटेवाज को पेल॥

कवित्त

जिकिरि सरीर बडो, अक्कड सा रहै बनी
घुटना पहरि सग कर न सेवा जो का।
सुकवि गुपाल जू पट कों हाथ लै क सो—
हजारन प बार करि सारे परकाजों का।
अहूँच न आनें देत अग आपने पें, और
अस्त्रन बचामे लैके नाम उसताजो का
मडन समाओं का, रिझामनो है राजों का, य–
सब मे मिजाजों का है क म पटवाजो का।[1]

---

[1] इस कवित्त में अन्त्यानुप्रास के रूप म कही वा और कहा को मिलता है। वास्तव मे इससे पूव के पद्य की प्रकृति (पद+बहुवचन तिर्यक प्रत्यय–औं) को देखते हुए खडी बोली का ा ही अधिक उपयुक्त लगता है।

स्त्री वाक्य

दोहा

पट्टबाजी सग ते गठ्ठबाजी होत ।
पट्टेबाजी करत होइ ठठ्ठेबाजी होत ॥

कवित्त

रापनी परति, चारयो ओर कौं निगाह
नेंक गाफिल भए पै वार होत मद्[1] गाजी कौं।
सुकवि गुपालजू तमासगीर लोगन कौं,
करनो बचाउ परै जुरत समाजी कौ।
देह थकि जाबै, कछू हाथहू न आवै, हाथ
पाँउ उडि जाबै, पवौ चहैं माल ताजी कौ।
नेंक डट बाजी, लोग कर ठठेबाजी, याते
बडे बटबाजी कौ सु काम पटेबाजी कौ ॥

पतिंग

पुरुस वाक्य

दग रह दिल सग म, रहे मित्र को मेल।
पेलन मांझ पतिंग की है उमराई पेल ॥

कवित्त

देख्यौ करै सल, फल करत अनेक भाति,
एक ते सरस एक रहत मिजाजी म ।
सुकवि 'गुपाल' बड होत दग बाज दग
रह्यो कर सदा यारबास के समाजी म ।

---

१ है० म मद् मिल्ता है।

मांझे को सुताय असमान में चढाय ढील
दैके काटि देत पच पारत जिहाजी म ।
दबे रहे पाजी, आप होत इश्क बाजी, या ते
राजी दिल रह्यो करें या पतिंगबाजी म ॥

स्त्री वाच्य

दोहा

धन अरगरु, उमँग बल मित्र अग के सग ।
जीते जुरि जुलमीन सौ, जब पतग की जग ॥

कवित्त

टूटे, कटे, पाछ मुप जूती को सौ पिट्यो होत
रौद पर दाँम बहु चहियत जग कौं ।
फाटी फाटी कहि लोग तारी देत रह हाथ
रप्पनते उडै गिर, करें प्राण भग कौं ।
सुकवि 'गुपाल' असमान ही कौं ग्ह मुप
फाटि जात आपि होस रहत न अग कौं ।
बुरी रहै रग औ' उपाधिन को सग याते
पलिय न षेल कबी भूलि के पतिग कौं ॥

कबूतरन को षेल

पुरुष वाच्य

दोहा

है हरीफ सब म रहै, करि उमदाई साज ।
ऊनर आवत है अमित, भये कबूतर बाज ॥

कवित्त

मारयौं परं मजा नित्रप्रति महबूबन कौ,
नई नई नसलि निकारि सब पेलैं मैं।

सुकवि 'गुपाल' जू उडान कौ लगाइ बाजी
देति दिल राजी रहैं यारन के मेले में॥

लोटन की लोट देखि, लोट पोट होत, आवैं
घोरे की परख, मन रहत अलेले म।

साझ औ सवेर, सदा रहत अलेल, लेत
सुपन के ढर या कबूतर के खेले म॥

स्त्री वाच

दोहा

रहत उडान उडान दिल, परच परो नित होत।
कबूतरन के पेल में, पछिछमदारी होत॥

कवित्त

देत रह सीठि, बुरी बीठि की रहत वास,
दीठि बिगरति असमान के निहारे त।

सुकवि गुपाल' सदा सोबरि रहति चित–
चोरिबे कौ कर, नई नसलि निकारे तें।

हो हो कहि कहि भारी तारी पटकायौ करें,
गुडन के सग रहि साझ औं सबारे त।

फटि जात तारे, हाथ हथ्या होति हार, ऐब
आवत हैं सारे या कबूतर के पारे त।

चौपरिपेल

पुरुस वाच

मित्र मिलाविन को[1] सदा, बयो रहै नित मेल।
याते[2] पेलन मे भलो यह चौपरि की पेल ।।

कवित्त

राजी रहै मीत दिन सुप में बितीत होत
जीनत में लागैं मन साझ लौं सबेरे में।
बाजी लेत बडी के बहुत रह बडी औ
हँसत मन रह यारबासन के मेले मे।
सुकवि 'गुपाल'[3] कछू जाचिक न मांगि सक
उठि न सकन मजा मार्‌यौ करै रेले में।
होत अन्वने पास झुके रह मेले सदा
एते[4] सुप होत नित चौपरि के पले में।।

स्त्री वाच

दोहा

पासों पर न जीन को हारत बाजी सोइ।[6]
चौपरि क पिलवार को परी परावी होइ।।[7]

कवित्त

मारिब-मरायबे की याम रह बात नित,
पासे के अधीन हार जीत रहै बेले मे।
हाडन बजावै, सदा रूमटि म आव दिन
हाथ घिसि आव भेंटा होइ न अघेले तें।

---

१ है० मिल मिलापी यार को २ है० सबही ३ है० आयके गुपाल
४ है० याने ५ है० यते ६ है० जोइ ७ जब उदासी होइ

सुकवि 'गुपाल' सनमान बिन पायें मिलि-
ब को पास आय सो उदास जाय डेले त।
परे रह हेले ज्ञाको झाझद सवेरे, यातें
एते दुप मेले होत चौपरि के पेले में ॥

सतरंज

पुरुष वाक्य

मिल रजिकें गजिरिप[1] चातुरीन को पुज।
हिय में होत हुलास पुनि[2] पेल्त जब सतरज ॥

कवित्त

पेल यह जूवा आवे[3] पते मनसूबा ताते[4]।
सर करै सूबा राउ राजन के रज ते।
'सुकवि' गुपाल उमरावन[5] कौं ब्याल जाको
लगन अवार नेक बरिन को गज तै।
दगा नहि पाय, कौन जीति सके ताय, बहु
आमें दाय, घाय ताय करत या बज तें। +
लाग मन मजु मिटि जात ससपअ,[7] आमें
चातुरी के पुज बहु,[6] पेलें सतरज त ॥

स्त्री वाक्य

दोहा

बडो परत मन मारनो और न कछू[8] सुहात।
पेलत जब[9] सतरज की बाजी आवै हाथ ॥

८ है० बजाय ९ है० जाय १० है० कू ११ औ'
१ है० आमही २ है० बहु ३ है० आमें ४ है० ताते ५ है० -
* पेल यह बार न लगनि जारौं रिपुन के गज त। ६ है० नित
+ दगा नहा पाय काऊ जीति न सकतु ताय आमें ताय घाय ताय
हौ बज तें।   ७ है० ससपच ८ है० कछू न ९ है० तब

कवित्त

हारत है[1] हाल, ताकी चूकत ही चाल, बडो
लगत झमाल, चाल चलन के पुज तें।
सुकवि 'गुपाल' देख बाजी में लगत,[2] लोग
राजी न रहत[3] सो उदासो होति अजि तें।
बैन नहि कहै, औ' मन्यौं सौं मन रहै, लगैं
किस्ति ते सिकिस्ति हार गोटन के गज तें।
पचत न नज, और आवत न बज, बडी
देह होति लुज, वहु पेलै सतरज तें॥

गंजफा

पुरुस वाच

दोहा

जाइ पलि हू गजफा, छोडि अबै सतरज।
तुम सो बरनन करतु हौं अब ताके सुप पुज॥[4]

कवित्त

चातुरी को कांम,[5] बडो रहै छूम-छाम, क्बी[6]
परत न काम यामें,[7] बद[8] औ' वदा को हैं।
सुकवि 'गुपाल' क्वी[9] रूमटि न होति याकी
जीतत में[10] बाजी हाल[11] होत ही जरा[12] कौं है।

---

१ है० धरि जात हाल २ है० एगति ३ है० रहनि
४ है० में यह दोहा सोरठा के रूप म इस प्रकार है
"छोडि अब सतरज, जाय पेलिहूँ गजफा।
जाके जे सुप पुजु ते तुमसा वरनन करूँ॥'
५ है० धाम ६ है० धनू ७ है० बहु ८ है० बडी
९ है० धच १० है० ही ११ है० जादी १२ है० जहा

मीरगडो फरद मुनें की मिलै जो पै कहूँ
तोप न पिलैया फोऊ जीति सकै ताको है।[1]
वहुत नफा कौं यामें काम न पपा को, यामें[2]
सवमे नफा को यांको पेल गजफा को है॥

स्त्री वाच

दोहा

नफा नही यामे कछू, बडो लगत[3] उरझेल।
सुनि कै पपा न हूजिय वुरो गजफा पेल।

कवित्त

रापनी परति[4] फरदन की सुमार, जीत
हार के बिचार काम परत अकेले तें।[5]
सुकवि 'गुपाल' गुडोमीर बिन पाय[6] औ,
मुने की पद जायें भेंटा होइ न अधेले त।
राति दिनां सदां मन याही मे रहत नित
बाजी बिन पाय उठि सकत न डेले तें।
रहें उरझले, सब दिन[7] रहैं ऐले, यत
दुप रहें भेले गजफा की पल पेले तें॥

इति श्री दपंतिवाक्यविलास नाम काव्य पल प्रबंध षष्ठमो अध्याय

---

१ वीरत में फरदु मुन की मिल जोप तापै
मीरगडो आय जीत सकन को ताकौं है।"
२ है० यावे ३ है० हाइ ४ है० रापना परा, ५ है० पुनि जीतैं
हारैं बाजी काम परत अकल त। ६ है० आवें ७ है० दिन राति

सप्तम विलास

निवास प्रबंध

ग्रामवास

दोहा

कुटम बढत भारी जहा हाल बोहरे होत ।
गई गाम के बास बसि घोरेई जस बोत ॥

कवित्त

ठोरन की जहा मुकतायसि रहति, कई
चीज मिलै योंही, जे न आवें हाथ दाम में ।
घर घर प्रति दूध दहिन के सुप, अप—
–नायसि मूलायजे सरस आठो जाम में ।
आपनी पराई बेटी बहिन सुमानि मिल,
आदर अधिक आए गए को सुधाम में ।
सुकवि 'गुपाल' जहा निकरत नांम एते
पावत अराम सो बसे ते गई गाम में ॥

दोहा

ऐस स्वाद घटि चलन लघु, करनी करत वहोत ।
गई-गाम के बास बसि, वहु दुप होत उदोत ॥

कवित्त

नेंक नेंक चीजन को मारनो परत मन,
रहनो परत फूटे टूटे से अगार में ।

होतु है 'गुपालजू' गमार में गमार भोग—
मागि न सक्त भूत लोगन के बास में ।
आव न अकलि, जादू सूरति सिकिलि, मिस्सो
कुस्सो पानो परै मन रहत उदास में ।
घम होत नींस सहरवासी कर हास, एनी
हाति हुरवासि, गई गाम के निवास म ॥

सहर के सुख

पुरुष वाच

दोहा

तरनी, वस्तत्र नाम, ज र, घन, आचारी होत ।
सहर बसें नित नित नए अदब कायदा होत ॥

कवित्त

सूरति सिविलि, बोल चाल भली होति, पान–
पान, मिल आछो, सुप रहत विलासी को ।
सुकवि 'गुपाल' चीज चाहियै सो मिल, होई
देव पै सप्प लोग करत पवासी कौं ।
मिल नित नए नर नारि, रजिगार, सुप–
सपति अपार भम बढत मवासी को ।
गुन की करासी, काज वरनी का रासी ऐ (सी)
रहहि मिल पासी, सदां सहर के बासी को ॥

इस्त्री वाच

दोहा

जहां रहत सब चीज को, दहर दहर उठ दाम ।
तन सहर के बसत में पावत नेंक अराम ॥

कवित्त

ठौर कौ सकोच, मोर जंगल कौ सोच, औ'—
मुलायजो न मानें, चीज मिलै न मुफति में ।
गली औ' गिरारन में आयो परै वास, गाए—
गए कौ न आदर बनतु है वपत में ।
झूंठ बहु बकै, पर बेटी बहू लदै, कोऊ
काहू ते न सकै, लोग चलै निज मत में ।
सुकवि 'गुपाल' मतलबी होत दाति, दुप—
होत है पहुत, या सहर के बसत में

ब्रजवास

पुरुस वाच

दोहा

रास बिलास हुलास नित, सब सुपकौ परगास ।
बडे भागि ते पाइये, ब्रज के मांझ निवास ॥

कवित्त

कथा कीरतन-रास भजन समाज साथ-
संत सतसंगनि द सुरग बिलासी कौ ।
देखत गुपाल बरषोत्सव के सुप नित,
प्रगु के समान न बिहार भूमि-बासी कौं ।
सुकवि 'गुपाल' जाके भागि को सराहै ताके
आगें तुच्छ लागतु है फल प्राग कासी कौं ।
मिटत चुरासी, जाय होत अविनासी, मिलै-
सुपन की रासी, ब्रज मांहि ब्रजबासी कौं ॥

इस्त्री वाच

दोहा

पिय प्यारी की कृपा करि पूरण पु य प्रकास ।
तब पाव निरविघ्न या, वन के मांझ निवास ॥

कवित्त

वदर औ' चोर, डीम, कटक, कठिन, भूमि,
सकल कठोर व्रजवासी हैं पिजया को ।
सुकवि 'गुपाल' जहाँ होत बडो पाप लै-
लगावत कलक तहाँ नेंक मुसिकैया को ।
वोलन में गारी, लोग कपटी, सुभारी, प्यारी-
करत भिपारी, बाट-घाट के भमैया को ।
करिकें चवैया तहा, सबहि हँसया एते-
होत दुप दया, व्रजग्राम के बसया कौं ॥

वनवास

पुरुष वाच

दोहा

(ससारिक) दुप व्यापत न, काटैं अहम मफास ।
रहत सदा सब भाति सुप, बन महँ किय निवास ॥

कवित्त

नित प्रति रहै सिद्ध साधन को सतसग,
व्यापत न दुप अह ममता की फासी को ।
रहति 'गुपाल' जहा एक न उपाधी, नित-
निस दिन ध्यान रह्यो करै अविनासी को ।

पाद कद मूल फल फूलन के भोजनन,
करत रहत बन बीधिन बिलासी को।
परम प्रकासी, रहै रिवि मुनि पासी, मिलै-
सुपन की रासी, बन माझ बनबासी कौं॥

स्त्री वाच

दोह

करै सुकृत हरि कौ भजें, छाड़ अहम मफास।
मन कौ हाथ हिरापियो, यह ही वन को वास॥

कवित्त

तोवपन पवन, जल, सीत घाम सहै सदा,
रहनो परतु है अकेलो निरजन मे
सूकर, व्रषभ, व्राघ्र, सिंघ, पाइ जात, भय-
रहै भूत-प्रेत निसचरन को मन मैं।
सुकवि 'गुवालजू' उदास चित रहैं तहाँ,
कहुँ दिनरेनि सुप पावत न मन म।
रहै निरधन, फलफूल कौ भषन, दुप-
होत लगण, बनवास के बसन मे॥

स्वरग सुप

पुरुप वाच

दोहा

नाँनाँ भोग विलास करि, सदा रहत निरसोग।
जेते कहे न जात सुप, तेते हैं सुरलोक॥

कवित्त

अमृत को पान सदा बैठन विमानन प,
भांति भांति भोगे सुष रमादि विलास के।
धारिके 'गुपाल' सङ्ख-चक्र गदा पद्मान
चतुर्भुज रूप होत तन परगास के।
है के कृतकृत्य रहै मन म प्रसन्न चित,
करि दरसन नित रमा के निवास के।
छूटै जम पास, होन श्रुक्रन प्रकास, कहे–
जात न हुलास, कछु सुरग निवास के॥

स्त्री वाच

दोहा

सज्जन जन सतसग करि, करि जग श्रुकृत प्रकास।
सुजसी नर नरलोक ही, करत सुरग में बास॥

कवित्त

श्रुकत'र बडे कष्ट कलपना ते पावे, पुनि–
पुय छीन भय भुव पात होत तीको हैं।
सुकवि 'गुपाल' जहा टकटका पुरो फबो
सुष नहिं पावे बोल चालिबे कौ जी को हैं।
कुटम सहति इन्द्रिलोक में न मिले, दूजी–
देह धरि पावे, दै के दुष सबही कों है।
मिलिवो न पोको पूव ज म को न ठीको, सदा–
याते यह सुरग को बास नहिं नीको ह॥

घर वास

पुरुष वाच

सोरठा

देस रहे सुप नाहिं, बिना गए परदेस के।
कहो कहा करि पाइ, उद्यम अंत कीए बिना ।।

सबैया

राम को नाम न लेन बनें, हरिगार कों भोर ते साम लों जीके।
कामन के सवुसेते 'गुपालजू' आठहूँ जाम में मांमन जी के।
दारिद घांम ते ठामहु में सुप, साज समाज, सबै दिन फीकें।
दांम बिना निज गाम में भाम अराम न आवत घांम में नीके ।।

स्त्री वाच

जेते सुप घर में सदा, ते न भलोकी मांहि।
या ते गमन विदेस कौ, भूलि कीजिए नांहि।
मित्र मिलापो मिलेई रहै, रहै आठहु जांम कुटंब कहे में।
धम सधे, बढ मम सदा रहे राय 'गुपालजू' बांम पए में।
वस बढे, जग होत प्रससित, लव अत रहै सो छए में।
गाम में नांम, सटे सब काम, सो एते अराम, है धाम रहे म ।।

तिश्री दपति वावय विलास नाम काव्य, निवास प्रबंध वर्णन नाम
सप्तमो बिलास

यह छद है० प्रति म ही है। यह दोहा और सवया पूर्व के दोहा और सवया
के पहले हैं। वास्तव म ग्रथ के क्रम के अनुसार यही उपयुक्त है।

अष्टम विलास

(विद्या प्रबंध)

पुरुष वाच

दोहा

राजपाट, धन, धाम, घर धरम सुजस उद्दोत ।
करमहि ते जग नरन कौं, सब सुष होत उदोत ।।

कवित्त

रथ, सुषपाल, द्वार झूमत मतंग माते,
पायगा पिछारी तोरे तुरग गरम की ।
भोजन बिबिधि भोग बनिता बिलास ऊँचे–
मंदिर महल सुष सयन नरम की ।
होतु हैं 'गुपाल' जस जाहर-जहूर जग
ताकी फहराति ध्वजा धरा में धरम की ।
नैंनन सरम बढ, धनरु, धरम याते
सब में परम यह बात है करम की ।।

स्त्री वाच

दोहा

करम धरयोई रहत जब, करैं कृपा भगवान ।
मिले नरन कौं सहज ही, सब सुष संपति आनि ।।

कवित्त

फूल्यो फिरै नर भूल्यो कहा महिं मोहित माया के फंद अलेपे ।
दीसे नही कोऊ दूजो 'गुवाल' सो दीनन के दयादान के लेपे ।
रंक ते राज करैं छिन में सो कृपा की कटाक्ष किये ही निमेपे ।
देप नही तिहि कौं मति मूढ जो कर्म की रेख पै मारत मेपे ।

'दलिद्र के'

पुरुष वाच (१)

बिना मिल भोजन सुरत सतन सौं होइ हेत ।
हरि किरपा जाप करे ताको धन हरि लेत ॥

स्त्री वाच

कवित्त

निसदिन रहत प्रभू को सुमिरण होइ,
थोरे में बहुत नाम करि करनीन कौं ।
व्यापत न मायक बिकार कोऊ कहूँ, दीसे–
आपनौं परायो बैठे करि के अधीन कौं ।
निरधुष ह्वैके सोवे पाइन पसारि, होइ–
जाहर जहूर धन गृह है (न) मलीन कौं ।
काहू को रिणी न रहै अूकति पनीन याते–
बहु सुप होत है धनी ते निधनीन कौं ॥

पुरुष वाच (२)

सुमति प्रकासे, प्रिय आदि मद नासे, अंड–
मकडा, ढिठाई नहिं रहै अभिमान त ।
समदर्शी साधन को सहजहि सग होत
सुद्र। तजि तपहि साहो तिनहि पान त ।

बिना मिलें सहजहि होत जपतप दुष्ट
सग मिटि जात हिंसा होति नहि पान ते।
कहत 'गुपाल' या संसारहि के बीच नित
निधन कों होत सुष एते धनमान ते।

स्त्री वाच (२)

दोहा

कर न प्रीति प्रतीति कोअू, होतहू मीत अमीत।
मीत मांनि निधनीर सो कोअू न राषत रीति॥

कवित्त

जहां जाइ तहा ताको आदर न होइ, तापै
काहू की बनेंन सषलूपा, हाय पाली मे।
सुकवि'गुपाल' जासौं सब डरपत, रुजि-
गार न लगत दिन जायो कर ठाली में।
दुरबल देषि क कलक लगे हाल लोग
निंदा कर्‌यौ कर भटकत द्बार द्बारी मे।
रहत बिहाली, सब दोयो कर गाली, कोअ
करै न सँभाली, सो कँगाल को कगाली म॥

'करमगति'

पुरुष वाच

मिलतु है पौरि पड भोजन मिठाई मेवा
ताको क्बौ समाअू ते पेट न भरतु है।
बैठत हैं रथ सुषपाल पालिकान म जे
उराहनें बिपन बिन पनहीं फिरत है।
जिनको मिळापी मित्र वेरी रौ ररम कर,
तिनहू सौं प्रीति रीति वरी हू करत है।

कहत गुपाल हानि टोटो नफा हानि यह
करम की गति कभी टारी न टरति हैं।

स्त्री वाच

सरबसु लैके बलि राजा को पताल दीनों
फजा लै गुपाल ते उबारयो गज गाहू कों।
चदन लगे क कुबरो को रतिदान सिवरी
के फल चके ही सुरग दियो बाहू कों।
चामर चबे के पाछे सपति सुदामें, साक
द्रोपती को पैक ग्रास भेट्यो रिषि नाहू को।
कैसे कलि काल में कर को कहो, काम बिन
लीय करतार हू करयो न काम काहू को॥

प्रभुपोति

पुरुष वाच

दाता निरधन, औ' अदाता धनमान, गुन-
-मान पराधीन नित रहु दुप भारी में।
कुलटा कों चैन, औ' सतीन कों अचैन, दुज-
चलै पाँय प्यादे चढ सूद्र असबारी में।
साधन कों ताचो, औ' असलन को न आचो, अे-
'गुपालजू' तिहारी रीति उलटी निहारी में।
ऐसो तो अन्याय कहूँ देख्यो न सुयो हैं प्रभू
जसो तो अन्याय होत साहिबी तिहारी मे॥

सवैया

एकन कों गजबाज दअे, अरु अेकन के पनहीं नहिं पाअू।
अेकन कों सुपदाई सबै जग, अेकन कों नहिं मात पिताअू।

अेकन कौ घृत पीरि के भोजन, अेकन कौं नहिं कोदो समाभू।
'रायगुपाल' बिचारि यहैं प्रभु की गति जानि परै नहिं काभू।

स्त्री वाच्य

दोहा

याते सब कौं छोडि कं कीजै मन सतोप।
या सम धन कोभू न जग पावत जाते मोप॥

सवैया

क्यौं फिरो देस विदेसन में जो लिलाट लिष्यौ सो घटैं न बढ़ै हैं।
काहे कू हाभु ही हाभु करो अपत्यार करो घर बैठ ही पैहै।
धाम धरा, सुप सपति, साज समाज, 'गुपाल' कृपा करि अैहै।
जीव जिते जगके जिनकौं जौंन जीव दियो सो न जीवका दै है।

पुरुष वाच्य

सवैया

आज लौं असी कहूँ न सुनी कि कमाइयै हाथ पै हाथ धरैं ही।
आपनौं सो तौ कर्‌यो चहिय रहिय कहु को रग बठि घर ही।
उद्यम कि सिर लक्षमी है जस पपा में पौन न आव परही।
प्यारी 'गुपाल' सदा सुप सपति देत प्रभू रुजिगार करही।

दोहा

जेते ह रुजिगार ते गुण महनति ते होत।
बिन गुण पाय जगत में नहिं धन होत अुदोत॥

इस्त्री वाच

सोरठा

गुण के गुण कहु क्त, कवि 'गुपाल' हमसौं अब।
सब गुण जाय अनत, कहूँ जाइ कहुँ सीपियो॥

गुण के सुप

पुरुष वाच

देस, बिदेस, नरेस, हित, सब कोऊ रावत मान ।
पूरब सुकरम के करें, जीव होत गुणमान ॥

कवित्त

कबहूँ कहूँ न काहू बात की कमी न रहै,
काम करयो[1] कर सदा सब पै यसान[2] के ।
सुकवि 'गुपाल' पूजा होइ ठौर ठौर, लोग
आइ आइ[3] बूझ्यौ दसहू दिसान के ।
देस, परदेसन, नरेसन में नाम होत[4]
जीतत गुनीन निज गुणते जिहांन के ।
दैके दान मांन भले लके पांन पांन ठाडे
रहैं घन मान सदा द्वार गुणमान के ।

स्त्री वाच

दोहा

गुनी गुनी सब कोऊ कहै, गुनी होऊ मति कोइ ।
घन कारन यामें सदा, पर बधन नित होइ ॥

कवित्त

घिरयौ रहैं द्वारौ, छुटकारौ न रहत[5], बडो–
कष्ट होत भारी, ताके[6] सीषत कहत मैं ।
नबनौं परत, पच करनौं परत, मूड–
मारनौ परत, दूजे गुनी के[7] गहत मैं ।

---

१ है० पर्‌यो २ है० इमान ३ है० आय आय ४ है० होइ
५ है० मिलत ६ है० सार्‍यौं ७ है० सो भरत मैं

सुकवि 'गुपाल' यमो आवत न मत, रहैं
पर की न पर्बरि प्रदेस गे यहुत म।
षापत महत पद[1] वचन सहत, अेते
ओगुण रहन, सदी गुन पे लहत मे ॥

ससकृति (सस्कृत)

पुरुष वाच

पढ़ै जास के होनि हैं सब सास्त्रन म सक्ति।
याही ते यह ससकृति करति मनहु आसक्ति ॥

कवित्त

कहै बेद बानी भगवतनें बषानी भुप-
कहत प्रमांनी, सदा दोनी जो सुकृत की।
सुनत ही जाके देई देव बस होत, जामें
पाइयति बात, सास्त्र, सति, औ' सुमृत की।
कहत 'गुपाल' जामें सकल अनादि आदि
यग में अगाध बहु धारा ज्यों अमृत की।
गुनमें प्रवृति करै, और ही प्रवृति, याते
सब में सुकृति कृति सिरे ससकृत की।

स्त्री वाच

दोहा

सभा सदन कौं अरथ बिन स्वाद न आवत कोइ।
याही ते नहिं समकृति सब सुप दाइक होइ ॥

---

१ है० पर

कवित्त

सबते निवृत्ति भये, पावत प्रवृत्ति, होत
मृतक के प्राय, याके करत रिवत कौं।
सुकवि 'गुपाल' समझावे समझत लोग
भाषा के प्रयोग, अध निकरे समृत कौं।
कहत में सकल सभा कौ न सुहाय थोरे
रहैं सब जाय यह काम बड़े धृत कौं।
कठिन प्रकृति याकौ जानत सकृत सब
होत है चकृत कृत लखि संसकृति कौं॥

'भाषा'

पुरुष वाच

सोरठा

समझत है सब कोइ, सकल सभासद सुनत ही।
मन में सुख बहु होइ, भाषा पढ़त सभान मे॥

कवित्त

पंडित हू सुनत, चकृत रहि जात, जासौं—
संसकृति हू में जाकी रहैं अभिलाषा[1] है।
सुकवि 'गुपाल' जाकौं समुजत[2] सब जग,
याकौं पढ्यो जानें, तानें सब रस चाखा है।
अमृत कौ पांन, सीधें सुगम निदान, हाल—
होत गुन मान रोपें सुजस पताका है।
अर्थन की साखा, यामें देसन की भाषा, सब
सास्त्रन में भाषा, सरवोपर सुभाषा है।

---

१ अभिलाषा २ समुझत

रती वाच

दोहा

पडित जन कोऊ नहीं मानत जास प्रमान।
याते भाषा गुथ मर कलपित कहत अज्ञान ॥

कवित्त

कहत कहानी, कोऊ कहै नहि खानी, झूठ–
चोरी की निसानी, मति भूमा मनि लाषा की।
सुकवि 'गुपाल' ससकृति की है छाया नर
कल्पित माया कणि आपस मे भाषा की।
विगरि प्रमान, जाको माने न प्रमान, बडी
बिकट है राह, ताके कठिनइ लाषा की।
देसन की भाषा, समुझ न अर्थ रापा याते
कर अभिलाषा[1] कोऊ पडित न भाषा की ॥

पारसी

हसि पारसी, करत है वारसीन के काम।
पढि पारसी सभारिसी रहत राजसी धाम ॥

कवित्त

जानत जिहान कर साफ मुजुबान बडे,
होत अति मान कीम कर फारसी को है।
मौलवी कहावै, जादे आमदि बढावै, बडो–
दरजा सु पावै, रापै सौप सानिसी को है।
जानत 'गुपाल' पातसाही, अल्काफ हाल
लगे रुजिगार मत आब अरबी को है।
गहत कलम, जात वैठत गिलम, याते–
सब मे जुलम को यलम पारसी को है।

---

1 अभिलाषा

स्त्री वाच

दोहा

बिना लगे रुजिगार सों, सकल छार सो होति।
पात वारसो, पारसी पढत आरसी होति ॥

कवित्त

रहत यमान नहिं, पलट जबान बिन,
रापे सौंप तानि यामें सूबा होत ही सकौं।
समझे न तावौं, कोई हिंदउस्तानी लोग,
कहे मुस्लमानी, हु यरम इह ईस कौं।
सुकवि 'गुवाल' बार बरस में आव जब
बहुत झिराब तब घुर्यो करे सीस कौं।
करिये नरीस, मेरी बात मानि बीस, याते—
मूलि कैं न कीज काम पारसी नवीस कौं ॥

दोहा

पनें आदि दकै बहुत हैं गुन के रुजिगार।
सब को जो बरनन करें ग्रंथ होइ विस्तार ॥
सब के परिब जोगि जो करत सकल संसार।
कछूक तिन में ते अबै, तेरे कहूँ अगार ॥

नवम विलास

(ग्रंथ सूची)

कवित्त

छन-छिन जाइ-जाय देस परदेस पूव
दखन पछिम अुतरादि फिर्यौ चहियै ।
बेटा बटी ब्याह समध्याने सुसरारि, व्रत
जाति पाँति पाइ के पबाइ परो चहियै ।
तीरथ-दरस कथा कीरतन-मेला-पेल
पलि नाना भाँति असवारी फिर्यौ चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिब कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्यौ चहियै ।।

भाँग औ'अफीम, पोस्त, मदरा, हुलास, हुक्का,
पाइ क तमापू, गाँजो, चस मर्यौ चहियै ।
चौपरि औ' सतरंज गंजफा सिकार, पटे-
-बाजी, कबूतर, पतिंग लर्यौ चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिवे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्यौ चहियै ।
गेई गाम, कसबा, सहर, व्रज, बन, स्वर्ग
करिकें निवास, घर मांझ अर्यौ चहियै ।
मंत्र, सास्त्र, न्याय बैयाकरण, सिद्धांत नीति
पातंजलि, मीमांसा, कास, पढ़्यौ चहियै ।
जोतिसी, मिसर, वैद्य पंडित, कुकवि, कवि
दाम्भ, भीष रोझो न रिंपाई अर्यौ चहियै ।

गड़, नावा, प्रोहित, कं चोरे, पटमगा, रासधारी
कि गवैया पुसामदि फिर्‌यो चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिव कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्‌यो चहियै ॥
ससक्रुति भापा पुनि पारसीह गुण दाल–
द्रहि कै दुशाग सतोप धर्‌यो चहियै ।
करम करम गति प्रभुहि को पोलि गोस्वामी,
अविकारी, भट्ट पडा परो चहियै ।
फौजदार, सिरकार, भडारी, पुजारि कुत–
-प्रत्लरु, रुसोइया, ह्वै दुप भर्‌यो चहिय ।
सुकवि 'गुपाल', कछु कुटम के पालिवे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्‌यो चहियै ॥

गुरु, चेली चेला, महतांनी कि, महत, मोडा,
मुखिया, सजोगी, लै फकीरी फिर्‌यो चहिय ।
जोगी जती, बिरकत, तपसी, बिदेही, नागा
सिद्, परमहस, सरभग गढ्यो चहियै ।
बांमनहू द्वारे चारि सप्रदा कौं सिप्य ह्वै कै
कोऊ बर्ण श्रम साध मग रह्यो चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिवे कौ
जीवका के काज रुजिगार कर्‌यो चहिय ॥
पच, मिरदार थोकदार, जुमेदार, औ'
महल्लेदार, मुप यार ह्वै कै डर्‌यो चहिय ।
जाति, गाम, चोधर, चबूतरा की चोधर, किसांन
गवारिया ह्वैं, जामिनी मे फिर्‌यो चहियै ।
दीमान मुसद्दी कामदार पोतेदार ह्वै।
रुजाची सिलहादार धन धर्‌यो चहियै ।

सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कों
जीवका के काज रुजिगार करयो चहियै ॥

पातसाही रजई नवाबी कि वजीरी औ'
अमीर, उमराई, ठकुराई, फिरयो चहिय ।
फोजदार, बक्सी, रसालदार, कुमेदान
सूरिमा, सिपाही, मल्लई म लरयो चहिय ।
मुल्ला, पिलमान, गडमान, सरमान, मोदी, काजी,
कलामत है कें गयान रच्यो चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कों
जीबका के काज रुजिगार करयो चहिय ॥

अगरेज, नाजरु, नाइब, सो रिस्तेदार,
थानेदार, जमादार, चोकीदार, चहियै ।
फोजदारी, दीमानी, कलक्टरी, गवाई, कै
अपील चपरासी, जलपाने, सुरयो चहियै ।
कपतान, तिलगा, हवाल्दार, सूबेदार
परमट, मीरबहरी, ढरयो म चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कों
जीवका के काज रुजिगार करयो चहिय ॥

करनेंट, लपटन, कपतॉन, लिपकप–
तान, रइट पुनि मेजर बखानिय ।
करनैल, जरनेल, लाट, अजीटन जगी
कोट मासतर, जुज्ज छोटो बडो मानियै ।
डिपटि रु, सिनसिनजन्, औ' सपरडड
हाकनर, कल्टुर, डिपटी, गुपाल मे प्रमानियै ।
बडो, कल्टुर, सिकट्टर, दवगट्ट, एजट
आदि ओदा अंगरेजन के जानिय ।

दोहा

छ सराफ कि बजाज बनि, परचनी, पसरट्ट ।
हलवाई कसरट्ट करि छररान की हट्ट ॥

कवित्त

दरजी, सुनार, रँगरेज, छीपी, उम्नाराज,
चित्रकार सहतनराती डर्यो चहियै ।
बढई, लुहार, माले, मालिन, कहार जाट
कूजरे भट्यारे हैं कमाई डर्यो चहियै ।
कोरिया, कडेर नाई, बारी औ' कुम्हार धोबी
सबका गरमूत तेलिया ह फिर्यो चहिय ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिब कौ
जीवका के काज रुजिगार कर्यो चहियै ॥
चुगल कि चोर ठग, दो ा, कि फोगा हैं ल-
-बर बुरभार हम जन्दी डर्यो चहियै ।
नगा कि हरामी सेपी पोरा बपरम, डिम्म-
-धारी, मसकरा गुवा ... म र्यो चहियै ।
जवारा, विमच री, कि सगाई को तिचोलिया
रसायनी, सयानी बनि देम फिर्यो चहिय ।
सुकवि 'गुपाल' वछु कुटम के पालिब कौ
जीवका के काज रुजिगार कर्यो चहियै ॥
गँडिया कि, भँडुग्रा, कि कसबी, भमया लौडे
बाज रडी-बाज रसिया ह डर्यो चहियै ।
कुटनी, घम्दा और ठिनरा ठिनारी इनके
बिरही जनाने घरतिय डर्यो चहियै ।
बाजीगर, नट भाड हीजराहु, बूढा भोल
कजर स्वरच हैं गमार लर्यो चहिय ।

सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्यौ चहिये ॥

बाल, तरुनाई, वृद्धताई, बय पाइ, सुत
सुता की सतानि के सुष ढर्यौ चहियें।

दाता दान दै कै है सपूत कै कपूत रांड
रँडुआ सुहागिल कै दिन भर्यौ चहियें।

सत्य, झूठ, मानी, है मचूच मनरवी सूम
जगी कुजसी हैं दुरमति डर्यौ चहियें।

सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्यौ चहियें ॥

परमारथ

करि परमारथ, थुक्त भक्ति नवधा कौं
निर्गुन सगुन ब्रह्म ध्यान धर्यौ चहियें।

सुनि यतिहास ब्रह्म नारद सवाद नाम
मन्त्र ब्रह्म फल के विचार अर्यौ चहियें।

चतुर मलोकी समझाइ सान, करुण
पतीव्रत'रु कल्हा ते जग डर्यौ चहियें।

सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्यौ चहिये ॥

स्त्री वाच

रुजगार सुष

रुजिगारन के करत में
प्यारे सुकवि 'ग

कवित्त

नारि करे आदर, निरादरे न बरो, सब
कहत बहादुर औ' जाति जगें न्यारी हैं।
आनि[1] मानें कुटम, सुजान[2] मानें, भाई बध
जाँन मानें सुधर, सयानप न धारी है।
कहत 'गुपाल' काज करनी करतबीलो
याही ते नरन मांझ होत जसधारी है।
प्राणन ते प्यारी उठि कीजिय सवारी सब[3]
जियन को यारी यह जीवका विचारी है।

दोहा

नाही उद्यम करन की मांनी[4] नहिं बतरात ।
तब पछिताय गुपाल सों कही नारि यह बात ॥

स्त्रीवाच

कवित्त

जीवका के काज नर कुटम कबीलो त्यागें
जीवका के काज सूर करें सूरताई है।
जीवका के काज नर चाकरी पराई करें
जीवका के काज परदेस रहैं छाई है।
कहत 'गुपाल' कवि जीवका अधीन जीवो
जीवका बिगरि होति फिकिरि सबाई है।
पाय जिंदगानी सब जगत के जीवन कों
जीव हू ते प्यारी यह जीवका बनाई ह ॥

---

१ ह॰ कानि २ ह॰ सो आनि ३ ह॰ जग ४ ह॰ रुकी

सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कों
जीवका के काज रुजिगार कर्‌यो चहिय ।।

बाल, तरुनाई, बृद्धताई, बय पाइ, सुत
सुता की सतानि के सुष हरयो चहियै ।
दाता दान दे कहै सपूत कू कपूत रांड
रेंडुआ सुहागिल के दिन भर्‌यो चहियै ।
सत्य, झूठ, मानी, है मचून मतलबी सूम
जपी कुजसी हैं हुरमति डर्‌यो चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्‌यो चहियै ।।

परमारथ

करि परमारथ, श्रुकन भक्ति नवधा कों
निर्गुन सगुन ब्रह्म ध्यान धर्‌यो चहियै ।
सुनि यतिहास ब्रह्म नारद सवाद नांम
मन्त्र ब्रह्म फल के विचार अर्‌यो चहिय ।
चतुर सलोनी, समझाइ सात, करुण
पतीव्रत'रु कन्हा ते जग डर्‌यो चहियै ।
सुकवि 'गुपाल' कछु कुटम के पालिबे कौं
जीवका के काज रुजिगार कर्‌यो चहिय ।।

स्त्री वाच

रुजगार सुष

रुजिगारन के करत में कह्यो कहा सुष होत ।
प्यारे सुकवि 'गुपाल' सो हम सों कहहु उदोत ।।

कवित्त

नारि कर आदर, निरादर न करी, सब
कहत बहादुर कौं जाति जगें न्यारी हैं।

आनि[1] मानें कुटम, सुकानि[2] मानें, भाई बंध
जोंन मानें सुघर, सयानप न धारी है।

कहत 'गुपाल' काज करनी करतजीलौ
याही ते नरन माँझ होत जसधारी है।

प्राणन ते प्यारी उठि कीजिए सवारी सद[3]
जियन की यारी यह जीवका विचारी है।

दोहा

नाही उद्यम करन की मींगे[4] नहिं बतरात ।
तब पछिताय गुपाल सौं कही नारि यह बात ॥

स्त्रीवाच

कवित्त

जीवका के काज नर कुटम कबीलो त्यागें
जीवका के काज सूर कर सूरताई है।

जीवका के काज नर चाकरी पराई करें
जीवका के काज परदेस रहे छाई है।

कहत 'गुपाल' कवि जीवका अधीन जीवी
जीवका बिगरि होति फिरिरि सबाई है।

पाय जिंदगानी सब जगत के जीवन कौं
जीव हू ते प्यारी यह जीवका बनाई है ॥

---

१ हे० कानि २ हे० सो थानि ३ हे० जग ४ हे० सको

वैदेक, जोतिष, पढ़ित, काव्य सिपाई, कि गाई कै भीष भरोगे ।
प्रोहित के गहुताई फकीरी पुसामदी ह गुरुद्व्य हरोगे ।
स्यानप के सिरदारी मुक्कद्दम चोधरी हु[1] लू[2] यजारें[3] अरोगे ।‡
मन[4] में ते कहो जो गुपाल' पिया तुम कौन सो जो रुजिगार करोगे ।

सुप जाको सब हम सों कहिय सु कहीं[5] कहा देस विदेस फिरोगे ।
जाइ कहूं धन ल्याइ कमाइ के लाइक मेरेई आग घरोगे ।
दया करिकै द्विज दीनन दान दै दारिद को दुप दूरि करोगे ।
जस कीरति के ज 'गुपाल' पिया तुम कौन सो जो रुजिगार करोगे ।

इतिश्री दंपति वाक्य बिलास नाम काव्ये गुपाल कवि राय विरचित यागृथ सूचोवणनाम नवमो अध्याय "९"

---

१ है० चोधर २ है० लक ३ है० इजारे ४ है० इन ५ है० कहो

‡ यह है० प्रति में दूसरी पक्ति है।

† है० प्रति मे एक और कवित्त यह है

पेती विधौं परवारगी चाकरी लादि लदेनो प्रदेस फिरोगे ।
बनिजै विवहार दलाली दुकान तमोली है गधी सुगध भरोगे ।
परचूनी सराफी बजाजी पमारी कसरट कै हलवाय धरोगे ।
मन में ते कहो जो 'गुपाल' पिया तुम कौन सो जो रुजगार करोगे ॥

दशम विलास

(शास्त्र प्रबंध)

पुरुष वाच

दोहा

ब्रह्म सच्चिदानंद घन ताकौ अनुभव होत ।
पढ सदां वेदांत कै मिले जोति में जोति ॥

कवित्त

आतमा कौ ज्ञान, परमातमा कौ ध्यान, जात
रहतु अज्ञान, उर ज्ञान होत नित में ।
ततपर होत निरगुण की उपासना में,
ब्रह्ममय दीस जीव जगत में जितनें ।
सुकवि'गुपाल' जड चेतनि की छूट गांठि,
मायक विकार हटि जात सब तितनें ।
छुटै भवकूप, पावै ब्रह्म को सरूप,
सुप होतु है विदांतिन, विदांत पढ इतनें ॥

सोरठा

साधन कठिन विवेक, समुझत कहत सुकठिन बहु ।
होइ घुनाक्षर एक, पुनि कलेस यामें घनौ ॥

कवित्त

कोरे ज्ञान ही की बात ठानत रहत अर-
ठान मानैंत न मत दूसरे करया को ।

सुकवि'गुपाल' भाषो मारत रहत बड़े
कष्ट के करे ते पार होगुइ ढ़हुया को।
सगुन ब्रह्म को सरूप गुप जानत न
भांत भव भार कष्ट बारते बरुया को।
देव लोग लाति, पारें सगति में भ्रांति, मन
होत नहिं शांति या विदांत के पढ़या कों॥

ब्याकरन

पुरुष वाच

दोहा

पांडित्यहिं को आभरन सब सब सास्त्रन को मूल।
पुनि ब्याकरन जगत में याते हु अति धूल॥

कवित्त

बेद औ पुरान सब सास्त्रन को मूल यही
याही के पढ़त होत मति को बढ़न है।
बानी सुधरत सुधरत उर ग्यान जांन
मानत प्रमान पद अर्थ निकरनि है।
सुकवि'गुपाल' बड़ो चरचा को जाल हाल
पंडितन बीच पांडिताई को भरन है।
परत करन घन चाहिय परन बड़ी
बुद्धि के करन को करन ब्याकरन है॥

स्त्री वाच

दोहा

थोरे आवे ते कबहु, काज सरत कछु नांहि।
याही ते यह ब्याकरन ब्याधि करन जग माहिं॥

कवित्त

कटुक करन लागें, नीरस नरन जाको,
कठिन चरननि करनि अघरनि है ।

अन्वय, अरथ क्रिया, करता, समास-पद,
जाको रूप साध हाल आव उतरन है ।

सुकवि'गुपाल' क्यों आवत न स्वाद रहै
भारी बकवाद होइ नाहक लरन है ।

मूढ कौं मरण जीभ जीउ को जरन बहु
व्याधि के मग्न कौं करन व्याकरन है ।।

नैयायिक

पुरुष वाच

दोहा

कष्ट करै सब ब्रह्म को, तरकन में मति होइ ।
याते नयायकन को, जीति सकै नहि कोइ ।।

कवित्त

जानें अनुमान, सब लच्छन प्रमान, सप्त
पदारथ ज्ञान परमान मत चाय ते ।

सुकवि'गुपाल' बहु तकन में गति होति,
होति अति मनि, मत जानें सब काइ के ।

व्यासजू के मन को, सुधारि रिषि गौतम नें
कीनों वेद बिरुद्ध मिटामन कौं चाइकै ।

मिटत अन्याय सुद्ध कविता बनाइ केई
आवत हू न्याय नयायकन कौं न्याय ते ।।

न्यो याय

दोहा

बादी यकबादी रहैं परनिंदा में गर्क ।
न्याय सास्त्र के पढ़ें बहु करनी परति कुतर्क ॥

कवित्त

होइ बकबादी, सबही को अपराधी, बड़ो
रहति उपाधी, मत पड सब काम के ।
याही तें 'गुपाल' श्रुति श्रापित हैं सास्त्र, बड़ो
लागतु है पाप, श्रुति सुनत में याइ के ।
कुजस विख्यात ज्ञान भक्ति की न बात मति
भिष्ट होइ जाति समझाये जाय ताय के ।
निंदक कहाइ, मरे स्यारजोंनि जाय, ऐते
होतहैं अन्याय नैयायकन कों न्याय कें ॥

सांख्य सास्त्र

पुरुस वाच

सब दुप हांनि, तत्व निरनें को ज्ञान आनि
प्रकृति पुरस को बिबेक होत हीए ते ।
अकर्तता, अभोक्ता, अमग आतमा कौ ज्ञानें
ज्ञानरु बिराग बढि जात, जाके भीए ते ।
आवत गुपाल नित्यानित्य कौं बिचार सब
तत्वन कों जानें सार यामें मन दीए ते ।
पूरे हिय आंपि, पूरे होत अविलाप, कोऊ
रहत न काक्ष साख्य सास्त्र पढि लीए ते ॥

स्त्री वाच

धर्म कम क्रिया त्याग ईश्वरै न मानें कबौ,
वेदक कहा में द्रढ रहै नही पन में।
जड जो प्रधान जग कारन कहत तासो
कैसें बनें सिष्ट यह आवति न मन म।
सुकवि'गुपाल' भाव भक्ति को न जान, बकबाद
ही कौं ठानें, बडो कष्ट रापै तन में।
झूठी बात वारे नहिं हरि रतवारे, यातें
सारय मतवारे, मतबारे है सवन में॥

पातजल

पुरुष वाच

दोहा

रिधि सिधि निधि हाजरि रहै, योग अग में दग।
पातजलि के पढे ते प्राण होन नहिं भग॥

कवित्त

हाजरि हजूर सिद्धि ठाढी रहै आगे, प्राण
चढैते कपाट, आवै काहू के न हाथ हैं।
जानत गुपाल' निदिघयासन, नयम, ध्यान,
धारना, समाधि, यम, प्राणयाम, गाथ है।
मन के मनोरथ, सकल सिद्धि होत, औ'
कहाय जोगी राज होत जगत विष्यात है
जिय को न घात, दुप होत नहिं गात, याते
सबही में प्रबल, पतिजल की बात है॥

स्त्री वाच्य

दोहा

सब सुप त्यागिय पत रहि मन कौं चापे हाथ ।
बडी फठिनता ते सध पातजलि की बात ॥

कवित्त

लोक परलोकन के सुप कौं न जानें, औ'
सरीर फष्ट ठाने जत्र प्राण जात चढि क ।
श्रवन, मनन, ज्ञान, साधा न बनें, चूके
बावरो सो होत, नारी छूटे रोग बढ़ि क ।
सुकवि'गुपाल' भक्ति मुक्ति न मिलति सिद्धि
प्रापति भए प अभिमान होत झडिक ।
मन जात मरियर, अत बैठ घर, याते
दीजे जल अजुलि पतिजल कौं पढिक ॥

मीमासा

पुरुप वाच्य

बेदोच्चारन मत्र पढि देबन बस करि लेत ।
सास्त्र मिमासा पढि कर, जाप दीक्षत हेत ॥

कवित्त

राजन में मान होत, जस धन मान नाना-
जग्य के विधान ज्ञान होत, याके आने ते ।
धरम बढावे, जगय दीक्षत कढ़ावे, कमकाड
मन लाव, राज मिले बीरबाने ते ।
सुकवि'गुपाल' होत जग में बिख्यात जाने
जे मुन की बात भोग भोगे सुर्‌यावे ते ।

वेद मत मानें, दीयो करे दिन दानें, अेती
होति पूरी आनें, या मिमास मत जानें ते ॥

स्त्री वाच

दोहा

कष्ट अमित करनें परत विघन करत सब देव ।
मीमांसा मत साधनें, घटत भगति को भेव ॥

कवित्त

मुकति विराग ज्ञान ईश्वरे न जानें, देव–
विग्रह न मानें साध सतें न अराधे तें ।
कर्म नष्ट भए पाछे भोगत चतुरासी, जाय
नरक परत, बहु जीवन के बाधे तें ।
सुकवि 'गुपाल' लगें चूकत में पाय देव
करत विघन पूरो पर तन नाघे तें ।
सधै न समाध, कष्ट करत अगाधें, दहे
दुषन ते दाधें, या मिमास मत साधे तें ॥

राजनीति

पुरुष वाच

रिपु कों जीति अजीत है, न्याय करें नृप नीत ।
राजनीति के पढे तें रहत सदां निरभीत ॥

कवित्त

सील सुप संपति सकल सिद्धि होति, सधै
धरम करम सारें काज निज मीत के ।

सुकवि'गुपाल' बड़े होत ज्याबसाली, पार्य
समान में आदर, सहत हित प्रीति पै ।
राजा, पातसाह, उमरावन को रावि, होइ
पढ़ेन को बड़ो याव करत अजीत के ।
रहे निरभीत कोऊ सकै नहि जीति, सब
छूटत अनीति, नीति पढ़ें राजनीति के ॥

स्त्री वाच

सवैया

दिनराति सुजात बिचारहि में चलनो सु पर नृपनीतिहि के ।
सुनते मे सुहाइ नहीं नृपकों सब वन रंग विपरीतिहि के ।
सु'गुपाल' कवी छुटकारो मिल न प्रबंधहि बांधत नीतिहि के ।
कबही नहि होइ अभीत रहू यते होउ पढ दुप नीतिहि के ॥

कोक ,सास्त्र

पुरुप वाच

रति-आसन, गुन दोप वय, जान जत्ररु मत्र ।
कोकसास्त्र के पढ ते, तिय सुप होत अनत ॥

कवित्त

मोहनी कि मत्र बहु जानें जत्र तत्रन,
लुकांजन लगाइ बस करे तिय जाता कों ।
सुकवि'गुपाल' बाजीकरण अनेक आमें
ओपधि औ' आसन समुद्रक की गाथा को ।
काम के सथानन ते काम को जगाइ, रितुकाल
पहचानें, सुप मांनें, रति गाता को ।
जा यों कर नायकरु नायक को बाता सदा
होइ सुप साता कोकसास्त्रन के ज्ञाता को ।

इस्त्री वाच

भगति भाव सुभ करम नहिं, नही राम को नाम ।
कोककारिका बहुन को, है कामिन को काम ।।

कवित्त

मार्‌यो जात हाल, मत्रजत्र न जपत, पर-
पतिनोन चाह धन यामें घनो चहियै ।
सुकवि'गुपाल' मानु भगिनी के भले बुरे-
लक्षन पिछानें तब पापन सों दहिय ।
वढत अधम सुभ कर्म म न लगै मति
रोग बढि जाय निश्च नरकहिं लहियै ।
वेश्वन को गांमी, होइ जातु हे हरामी, याते
है क कहुं कामा, काककारिका न कहिय ।।

पिंगल के

पुरुप वाच

जाने छद-प्रबघ, होइ पदरचना को ज्ञान ।
पिंगल सास्त्र पढ, कर काव्य कवी परमांन ।।

कवित्त

पद को प्रमांन, छद-भगन को ज्ञान, लघु
दीरघ सुजानि, बहु गणति दृढया कौं ।
अुलट रु' सूधे आमें पोडस करम, दग्ध-
अक्षर पिछानि गणगणहु कढया को ।
छद औ' प्रबधन के लक्षननिजानें, नई
काव्य करिब को बुधि हियमें बढया को ।
सुकवि'गुपाल' होत गुयन पठैया वहो
होत हरवया सास्त्र पिंगल पढया को ।।

रती वाच

दोहा

लिषत पढ़त पोहस करम, षछू न आन हाय।
पिंगल के पडते सदां, सासन ही जिय जात ॥

कवित्त

आछी लगै न सुनावत म बडो देर लग तहूँ रूप मढ़े तें।
राय'गुपाल' गंभीर बडो मत आवनु है बड मूड चढे तें।
नकहू भूलि जो आइ कहू, तो पर श्रम जात वृथा सु कढे तें।
काव्य के भेद अनेक जिते, कछु आवें न पिंगल छद पढ तें ॥

मत्रसास्त्र

पुरुष वाच

तेज जोंम बल सों सदा, सबही को ठगि पाइ।
मत्रसास्त्री कों सदां, सब कोऊ पूजत आइ ॥

कवित्त

देईं, देव, पिष, नर, नर, बस रह, काम–
कटत्त त्रलोकी के पदारथन जाने ते।
सुकवि'गुपाल' जामों डरप्यो करत सब
पूजा ठोर ठोर वैठे होइ निज थाने ते ।
बढ़ै तन तेज, नैत्र बरचो करै लाल, चाहै
सोई करि सक, सदां रहै बीर बाने ते।
परम पुराने लोग ईस्वर ही जानें, राजा
राव सनमानें मत्र सास्त्रन के जाने तें ॥

स्त्री वाच

दोहा

हिय अतर डरप्यो करत जबै जाय येकत्र ।
मत्र सास्त्र के पढें जब सिद्धि होत है मत्र ॥

कवित्त

मन दृढ राषि, कष्ट करनो परत घनों,
व्रथा श्रमजात जो विघन नेंक कढियै ।
सुकवि "गुपाल" मत्र जत्रन जपतप में
अजायें जात जानि जो प्रियोग नेक पढियै
भलो बुरो करत में निंदत है लोग, हथ्था
होति रहै हायन, कुजस जग मढियें ।
छोडि तिय मढियै, बिदेसन में हडियै, पै
भूलिकें कबो न मत्रसास्त्र कहूं पढियै ॥

जोतिस सास्त्र

पुरुप वाच

जोतिस को[१] रुजिगार अबर करिहौं प्रिया प्रबीन ।
जाको सुप वरनन करूं,[२] जो जग होत नवीन ॥

कवित्त

देव औ नरन बसीकरन करत, याते
गृह की गसी की गाठी काटत फंसी की है ।
जनम मरन दुप सुप की पवरि यामें
दीरयो कर अमे जसे मूर्ति आरसी की है ।

१ हे० के २ हे० कौ ३ हे० करत

सुकवि "गुपाल" तीनि जन्म, तीनि लोक, तीनि
काल्न तीन गति बिना दरसी की है।
पढ जोतिसी को, जाई जानें जोतिसी को, जसी
जगें जोतिसी की जग मांझ जोतिसी की है॥

स्त्री वाच

सोरठा

जोतिस जानें जोइ,[1] जग जा यो जिननें न कछु।
पढत बडो दुष होइ, कहत कठिन[2] याको मरम॥

कवित्त

गिनति सम्हार, गृह लग्न निरधार, सुभ-
असुभ विचारत, अजार होत जोकौ हैं।
त्याग घर नारि औ' बढावें नव-बार, जीत
हार में "गुपाल" मिश्र करेग[3] हँसो को है।
टारि के अरिष्ट, लेत याते हैं निकिष्ट काम,
सिष्टि बोच इष्ट सब दृष्टि बिन फीकौ हैं।
ज्ञान मान सीकौ, ही की ती की होत टीको नीकौ
याते बडो भीकौ यह[4] काम जोतिसी को है।

मिसुराई

पुरुस वाच

सदा काम सब को परत, जनम गमी अरु ब्याह।
मिसुराई के करन में नित नव रहत उछाह॥‡

---

१ है० जोय २ है० कठन ३ है० करन ४ है० रुजगार
‡ है० में इस दोहे के स्थान पर निम्नलिखित सोरठा है
'जनमत सादी माह सदा काम सबको पर।
नित नव रहत उमाह, मिसुराई के करत मे।"

कवित्त

आपने पराअे भले वुरे दिन जांन्यो करें
सडसौं मिटायो[1] करे सबही पे डर कौ ।
गृहन लगाइ कें बनाइनें बरस फल[2]
न्योतन कौ पाय माल मार नारी नर कौं ।
सुकवि "गुपाल" नव गृहन के लेके दान
सादी ओ बधाइन में राजी राय पुर कौं ।
गाम होत[3] सर, बडो होत है अकर, याते
सब में सुघर यह काम है[4] मिसुरकौं ॥

स्त्री वाच

दोहा

मिसुराई के करत में, निस दिन होत हिरान ।
भले वुरे दिन[5] देष ते पचिमचि[6] जात पिरान ॥

कवित्त

सोधत में साहो, एह लगन लगावत
बतावत हैं[7] यूठा जो न रांम होत जाई कौं ।
हौंम के कराबत में धूपत रहत नित
घेरा[8] वडो रह्यो करे व्याह ओ बधाई कौ ॥
सुकवि "गुपाल" भले वुरे दिन पूछि सति–
मेंति में हिरान करवायो कर ताई कौ ।
गृह को चढाई, परिगृह की कमाई,
याते वडो दुतदाई यह कांम[9] मिसुराई कौ ॥

---

१ है० मिठाय देत २ है० नित ३ है० रहै ४ है० रुजगार है
५ है० ग्रह ६ है० पूछन ७ है० हैं ८ है० घेरो ९ है० रुजगार

पांडेके

पूजा भयो कर व्याप्त पूर्यो चोक चांदनी कौं,
सीधें -सीते दाम आमें पाटिन के माडे कौं ।
गुरुजी कहाय, बठ अस कीयो करे, घर
चहुल को राषें भरि सौंजत ते भाडे कौं ।
सुकवि'गुपाल' विद्या हस्तमल[1] रहें, काम
हुकम में होइ सेवा करे देषि चाडे कौं ।
सीधे होत बाड हाथ जोर लोग ठाडे, रहें
यात रुजिगार भलो चट्टन के पांडे कौ ॥

स्त्री वाच

होंजिवो करत सो सिषावत अज्ञानिन कौं
फूटिबो करत कांन वहुत पहाडे कौं ।
पाइ होत बाड पात हाथिन सौं गाडे
वटसार विगरति यामें अेक दिन छाडे कै ।
सुकवि'गुपालजू' पकाय पाको करे गुण
कोअू नहिं मानें गुरमार विद्या माडे को ।
मारत मेंडाडे, चट्ट रातिदिन भाड, याते
पाड की सी धार रुजिगार यह पांडे को ॥

रसायन

पुरुस वाच

जाके सम कोअू साह नहिं, कभी कहूं नहिं जाइ ।
होति रसायनि दाहिनी रहत लच्छिमी ताहि ॥

---

[1] छन्द की आवश्यकता के नुसार हस्तामलक के स्थान पर इस रूप का प्रयोग है।

कवित्त

टहल में जाके लोग लगेई रहत सदा,
कहे करामाती मारी बाढनु है भरमें ।
सुकवि'गुपाल' नित जेतो पच करे, तेतो
आवै अनायास, कमी रहै नहिं घर में ।
भलो भयो करत, हजारन गरीबन को,
धन दै निहाल करै काहू ते न सरमैं ।
धरमैं बढ़त जाको घरमें अपार हाथ
रहति रसाइनी रसायनी के कर में ॥

स्त्री वाच

दोहा

बूटी ढूढत ही सदा, निसदिन जाको जाइ ।
रसायनिन को अेक ठाँ पाव नही ठहराय ॥

कवित्त

जानीं जाइ जोपै तोपै घरे रहै लोग घने,
घेरा परि जाय राअु राजन के धाम है ।
खरच न करै कवी, अग जो लगावें, फिरि
कबही न होति व्रथा जात श्रम याम हैं ।
करे ते टहल, बडी सिद्ध की कृपा ते मिलै,
जाको चैयै बूटो घनी महनति दाम है ।
फिरै आठो जाँम, ठहरै न एक गाँम, यह
याही ते निकाँम सो रसायनी को काम है

वैद्यके[१]

पुरुष वाच

तजि जोतिस को काम, करौं[२] अब[३] बदक करौं ।
होइ देस में नाम, अ गुन सरस सदा रहै ॥

कवित्त

साधन बनाइ के रमाया[४] कमामें[५] नाम,
यामें[६] गाम गाम काम परै जने जने को ।
रहै रुष्ट पुष्ट देह, नह निरवाहै सब
जोव दीन दके जस लेत नर घने को ।
होइ[६] उपकार, जुर्यो रहै दरबार द्वार,
औषधि के सारने सँभार काज अनको ।
कहत 'गुपाल' होत हाल ही निहाल[७] याते
सब ही में भलो रुजिगार वैदपने को ॥

स्त्री वाच

दोहा

बड़ी बड़ाई बद की, बरनि बताई बात ।
बालम बहुरि सुनौं बहुत बुरबाई विख्यात ॥

कवित्त

मरेन कौं मारे बुरौ सबको बिचार पर-
नारी हाथ डार, नित रहै यामें सद को ।
सुख सौं न सोव, पर दुख्यन कौं रोव, धक
पकहो में पोवे दिन, कर कौम कद को ।

---

१ है० वदक को २ है० बनू ३ है० वैद्य ४ है० कमाव
५ है० पावै ६ है० होत ७ है० यामे

हत्या पर हेत धरें,[१] करें रेत-पेत पाछ
औपधि कों देत बिद[२] लेत पेलें[३] सेद कों ।
कहत "गुपाल" कबि मेरे जांन में तो याते
सबही ते बुरों रुजिगार यह वैद को ॥

पंडित

पुरुष वाच्य

वैदक[४] पंडित वरि वर्नौ, पंडित बाचि पुरान ।
मंडित करौं सभान कों, जग कहाय गुण मान ॥

कवित्त

रहैं महि मंडित, अखंडित प्रताप काम,
क्रोध मद खंडित कै, मेंटें दुचिताई को ।
मान कों द्रढाय, औ' प्रतिष्टित[५] कहावें, सिर
सब कों नवावें, कहें हरि परचाई को ।
सुकवि "गुपाल" ब्यास गादि पर बठि भलो
आपनों परायो कर करिवे कमाई को ।
गुनमें द्रढाई जाते सभा दबि जाई याते
बडो सुपदाई इह कांम[६] पंडिताई को ॥

स्त्री वाच्य

दोहा

पहलें पढत पुरान के पचिपचि जात पिरान ।
पंडित के दुप सुनत में अकलि होत हरान ॥

१ है० करे धरे २ है० वदि ३ है० पेले ४ है० जोतिस
५ है० पतिपूत ६ है० रुजगार

कवित्त

सुरुप अहार, होत वास पर द्वार, होत
छार घरबार, होत देसन कमाई कौं।
त्यागनी परति तिय, मागनी परति भीप,
मूरिप[1] कौ सीप देत पावै कछु याई कौं।
कहत "गुपाल" वडो सीपत कठिन काम
राजन के धाम दान जीते मिलै जाई कौं।
पढत सदाई जाके जनम बिहाई, याते—
वडो दुपदाई यह[2] काम पडिताई को ॥

बंदी भाट

पुरुष वाच

[3]सदा राव पदवी मिलत, दबत राव अुमराय ।
चारि बरन आश्रम सकल,[4] नवत सकल जग जाय ॥

कवित्त

पोल्यो कर वस, बाक बानी मुप बोल्यो करैं,
पोयो[5] करै सदा राजु राजन के रोग कौं।
‘समा पस[7]’ लहे, जाइ होइ ताइ तैसो कद
देवी के कहामैं पुत्र, भोगपो करै भोग कौं।
[8]सुकवि "गुपाल" चाप्यो पूट मैं बिरति, और[9]
अड ब्रह्म मड मैं प्रचडन[10] के सोग कौं।
[11]कविता प्रयोग कर जोगि कौ अजोग याते
सबही मैं भलो यह काम भाट लोग को ॥

---

१ है० मूरप २ है० रुजगार ३ है० नहीं है ४ मु० सदा
५ है० तोल्यो ६ है० में तीसरी है ७ है० काहूँ ते न डरें जैसो
८ है० म यह दूसरी पक्ति है ९ है० जाकी १० मु० अपडन
११ है० में "साध्यो कर जोग कर भोग को अजोग याते
सबही म भलो रुजगार भाट लोग को।'

इस्ती वाच

दोहा

बरकति होइ न नैकहू, देइ सु थोरो होइ ।
याही ते भट लोग कों, पाटो उद्यम जोइ ॥[1]

कवित्त

[2]बार न लगति भली बुरी के कहत जाइ
सरम न आवै झोंगो पहरत पाट को ।
सुकवि'गुपाल' न्यारी सबही ते चाल चले,
डर्यो न रहत कछु काम याके बाट को ।
रिस भजे अत, प्रान हत न लगत बार,
बोलत अनत झूंठ काहू को न डाट को ।
पाप नही काट, ढूढं[3] लवे ही को वाट, याते
सब में निराट रुजिगार बुरो भाट को ॥

मागध जगा

पुरुष वाच

सेकरन साधि की मिलाय देत विधि जाके
लिपी रहै सब चली जाति वृत्ति अगा को ।
बस कों बखानैं जिनैं मांगद ही जानैं
आपनोई करि मानैं कबौं पावत न दगा कों ।
सुकवि'गुपाल' भल भले मित्र माल मिज--
मांनी होति भले जैसी मिलति न सगा कों ।
द कै जगा-पगा आय पूजें सब पगा मान
होत जगा जगा, जिजमानन के जगा को ॥

---

१ ह० म यह दोहा नहीं है। २ ह० लहित है। ३ ह० ढूढै

इस्त्री वाच

पोथ्या गाँठि बाँधि पोथ्या राख्या को मिलामें विधि,
तब यहु पामें वहि तोरे नित पगा कौं।
गाँम नाँम ठाँम न मँभारें रहें आठों जाँम
मानें कोई जब तब लिप्यो मिलें अगा कौ।
सुकवि'गुपाल' घर अठ पात दगा कबौ,
सगा कौन काँम यह काँम पिछलगा कौं।
जाय सब जगा, फिरयो करे जगा-जगा, तब
मिलें किहु जगा जिजमानहि के जगा कौं॥

चारन

पुरुष वाच

कोसन लिबामेंन कौं राजु राना जात,
पालिकीन में चढामें तिनें राना सिरपाँव दे।
पढि गीत कवित, करोरन की लेत मोज,
माँमले करत बडे, रापत पराय दे।
झूमें हय बारन, मुद्वारन हजारन ही,
भीर सग रापें चाहें ताकी बात ढाय दे।
ताजी मनि पाइ, देत मूछन कौं ताय, रज-
बारन सिबाय रह चारन ने फायदे॥

स्त्री वाच

गीतन कौं पढत, हूडत रहें देसन में,
बुरे बोलि लेत प्राण देत नेंक बात में।
रागडे सैं हैकें, बडे पहरि जें करायो, कर
जग कौं हत्यार, गहि गहि निज हाथ में।

सम। म गुपाल काहू देवें न सिहात सवही
सौं अकडात ज्ये कगान घनी घात में।
मद मास खात क्रिया बने नही गात ऐती
रहै अतुपात सदा चारन की जाति मे

कवितार्ड के

पुरुप वाच

कविता के रुजिगार कौं हम करि हैं चित लाय।
†ताको सुप वरनन करत, कवि'गुपाल' सुप पाय॥

कवित्त

जोरे नृप कर डरपति[1] रहै जाति सब
सके नाहि कहूँ तकै औरन पराई को।
कविता[2] करत न भरत डांड राजन कौं
पडित समाजन में पावत बडाई कौं।
डूबे रहै रस बस, करें सब ही कौं चित,
जग में अकर करि करत कमाई कौं।
फैलति अबाई यौं गुपाल की सबाई याते
बडो सुपदाई[3] यह काम कवितार्ड कौ

स्त्री वाच

दोहा

कविता के रुजिगार कौं, कबहु न कीजे पीय।
यतनें औगुण वसत हैं, समझि लीजियै जीय॥

---

† 'ताको सुप सुनि लीजियें प्यारी श्रवन लगाय॥' भी पाठभेद मिलता
१ है० डरपत   २ है० वेतीर   ३ है० सबही ते भलो रुज

कवित्त

नष जस गंवो, परदेशन को छैवो,
अभिमानिन के जैवो, पोरि परन पराई को।
रस अुरझवो, गण गण ते डरैवो, बहु
कवित बनैवो, यह घर है झुटाई को।
वुद्धि को अढवो, परैं अवपरं[1] चुरैवो, राज—
सभा जस लैवो तब पवो कछु याई को।
कहत 'गुपाल कवि' रायन रिझैवो, याते
सबही मे कठिन घमबो कबिताई को ॥

कुकवि

पुरुप वाच

कविता में समझे नहीं रेपै सब सौं बाद ।
है क कुकबि सु सुकवि बनि, लेत सभा में स्वाद ॥

कवित्त

पाठ सो न जानि, अक्षराथ को न ज्ञान, कविता
सौं पहचानि न, घमड मैं सबे फिरे ।
पिंगल प्रमानें, छद भग न पिछानें, जानें—
और को कवित्त तोरि जोरि के मने फिरें।
भनत "गुपाल" गुन दूपन बपानें कोन
असे फोरि झोरि पोरि पोरि में घने फिरें ।
और को न मानें आप झूठी बात ठानें, अब
असे कलिकाल में कवीश्वर बने फिर॥

---

१ एक है कैं मन दबो

स्त्री वाच

दोहा

कठिन कल्पना करत नित, जपत कष्ट को नाम
याते कठिन 'गुपाल कवि' कविताई को काम ।।

कवित्त

कहा भयो कठ करि लीने जो कवित्त, वित्त
अर्थ में न दीयो, जिनि पाई कहा धूरि है ।
कहा भयो साठे, कसी गाँठ तुक गाठि लीनी,
साठो सो लगाइ करि आपरन पूरि है ।
कहा भयो ग्रंथ बिन समझें अनेक बाचे
पायो नाहिं मत कविरायन को भूरि है ।
सुगम न जानो तुम साची करि मानो यह
कहत 'गुपाल' कविता को घर दूरि है ।।

नई काव्य

पुरुस वाच

जग में नाम चलाइहो, निज कृत करि कछु काव्य ।
कबि कोविद राजी करहु, धरि नवीन कछु भाव ।।

कवित्त

नई नई लगति जुगति, अनुप्रास बहु-
बरण मिलाप में रसीलो रस ताको है ।
नाना धुनि, व्यंगि अर्थ, आपद अनूप जाके,
सुनत ही होइ कबिरायन के भायो है ।
दूषन रहत, नए भूषन सहति, सब-
ही को मन गहत, कहत जब जाको है ।

सुघर सभा को, चरचा को, मत जाको, कवि
कहत 'गुपाल' कविताई नाम याको है ॥

स्त्री वाच

दोहा

जो प्रबंध आदर्‌यो नहिं, सुघर सभा के बीच ।
कविता करि ता कविहि नें वृथा कर्‌यो श्रम हीचि ॥[1]

कवित्त

कवि को न नेम, प्रेम जामें नर नारि को न
कोऊ कग-मार एक गुण को गहा भयो ।
पंडित समाज आदरी न कविराज महा–
राजन में जाइक न जस को लहा भयो ।
हरि कों न नाम, आई काहू के न काम, वृथा
बकि गाम गाम ते कुनामहिं महा भयो ।
कहत 'गुपाल' पढि मारत जे गाल कवि
ऐसी कविताई के बनाए ते कहा भयो ॥

पुरुस वाच

काव्यगुन

भगति मुकति पावै बडो, नाम जगत में होइ ।
कविराजन में मान होइ, काव्य पढे जो कोइ ॥

---

१ इसमें तुलसी की समीक्षा-दृष्टि की प्रतिध्वनि है—
जे प्रबंध बुध नहिं आदरहीं ।
सो श्रम बादि बाल कवि करहीं ॥

कवित्त

गणागण छद गुण भूषन औ' दूषन के
जान रस भेद धुनि व्यगि लक्षनाई के।
नायक'रु नायक सुरति सुतात[१] हावभाव
चेष्टा कम दूती सषा औ' सखाई के।
समझें 'गुपाल' रितु, काल, दरसन मत
मान, मान-मोचन औ' विरह दसाई के।
बूझ सब आई, परै दस में अबाई, बुधि
बढति सवाई, सदा पढे कविताई के ॥

धन कीरति औ' अति आनँद देति, दुरत्यय दुष्य दलावति है।
कवि पडित राज समाजन में नृप जोगहि जो गुण थावति है।
तिय ज्यों उपदेस कें सत्यहि के औ कवीश्वर भू में कहावति है।
रसिकँ करिक 'श्रीगुपालजू' को कविता हरि ओर लगावति है ॥[२]

स्त्री वाच

कवित्त

करने परत ग्रंथ सगृह अनेक कठ,
रावने परत हु कवित्त सब काई के।
राज सभा बीच बाद रचनों परत, पूरे
करणे परत जते प्रश्न चरचाई के।
सुकवि 'गुपाल' निज कृतकरि काव्य अथ
जानने परत काव्य आपनों पराई के।
यह वढ़िढताई, बुदधि बढत सवाई, तब
होति है कमाई, कछू पढ कविताई के ॥

---

१ सम्भवत यह सुरतात है।

२ इसमें मम्मट के काव्य प्रयोजन की झलक है- 'काव्य यशस, अर्थकृते व्यवहार विदे कान्ता सम्मित उपदशयुजे।' साथ ही आध्यात्मिक उदय की ओर भी सकेत है।

पुरुष वाच

वादी कवि

एक वन न कहूं मूप सों गुनी ओगुनी डाले मजेज मे मारे।
जो गुनी आय क काई मिले तिन सों वदि वाद मचावत भारे।
सांचो न मानत झूठिदे ठानत लरटी ए परतार संमारे।
ऐसेन सों तो 'गुपाल' कह हम जीतहु हारे औ' हारेहु हारे॥

स्त्री वाच

जानें न कवित्त चरचा की रीति-भांति, सांचो–
बात के कहत ही में हाल पोजियतु है।
देपत ही जरे जात गुनिन के गुण, सुनि–
तिन के वचन ही सो हियो हींजियतु है।
आप कहि जानें, नही और की कौं मानें, नही
चोज कों चिछानें नहीं हियो भीजियतु है
बैठि कें सभा के बीच, सुकवि 'गुपाल' कवो
भूलिकें न असन सों बाद कीजियतु है॥

पुरुष वाच

लिखाई[१]

पुरुष वाच

कबिता के रुजिगार ते, बरज्यो तेंनें मोहि।
करहुं लिपाई तास सुप बरनि सुनाऊं ताहि॥

---

१ है० लिपाई को

कवित्त

हरि गुण गीर, पहचानि गुणमानन सो,
सुनन कों ज्ञान बुद्धि परै अधिकाई में ।

जत्रन में, मत्रन में, तत्र में, गति होति
रहत सुतत्र हू इकत मनभाई में ।

जानत 'गुपाल' वहु ग्रथन को मत घर-
बैठे रुजिगार होति जोरो नहि याई में ।

स्वारथ की सिदधि, परमारथ की रदधि।
अनेकारथ की सिद्धि, होति लिपत लिपाई में ॥

रती वाच

दोहा

लेपक के सुप तुम सुने, दुप्प सुने नहि कौन ।
नैन वन कटि ग्रीव वर पुरसारथ की हांनि ॥

कवित्त

न रि रहि जाति, नहि बात कहि जाति, वहु
देह दहि जाति, जोर घटै करगाई की[1] ।

भोजन पचै ना, पास आदिमी रुचै ना, कछु
नफा हू वचै ना, ऐसी करत कमाई की ।

नैन जल भरें, औं तिव्र दूषि परै, जब-
दिन भरि अरै, तब पामें कछु याई की ।

पोम पर्यो जाई, सोई जानतु है पायो, यहु[2]
पहन 'गुपाल' कौन कठिन लिपाई की ॥

---

१ हैं० की २ है० इह

रासधारी

पुरुष वाच

रासधारि ह्वै करहुगो[३], जोरि मडली रास।
गाय बजाय रिझाइ क, धन लाऊँ तो पास॥

कवित्त

सोँहन सरूप, बडो लोयन रहत नौन,
भोँहन नचाइ, मन मोहै नर नारी कौँ।
स्वामीजू कहामेँ, औ' हजारन के लामे माल
हरि गुण गामेँ करेँ सुकरम भारी को।
सुकवि 'गुपाल' मिल पैवे कौँ नगद माल
लाल बनि सदा मजा लेय[४] सब ठारी को।
जामेँ बात भारी, देह रहति सुधारी, याते
बडो सुखकारी, यह काँम[५] रासधारी को॥

स्त्री वाच

कवित्त

*जाति धरै नाँम, नाम होत बदनाँम, करै
घर के हरज काँम, रहै नाँहि नारी को।

---

३ है० करूँगो ४ है० लेत ५ है० रुजगार

*है० प्रति में इस कवित्त से पूर्व यह दोहा है

'स्वामी बनि करि मडली, भूलि करी मति रास।
देस छोडि क होइगो, परदेसन म बास॥"

जेती है नफहिं[1] ताहि पात हैं समाजी लोग
सेबनो परत परदेस परद्वारी को ।
गावत, बजावत[2], नचावत[3], में लागे लाज,
द्रष्टि परि जाय जब कोऊ हितू यारी को ।
कहत गुपाल' होन पछिम दुआरी, याते
बडो दुप कारी यह काम[4] रासधारी को ।

गवैया

पुरुष वाच

कर न नदीनी मडली, होइ गवैया गाइ[5] ।
तानन को घन लाइहै[6], सुजन समाज रिझाइ[7] ॥

कवित्त

हरि-गुण गबो प्रिया प्रीतम रिझैबो, नित
भक्ति उपजैबो, नैवो हिय उमगैया को ।
सँकरान नर नारी जोवत रहन मुप
देन हैं बडाई अरु लेन हैं बलैया कौं ।
है के गुनमांन मान पावै गुणमानन में
कानन में तान गांन सुप तरसैया कौं ।
कहत 'गुपाल' भलो आपनो पराया यामे
यातें यह भलो रुजिगार है[8] गवैया को ॥†

---

१ है० नफा हाइ ताय २ है० बतावत ३ है० नचावत ४ है० रुजगार ५ है० गाय ६ है० लायहै ७ है० रिझाय ८ है० है

† इसमें दूसरी पक्ति है० की प्रति मे तीसरी पक्ति है और इसमें तीसरी पक्ति है० प्रति मे दूसरी ।

स्त्री वाच

दोहा

गबे के रुजिगार कों रामहि कीजियै कत।
सुनियें कान लगाय कें, याके, दुग्य भ्रात ॥

कवित्त

आगे वैठि गावै ओ' सभया लौं बताव भाव
तब कछु पावै यों रिझावत रिझैया कौं।
स्वाद कौन जानें, बडी साघना न ठानें, कठ-
बहू न ठिकान, पाटे भोजन पचैया को।
ढीठताइ धारि कें, पराए दुवार द्यार होत
ठटठा करवाय, तान चूकत घबैया को।
कहत 'गुपाल' दया दया करि आवै, याते
सबमें कठिन रुजिगार है, गवैया को ॥

इतिश्री दपतिवाक्य विलास नाम काव्य-सास्त्र प्रबध वणन नाम
दसमोविलास ॥ १० ॥

ग्यारहवाँ विलास

(भिक्षा प्रबंध)

पुरुष वाच

दोहा

गैंवे के रुजिगार ते, बरज्यौ तैंने मोद ।
भिषुक के रुजिगार के सुष्य सुनाऊँ तोइ ॥ *

कवित्त

आवै नाहि चोट, गढकोट ओट तकै न,
निलाले पात रोट, पोट करत न ज्वारी को ।
चहियै जमान, सब देस जिजमान, भलो-
पावै पान-पॉन जोष्यो ज्यॉन न अगारी को ।
घर घर यार, चाहै हाथ न हथयार, स्वाल
करत ही त्यार, प्यार होत नर नारी को ।
कहत 'गुपाल कवि' मेरे जॉन में तो याते
सब ही त भलो रुजिगार है भिषारी को[1] ॥

---

* है० प्रति मे यह दोहा है-
स्यानप के रुजगार ते वरज्यो तैनें बाँम ।
भिष्युक को सुष सुनिय नित भीष मांगिहैं गाँम ।

१ है० में यह पक्ति इस प्रकार है
"कहत गुपाल आजुकाल्हि के जमाने बीच
सब ही ते भलो रुजगार है भिषारी को ।"

स्त्री वाच

सोरठा

काके द्वारे जाय, कहु कि हमकों दीजियै ।
मरि जय विलखाय, जीयत भीख न मांगियै ॥

कवित्त

राखत पराई आस, चित में उदास रहै,
सतत विनाश औ' निवास दुख भारी को ।
प्रीति हरकति, बरकति नहिं होति, आगू-
आदर न रहै निरलज्ज सहै गारी कों ।
लैबो होत इहाँ, आनसी में अहाँ दनो दिन
रनोइ खराब, चित चैनो न अगारी कों ।
डोल द्वार द्वारी, याम यह बडी ख्वारी, याते-
कहत 'गुपाल' कांम कछु न भिखारी को ॥

प्रोहिताई

पुरुष वाच

पुजबावै लै पाँय, पतिनन को पावन कर ।
पल पल प्रीति बढाय, प्रिया प्रोहिताई करत ।

कवित्त

जाके हाथ है कै सब होत काम कारज को,
सदा पुन्य दान सदी गमी औ बधाई को ।
सबते पहल, पाइ[1] पूजियत जाके आइ,[2]
ताके दिये बिन धम्म[3] होत नहिं काई को ।
'सुकवि गुपाल' जिजमांनन के मांन भलो
पाँन पाँन दक[4] सनमान मिल ताई कों ।

---

१ है० पाय २ है० आय ३ है० धम ४ है० दैकें

मानें ममिताई, होइ हिय म हिताई, याहे-
बडो सुपदाई यह काम पोहिताई को ॥

स्त्री वाच

सोरठा

प्रोहित हूजे नाहि जो जिजमान कुवर सो।
निंद्य कहैं सब ताय[५], गति न लहै परलोक म ॥

कवित्त

रहनो परत दुप सुप जिजमान के में,
दान के बपत[६] लाग देत बुरवाई गों।
जाको घान पाय, ताके पापन को भागी होइ,
बद औ' पुराण, यातें निंद्य कहै ताई को।
कहत 'गुपाल कवि' भले बुरे कमन में
सबते पहल प्राग लनों परै जाइ को।
जाइ[७] के निलाई, गों कामाइय किनाई, क्यों न,
ठहरत ताई क पसा प्रोहिताई को ॥

गहुनावा

पुरुस वाच

होइ कुटम प्रतिपाल, माल मिलै यामें[१] घनों।
याते 'सुकवि गुपाल' गहुनाई करिहै प्रव +॥

---

५ है० याहि

६ है० बपत वृदाबन वाली प्रति म लिपिक की भूल से वत लिखा है।

७ है० जाय

१ है० जामे

+ है० प्रति मे पक्तियो का विपर्यय है।

कवित्त

आय आय सब, व्रजवासी जाँनि पूज पाँय,
बात सही होति है सदाँ काँ प्रोहिताई मैं।
तीरथन न्हात, कथा करत विष्यात, भले
भोजनन पात, ज न मिल पहुनाई मैं।
'सुकवि गुपाल'[२] मिलिजात माल, हाल यामैं,
भागि के जगे मैं तो निहाल होत याई मैं।
करैं मन-भाई, कछु राई न दुहाई, यात
सब ते सबाइ है कमाई गहुनाई मै[३]॥

स्त्री वाच

दोहा

कवि गुपाल बहु कठिनि है गहुनाई कौं काँम।
भ्रमँ देस परदेस में लेइ[४] न नेंक अराम॥

कवित्त

सेयौ कर राह, औ' गन न भूप प्याह जब[५]
आव कछु आह, न उमाह कछु याई[६] मैं।
डोल रहै भारी, कम तोल रह न्यारी, परदेसन
में ष्वारी, बँधो जीबका न ज्याई म।
कहत 'गुपाल' जब मिलैं कछु[७] माल, बाध
बातन के झाल, जब[८] आव दाम्र धाई म।
छोडि क लुगाई दहुताई राति जाई,
होति बडी कठिनाई ते कमाई गहुनाई म॥

---

२ है० कहत गुपाल ३ है० बडो सुषदाई रुजगार गहुनाई कौं।
४ है० लहै ५ है० तब ६ है० याही ७ है० जब ८ है० तब

चौबेके

पुरुस वाच

श्री बराह अवतार नृप महमा गावत आप ।
याते माथुर लोग को जग में बडो प्रताप ।।

कवित्त

रावत है सोप बडो, पाइवे पहरिवे को
बठक रहति सदा जमुना समीप की।
'सुकविगुपाल' ये कहत में न चूके कहूँ
अकति न बात बडी रावत ह टीप की।
गाजे श्री बराह, द्विजराजन के सिरमौर
जिनके अगारी विद्या चले न हराफ की।
सेवत महीप सान षड नव दीप याते
जाहर जहूर जोति माथुर महीप की।

स्त्री वाच

दोहा

ओरन की पोटी बहुत, अपु बातन को पात ।
याते सब ही म बुरो, यह चौबिन की जाति ।।

कवित्त

जाको घी7 धाय सदा ताई को विगोयो करें,
पोटी के कड़ुया जे सुभाय रहै रोब को।
पूदत रहत सदा देस परदेस बने
रहैं मसपरा जिनमान पे रिझाव को।

'सुकविगुपाल' और ग्र ह्यानें न देखि सकें
बडे बुरगात, सो लगाय रहें देवे कौं।
सुर सो न सोव, पर्न्न रे दिन पोर, याते
सबही में न्यरो रुजिगार यह चौबे को॥

पुन

अफ साहो सोधि के, असूझ कर ब्याह सब,
बदले उहनि बेटी के ते व्याह जात हैं।
ऐसी परदेसिन कौं घर में घुसाइ कें—
रिझाइ लइ सबै नहि नैंक सरमात है।
'सुकवि गुपाल' घर टहल करत आप
चौबिन की सदा सेर राख्यो कर बात ह।
पति गह पात सब देखे जारे जात, याते
सब में कुजाति यह चौबिन की जाति है॥

घटमगा

पुरुष वाच

दछिना कौं मागयो कर जपि जमुना को नाम।
याते यह सब में भलो, घटमगा कौ काम॥

कवित्त

(ज) सदाही रह तट तीरथ के सुभ कम सुरें सतसंगिन कौं।
नित न्हात औ धोवत देख्यो कर, सुमदा तरुनीन के अगन कौं।
परदेसो' रु देसो त ल दछिना, हरि नाम जप ल उमगन कौं।
यह 'राय गुपालज' याते सदा रुजिगार भलो घटमगन कौं॥

स्त्री वाच

सोरठा

यक कौडी के काज, नगा है दगा करै।
याते बडो निलाज, काज सु घटमगान को॥

कवित्त

माँगन में बोली, ठोली डारयो करै सबही पै,
छेर अरु कोनी पर रख्यो करै दगा कों।
अरनो परत मोर ही ते जाय तीरथ पै,
काटिब को रहै डर बीछी औ' भुजगा को।
'सुकवि गुपाल' घाम सबते जबर फली—
मूत नहि होत लेत जमुना औ' गगा कों।
बने रहै नगा, राचि जाति सौ अरगा, याते
बडो मति भगा यह रोग घटमगा को॥

पुसामदी

पुरुष वाच

छोडि सबै रुजिगार, करहु पुसामदि आइ कै[1]।
वस करि कै नर नारि धन सचित करिहौं बहुत॥

कवित्त

बड हुरमति अति आवति है[2] मति, लाल
बचो रहै नितप्रति पूव पाछे पीछे ते।
दुप-सुप परै, दब औदन में सरै काम,
रापत हमेश हित ह[3]पिन हौंछे ते।

---

१ दै० कैं २ दै० है ३ दै० हरषत

'सुकविगुपाल'[४] माल मिलै पै निहाल होत,
भजे परिजात और अुद्यम के मोअ ते ।
या मदि में आमदि, सुदामदि को होति, पुम-
आमदि को रहति पुसामदि के कीये ते ॥

स्त्री वाच

सोरठा

या आमदि के काज करहु पुसामदि जाइ[५] क ।
हिय मानि कैं लाज[७] चुपु[८] करि घर मैं बैठियै ॥

कवित्त

साँचरु झूठ को हाँ करनी जो सदा कहनो महुँ सोमिली बातें ।
पापरु[९] पु य में सग रहै सदा[१०] रापत राजी सु आपनी घातें ।
'रायगुपाल्जू' देय कछू जब, डोलत पाछ लग्यो दिन रातें ।
याही ते या जग मांझ बुरो रुजिगार पुसामदी को यह यातें ।

रोजीन के

पुरुप वाच

रोजीना बधबायबो गुन महाति ते होत ।
याके छूटते सदा, बहु दुष होत उदोत ।
लालो रह न अेकहू अस करत दिन जात ।
याही ते जग में बडो रोजोना की बात ।

कवित्त

मिलिबो करतु ह सपूत औ'सपूतन को
ब्याज मारो जसें बढयो दीसे दिन राति हैं ।

---

४ है० हाल ही गुपाल ५ है० मिलते ६ है० कौन की ७ है० लजि ।
८ है० चुप ९ है० दुप्पर सुप्प १० है० गिरि

'सुकविगुपालजू' कमानों न परत, कछु[1]
जानों न परत सो निलाले रहैं गात हैं।

सपति कों पावै, गुन कदरि बढावै, ऐसे–
बडी करवावै, फूले गात न समात हैं।

दाँम रहै हाथ, पात रहै पीडो सात याते
जग में विष्यात रोजाना की वडी बात हैं।

स्त्री वाच

कवित्त

लगत अबेर, जानों पर वेर बेर, कछु
वरकति होति पात पियत न याके मैं।

'सुकवि गुपालजू' दिमान औ' मुस्सदिन[2] क
देनी पर घूस, काम हाथ होत जाके में।

होत है हराम, और है सक न बाँग, जब
पटत न दाँम, दिन जायो करै फाके में।

काँम रोजीना के दुप देवि रोजीना के, आय–
जाय रोजीना के, रुजिगार राजीना के म।।

इतिश्री दपतिबाक्य विलास नाम काव्य भिक्षा प्रवध
वणन नाम एकादसो अध्याय। ।। ११ ।।

---

१ सम्भवत यह कहुँ है।
२ लेखक ने भूल से 'द' के द्वित्व के स्थान पर 'स' का द्वित्व कर दिया है।
इस प्रकार पाठ 'मुसद्दिन' होना चाहिए।

द्वादश विलास

(मदिर–प्रबध)

अथ गुसाईंन सुख

पुरुप वाच

दोहा

धन दैके पधरामनी करत राउ उमराउ।
घर बठै पूजत जगत, गोस्वामिन के पाँउ।

कवित्त

ईश्वर को रूप, भूप सेवत अनेक जिनै,
राषत न उर में भरोसौ कहो काई को।
आसन कौं डारि करि जाय मांझ बठ जब
नबत अलाका रूप दबत ही ताई को।
'सुकवि गुपाल' ब्रज रज कौ बहुत ध्यान,
आमें चली भेंट घर बैठ सदा ताई कौ
पद्धत सबाई, भोग भोगत सदाई, याते
बडो सुषदाई यह काम है गुसाई को॥

स्त्री वाच

कवित्त

आमदनि पांच, पै पचास कौ परच राषें,
ब्याज झगरे में धनजात सब जाई कौ।
'सुकविगुपालजू' डिफार बडो राष सदा
देस परदेसिन की पात है कमाई कौ।

करनी परति तन काष्टा अनेक, कठी–
दुपटा, प्रसाद, देनों परे सब काई कौं।
होतहु गुमाई, भरे रहत गुसाई याते
वडोई गुसाई को य करम गुसाई कौ।।

भट्ट

पुरुष वाच्य

दोहा

मोर-सांझ कीर्तन कथा, सतसगति दिनराति।
पूजा पुन्यरु पाट में भट्ट को दिन जात।।

कवित्त

बांचत पुराण, गुन मान सनमान, भलो[1]
पात पान-पान दान मान मिलै[2] तो को हैं।
करत 'गुपाल' वरषोत्सव समाज, रास,
प्रभु को लडाइ, सुप देत सब ही को हैं।
अनगण घन, बातसल्य में मगन मन,
करत पवित्र जन जन के जी कौं हैं।
ब्रज भाव टीको, सब अर्पे हरि ही को, याते
सबही में ठीको कर्म भट्टन को नीको हैं।।

भट्ट

स्त्रीवाच

है समर्पि, कृष्णारपन तन मन धन करि देत।
तबै भट्ट है क क्छू, या जग में जस लेत।।

---

१ मु० आछो। २ मु० होत दान मान ती को हैं।

कवित्त

माल पात जट्ट, दिन जात सट्ट पट्टहि में,
(पटाही में) पटकी रहत बडी भीरन की ठठठ को।
'सुकविगुपालजू' कमात जेते दाम, तेई[1]
करिकै इकदठ जात बनिया[2] की हृदठ को।
अपनी परति[3] है समपनी देह, गट्ट–
पट्ट है सक न घर रहै पट्टपट्ट को।
लागे रह पट्ट झाकी[4] होति झट्ट पट्ट, याते–
सब में निपट्ट कम[5] कठिन है भट्ट को ॥

अधिकारी

पुरुष वाच

सत महत दब रहैं, जगत जगत में जोति।
हरि मदिर में जाइ जब, मुखिया मुखिया होत ॥

कवित्त

आमदि औ'खरच हजारन की रह हाथ,
मार्यो कर माल, बात कहिकैं हुस्यारी की।
'सुकवि गुपाल' कोई मामले रहत हाथ,
पाव मुपत्यारो कभू बात की तयारी की।
दुपटा प्रसाद, रोझ बूझ लैन दन, ताकै
हाथन है आयो कर भेंट नर नारी की।

---

[1] मु० सोई [2] मु० बनिर
[3] मु० करत समपण अपन के दह गट्ट पट्ट पर ह व मन न धर पट्ट पट्ट का।
[4] मु० पूजा [5] मु० काम

दवत पुजारी त्य रावत भँडारी, होति
मंदिर में भारी भुपत्यारो अधिकारी की ॥

दोहा

स्री वाच

जाके दाँम पटै न ते दया करै धरकार।
अधिकारिन की रातिदिन, माँटी रहति पुआर ॥

कवित्त

रापनी परति पर बस्ती सब बातन की
आमदि परच जर्मा सौज की सँभारी कौ।
'सुकवि गुपाल' रहैं पगरे अनेक, वर्णो
परै सनमान नित नभ नरबारी कौ।
सेबक सती की यादि रापनो परति कठी
दुपटा, प्रसाद, देनो पर सब ठारी कौ।
लोग देत गारी, औ'तगादो रहै जारी, याते
बडो दुपकारी यह काँम अधिकारी कौ ॥

सिरकार

पुरुप वाच

मंदिर में सिरकार जब गोडियान की होत।
भाव भगति हिय में बसै, जग में होत उदोत ।

कवित्त

चाहै ताहि रापै, चाहै ताही कौं निकारि देइ,
रापै गुलजार घर नगर बजार कौं।

कवित्त

जाग पिछराति, धरा रहै दिनराति, बड
सीतन में न्हात, गात रहै न सुपारी कों।
सुकवि 'गुपाल' रैनों परत अपस, पुनि
पामनो परै प्रसान्, सबते पिछारी को।
सेवक समाजी, कविराज, द्विजराज, जाय–
देइ न प्रसाद, सोई दीयो करै गारी कों।
छूट घरवारी, पड़ो देख्यो करै नारी, याते
बड़ो दुपकारी यह काम ह पुजारी को॥

रसोइया

पुरुष वाच

मब सौज कर म रह, घर में होइ मुपत्यार।
याते रसोईदार को भलो सु यह रुजिगार॥

कवित्त

भोजन सो छकि कें, रसोई माँझ बैठे, मन
भर्यो रहै, कामिना रहति नहिं कोई हैं।
सुकवि 'गुपाल' जासों सबको रहत प्यार
कबही बिगार करि सकत न कोई हैं।
मार्यो करै माल, भलो बुरो कर हाल, नाना
भातिन के स्वाद, सदा लीयो करै सोई है।
करत रसोई, जोई चह सोई होई, सदा
जाके हाथ लोई, ताके हाथ सब कोई है॥

स्त्री वाच

दोहा

काई दुप सुप परत जब, भरम धरत सब कोइ।
याते रसाईदार को, बडो दुप तन होइ॥

कवित्त

जरयो करै हाथ, देह गरमी में भुजयो वर,
'धुआँ घुमडत जब, आगिन सौं सूझे ना।
बडो कष्ट पावैं, सो पसीनन ते न्हावै, पालै
भोजन न भावै, तव बदन पै पूजै ना।
'सुकविगुपालजू' रसायनि को काम, जाके
करत में कोऊ अवरस ह्वक छूजै ना।
निसदिन धूज, कोऊ दुप की न बूझै, याते
राजन के मंदिर रसोईदार हूजै ना॥

कुतवाल[1]

पुरुस वाच

'कविगुपाल' कुतवाल बनि, गहरे मारत माल।
करि कुटब प्रतिपाल नित, ग यो रहत है लाल॥

कवित्त

सत औ[२] महतन के रहै बडी वञ्ञ, सदाँ
आदर अधिक, भागि जागतु है माल को।
लैत अरु देत मुपत्यार सब ही के होत,
जाको[२] कबो[3] बोल पाली परै न सवाल को।
आमदि[४] दरफ[५] हरि-मंदिरन रहै, गहु–
नावा ब्रजवासी सब अरयो[६] करै प्यार कौं।
कहत 'गुपाल' मल भले मिलै माल, याते
सवमें बिमाल, रुजिगार कुतवाल को।

---

१ है० घेरन की कुतवाली
१ है०—'रु—२ है० ताको—३ है०, मु०, कहूँ ४ है०, मु०, आमद
५ मु० रफन ६ है० मु० नित होय (हात) उपकार भजे दीन प्रतिपाल को।

स्त्री बाण

दोहा

कुतवाली पै परत मन जने जने की लेत।
राति दिनां डोरयो करत तब कछु यार्को देत ॥

कवित्त

राति दिन यामें होंनो परत हिरान, नित
डोल घर घर कहूँ 'पोनो' जब दीजियै।
गारी गरा दई, बाली डारत रहत लोग,
जैमें–जठिब में जाय भीतर न लीजियै।
रोकत में पाप, लगै दीन की सराप, मूल–
चूकें लेत दत में महत जात पीजियै।
सुकवि 'गुपाल' कछु और कर जं जिय, प
सत के घरे की कुतवाली नहिं कीजिय ॥

इतिश्री दम्पतिवाक्यविलास नाम का ये मद्र प्रबंध वर्णन
नाम द्वादसो विलास ॥ १२ ॥

त्रयोदश विलास

(देवालीन कौ रोजगार)

पुरुष वाच

मत समागम हरि भजन दरस भोर अरु साझ।
यतें सुष नित ह्वत है हरि देवल के माझ॥

सदाई भँडारी के भँडार रहैं हाथ ओ
रसोइका के हाथ सब रहति रसोई है।
परच को रहे अधिकार अधिकारी हाथ
फौजदार हाथ भेंट अब सब सोई है।
ऊार के काम सब रह छरीदार हाथ
पूजा को सुगम तो पुजारी हाथ होई है।
सुकवि गुपाल भावभक्ति उर होइ सदा
ऐसो रुजगार तो त्रिलोक में न कोई है।

स्त्री वाच

भगत भाव मन में रहे इंद्रिय जितनिहि काम।
कवि गोपाल तापै बनै देवालन को काम॥

देत अरु लेन में भँडारी के हिसाब है हो
घेर बडो रहत पुजारी को सदाई है।
छरीदार भये डेला डोली में पगव धुँआ
आगि को रसोइया को दुप अधिकाई है।

अधिकारी भये प रहैगो बोझ भार सब
फौजदार भय होगी आफति महाई है।
चाहिए 'गुपाल' भाउ भगति भलाई याते
यते रुजगारन में येती कठिनाई है॥

ब्राह्मण के रुजगार ते बरज्यो तैने मोहि।
क्षत्रिय के रुजगार के सुख सुनाऊँ तोहि॥

अथ साध प्रबध महताई

पुरुष वाच

हाथ करामाति, औ' जमाति मानें बात
दिनराति प्रात जात जाको हरि चरचाइ में।
सबही सौं हित, परमारथ निमित्त, भाव
भगति[1] में चित्त, औ ममित्त नहिं काई में।
'सुकविगुपाल' भले माल पाय लाल होत
हाल ही निहाल है पुस्याल रहै याई में।
बढ़ें साधुताई नव राजा राधु आई, याते
सबते सबाई ह कमाई महताई में॥

स्त्री वाच

बनि है नही महत बनि तुम प बडो महति।
साचो जोई महंत जा सब की करै महति[2]॥

कवित्त

झूठ-साँच बोलि, धन लेत सती सेवग को,
बिना भक्ति-भाव, जमलोक गय भूजियै।

---

१० भगतिहि २ है० मे यह दोहा प्रथम है

मिलिकि, मिरासि, कुआ, बाग, औ' तियासन के
रगरे अनेकन के झगरे तें घूजियै ।
'सुकबिगुपाल' काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद
माया जाल परे न पसारि पाँय सूजियै ।
जाइ के यकत,[3] टूक माँगि जीजै अत अै पै
सत की जमाति[4] को महत नहिं हूजियै ॥

महत कौ चेला

पला को बल होत पुनि, मेला चूतर होत।
मदिर माझ महत को चेला होत अुदोत ॥

कवित्त

देषत ही गादी मुष्त्यार होत मदिर को,
गुरुन को माल खूब मिलत अकेला कौं ।
'सुकबिगुपाल' सदां रजई करत, ओढि
साल औ' दुसाला सो झुकाय कड हेला को।
कुलप्रति पाल भागि जगत विसाल वडी
देह होति लाल हाल हो वल पेला को।
वनो रहै छैला मिल भोजन सवेला याते
कह्यो जात सुष न महतन के चेला को।

दोहा

छोडि अकेला कुटम यों रहै मोडन के माहिं ।
याते जाइ महत को चेला हूजै नाहिं ॥

कवित्त

कुटम कबीले के न काम को रहत कछू,
होत निरमोही सुष पाव न यकत कौं ।

---

३ है०, इकत ४ है० जमाति

देपि देपि जर्‌यो करे, भाई गुर भाई,
दुप दाई सब होत, मद करत अनत को।
'सुकविगुपालजू' रजोगुनता आवे दिन-
टहल में जाव, भाव रहतु न सत को।
कबी न निचत, भाव भगति न वति, ऐते-
दुप होत अत, चेला भअे तें महत को ॥

महत की चेली

सोज अनेक प्रकार की भरि भरि दौना पाति।
काहू सत महत की तव चेली ह्‌वे जाति ॥

कवित्त

साजि के सिंगार, राप सब ही सों सली कांम
वद नहिं रहे जाकौं रुपा औ' अधेली को।
'सुकविगुपाल' सदां सांझ औ' सवेली सो
[illegible] रहे हार पहरि चमेली को।
जाय परजक प, निसक भरि अ[illegible] मजा
लीयो कर मंदिर में करि [illegible]रि वेली को।
रहे अलवेली, बांधि करिहा सूं थली, याते
कह्‌यो जात सुप न महतन की चेली को ॥

स्त्री वाच

सोरठा

तप्यो करत सब ताय, कांम तपति ह्‌व के सदां।
अत जाइ पछिताय, चेलो भअे महत की ॥

कवित्त

हार्‌यो कर लोग जापें टॅक औ' मजार, नित
धर्‌यो कर नाम, जाकौं जतो लोग सलो के।

'सुकविगुपाल' मिलि माई गुर-माई सदा,
हवै कैं दुपदाई प्रांन लेत है अकेली के।
करै गर्मपात, होति हत्या दिनरति, सुप
सतत को जात, दूरि रहति हवेली के।
रहै रेला-पेली बांधि करिहा सूं थैली, याते
कहे जात सुप न महतन की चेली के॥

महतानी के सुप

सुप सांनी निसदिन, कहैं भगतानी सब कोइ।
मुखिया साघ महत की, महतानि जब होइ॥

कवित्त

बनी ठनी रहैं मिसी काजर लगाइ फूली
रहै मन असे फुलवारी ज्यौं बसंत की।
'सुकविगुपाल' कोकिला सी मिलि गामें रुनु-
झनु झनकार करे भूषन अनंत की।
मेला औ' तमासे रास भजन समाज देषि
दरस परस पूजा करे साघ संत की।
राजन की रानी, बनी रहै ठकुरांनी सदा,
रहै सुपसांनी महतानी है महंत की॥

स्त्री वाच

दोहा

भगतांनी निसदिन रहै भगतानी बनि सोइ।
महत की महतांनि ते, भली कहै नहि कोइ॥

कवित्त

जातिपाति कुटम के कामकी रहे न, अंत
भोगति नरक हत्या करि जति की।
दंपति कौं संग नहीं, संतति कौ मानें सुष,
वपति रहति भय मानि साध संत कौ।
नामनाँ न चरू पूरी कामना न होइ, वह
पाछ दुप पाव बूझ रहति न तत कौ।
रहति यकंत, जाको कोऊ नहिं गत, दुष
पावति अनत महतानी ह महत कौ॥

मुषिया

पुरुष वाच

दबै घरे जासौं सकल महमा मंदिर बीत।
सत महतन क सदा मुषिया मुषिया होत॥
पाय आप पाप सबहि, मुषिया मुष सम जानि।
दनहु में लगि रहहिं तहँ, काढ़ि लहइ सुष आँनि॥

कवित्त

अुतसव रसोई मेला पचरु' पँचायति म,
लीयौ कर पकरि सुदीन दुषियांन की।
'सुकवि गुपाल' गादी वठत महत जब
पूछि करौ वंधति महत पुषियान की।
जाके आप पस होनि, काहू की न बात, वठयौ
मंदिर म पवप कर्‌यौ कर रुषियान कौ।
टावि सुषियान, बठि वोत मुषियान
सव मान मुषियान, मुषियान मुषियांन कौ॥

स्त्री वाच

दोहा

दीयो भरत परेन के सब बुरवाई ताइ ।
याते काहू मद्र को मुपिया हूज नांहि ।।

कवित्त

पच औ'र पंचायति, रसोई अुत्सव मांझ
रिस रहुँ जाको ताकी बात नहि बूझिये ।
'सुकवि गुपाल' पनवारन के लेत देत,
सांझ लो सबारे ते मिपारिन सों जूझिये ।
अपने सयानन की रहुँ जब बात, तब
बुरो बनि सठ औ' महतन ते जूझिये ।
गुरन के पाय दूरि ह्वेते जाय पूजिय, प
भूलि काहू मदिर को मुखिया नहूजियै ।।

सत

पुरुष वाच

दोहा

राम नाम जपते रहुँ बठत करि आधीन ।
द दरसन सब जगत के, पाप करत ह छीन ।।

कवित्त

तीरथन माझ सदा विचर्यो करत, सदा
पूजापाठ भजन में जात दिन जाई को ।
अचरा कुपीन छापे तिलक द भाल, माल
कठ में 'गुपाल' भलो कर सब काई को ।

राम्रु मद रत न में, दूसरो न माम, नित–
विना विरति, सील सहन सदाई को।
नमता सदाई, रहृ हंसत सन्ाई, यह
बडी सुखदाई मही याको साधुताई कों॥

रती वाच

दोहा

सत सगति निसदिन भगति राजा रक समांन।
सहन सोल सतोप करि घर सन्ो हरि ध्यांन॥

कवित्त

मूड के मुडाअ, छारे तिलक लगायें, माला
कठी लटकाय, झूठो ठठको ठठन है।
पूजा के कराय, सप घटा के बजाय, बहु
भगर दिपायें, कछु होत न पठन है।
तीरथ के न्हाअ, बग ध्यान के लगाय ब्रत
नेम मन लाअे सत सगति सठन है।
कोज न हठन, मरो सुनि के पठन, याते
'सुकवि गुपाल' हो तो साधुता कठिन है॥

पुन

पुरुस वाच

अज्जिल भस करे पर आसन बास करे नहि अक ठिकाने।
देत है औरन को सदा मान ओ' आप अमान रहे तजि माने।
सतन की सतसगति में 'श्रीगुपालजू' को नित बासर ध्यांनो।
देपत पाप हर सब के जब में है सिरे यह साधु को वानों॥

स्ती वाच्य

कवित्त

बने डोलें साड, घर वीस बीस रापें रांड
पात बनि माड, ज लगया तिलक भाल के।
चोर ठग लपट, असाधुता करत हिय
दया नहि रापें मरबया बड गाल के।
काम-क्रोध-लोभ माझ पगई रहत बडे-
निपट हरामी जे जुरया धन माल के।
झूंठो भेष घालि भाग्र भगति बिगालि, साध
असे रहि गये है 'गुपाल' आज कालि के।

नागा

सब मिलि इक ज गा रहे, करिकें बडी जमाति।
य तें सत महत में, नागन की बडी बात॥

कवित्त

रापें तोप सांनि चढे नौबति निसान, लरिबे
को अभिमांन, सजे अस्त्र सस्त्र हाथ हैं।
सग हय घोडे, रण मुरत न मोरे, औ-
झुकामें कडे तोडे, रहें हष्ट पुष्ट गात हैं।
'सुकविगुपाल' पटब जो के दिपामें हाथ,
काहू न डरात जग जोरे जित जात है।
माल बड पात, सग रापत जमाति, याते
जग में विख्यात बडी नागन की बात हैं।

राजु अरु रंकन में, दूसरो न भाव, निस-
किंचन बिरति, सील सहन सदाई को।
नम्रता सवाई, रहै हँसत सदाई, यह
बड़ो सुखदाई सदी बानो साधुताई कौं॥

स्त्री वाच

दोहा

सत संगति निसदिन भगति राजा रंक समान।
सहन सील संतोष करि घर सदां हरि ध्यांन॥

कवित्त

मूंड के मुडाअ, छापे तिलक लगाये, माला
कंठी लटकाये, झूठो ठठको ठठन हैं।
पूजा के कराय, संख घंटा के बजाये, बहु
भगर दिखायें, कछु होत न पठन हैं।
तीरथ के न्हाअ, बग ध्यान कै लगाय ब्रत
नेम मन लाअे सत संगति सठन है।
कोज न हठन, मरो सुनि के पठन, याते
'सुकवि गुपाल' हो तो साधुता कठिन हैं॥

पुन

पुरुस वाच

अुज्जिल भेस करें पर आसन बास करे नहिं अेक ठिकाने।
देत है औरन को सदा मान औ आप अमान रहैं तजि माने।
संतन की सतसंगति में 'श्रीगुपालजू' को निस बासर ध्यांनो।
देखत पाप हरै सब के जब में है सिरै यह साधु को बानों॥

स्ती वाच्य

कवित्त

बने डोलें साड, घर बीस बीस राखे राड
पात वनि भाड, ज लजया तिलक भाल के।
चोर ठग लपट, असाधुता करत हिय
दया नहि राखे मरबया बड गाल के।
काम-क्रोध-लोभ माझ पगई रहत बडे-
निपट हरामी जे जुरया धन माल के।
झूठो भेष धालि भाग भगति बिमालि, साध
अैसे रहि गअे ह गुवाल' आज कालि के।

नागा

सब मिलि इक ज गा रहै, हरिकें बडी जमाति।
य तें सत महत में, नागन की बडो बात॥

कवित्त

राखे सोप सौंनि चढ नौबति निसान, लरिवे
को अभिमान, सजे अस्त्र सस्त्र हाथ हैं।
सग हय घोडे, रण मुरत न मोरे, औ-
झुकामें कडे तोडे, रहु हृष्ट पुष्ट गात हैं।
सुकविगुपाल पटब जी के दियामें हाथ,
काहू न डरात जग जोरे जित जात हैं।
माल बडे धाल, सग रापत जमाति, याते
जग में विख्यात बडी नागन की बात हैं।

स्त्री वाच

दोहा

हारत नहिं हथ्यार धरि, सूझत मारहिं धार।
याते यह नागान को निराधार रुजिगार ॥

कवित्त

बाधत हथ्यार जिनें सूझ मार धार, हरि
नाम उर धारि, कबौ सोधत न आगा कों।
लूटत घसोटत रहत दिनराति सदौ,
बसिके कुजागा'ऊ बिगोवत बिरागा को।
'सुकविगुपाल' बांध बारन की पागा अनु-
राग में गरक है लगायो कर छागा को।
काटे बन बागा, रहत न अक जागा, याते
सबही में बाधा यह भेष बुरो नागा को ॥

"सिद्ध"

पुरुष वाच

हू प्रसिद्ध जग सिद्ध बनि सिद्ध करूं सब कौम।
रिद्धि सिद्धि लाऊं घनी वद्धि करन जस नौम ॥

कवित्त

भूत को भभूति, औ' बिभूति दत भूतन कौं,
बाझन कौं पूत अवधूतन समिद्ध कौं।
चाहे न प्रसिद्धि भयौं मौन बृत्ति गहि, हिय
सुद्ध रहें मेंटि क विरुद्ध कांम गृद्ध कौं।
'सुरविगुपाल' छोडि अबर डिगंबर-
पिगवर ह रह मेंटि सबर की बृद्धि को।

छुवत न निद्धि, लागी रहै रिद्धि सिद्धि हरि–
मिलिबे की सिदधि, होति सिद्ध ही में सिद्ध कौं ॥

स्त्री वाच

दोहा

चाहत करयो जु सिद्धई, होति सहज सो नाँहि ।
मन इंद्रिन को मारिवो, बडो कठिन जग माँहि ॥

कवित्त

मागे नहि काहू, नित जागें दिनराति, अनु
रागें हरि ही में, जो में मेटि काम क्रुद्ध को ।
राखें नख-केस, भस्म भुजलिल बनाइ औ–
सुरेसहू के सामने न होइ पर सिद्धि कौं ।
'सुकविगुपाल' ओढि अबर दिगबर–
पिगवर है रह मेंडि सबर की बुद्धि कौ ।
छवत न निद्धि, लागी रहै रिद्धि सिद्धि हरि
मिलिबे की बिद्धि होति सिद्धई में सिद्ध कौं ॥[२]

१ है० हैबौ
२ अतिम दा पक्तिया है० प्रति मे इस प्रकार है
बोल नहा मुख, नही डाल घर घर कहूँ
जोरो नही धन, हाथ आयें नवनिद्धि कौं ।
सुकवि गुपाल करें सुछमन बुद्धि जब
होइ कछु सिद्धि, काम सिद्धईम सिद्ध कौं ।'

फकीर

पुरुष वाच

सबते भलो फकीर को, या जग में रुजिगार।
लाल व यो नितप्रति रहै[१], घर घर पूरत स्वाल ॥

कवित्त

फाका को न फिकिरि, प्रवाह न किसी की कर,
धरै तन गुद्दर गरयारन की चीरो का।
रवि ससि दीया, जाके अवनी बिछैया, फल
फूलन के भोजन औ[१] पँपायों नसीरो का।
नाता करि हाता, 'श्रीगुपाल' गुण गाता रहै
प्रेम मदमाता सबिसतन की मीरो का।
बैठि छांह सीरो न करत दलगीरो, याते
सबमें अमीरी, यह कामहु[३] फकीरी का ॥

स्त्री वाच

सोरठा

धरै सदा तन चीर, भिक्षा को घर घर फिरै
याते होइ फकीर[४], जयै नहो विदेस कौं

कवित्त

सबते उदास, कर जगल में वास, नहि
राय पर आस, राजु रकरु[५] अमीरी कौं।
धन कौं न धरैं औ' पराए दुप परै नित
इद्री[६] वस करैं, त्यागि अरध सरीरी कौ।

त्यागि बकबाद, लौ गुसैंया सौं' अबाद, कछु
मागै न मुराद, नहिं स्वाद ताती-सीरी कौं।
काहू की न पीरी, घरै करैं दलगीरी, याते
कहत 'गुपाल' काम कठिन फकीरी को ॥

तपेसुरी

पुरुष वाच

जपत पकरि मन बस करत, इद्री रापत हाथ।
याते यह जग में बडो, तपेश्वरन की बात ॥

कवित्त

चले आमें लोग, लैकें नाना भाति भोग, मिटि
जात सब सोग, रोग रहत न जी को है।
गाजे औ' चरस के लगायो कर न दम, गम
कछू न रहति रिद्धि बाट सबही कौ है।
'सुकवि गुपाल' पूजा मानसी करत, दुष
सबको हरत, चित जानें आनसी कौं है।
सुद्ध करें जोकौं, ध्यान रहै हरि ही कौं, याते
सबही में नीको, यह काम तपसी को है ॥

स्त्री वाच

दोहा

कद मूल फल फूल दल, भोजन, बन में बास।
तप करिकै तपसी सदा, सब सौं रहै उदास ॥

---

१ है० रहें २ है० गुन ३ है० रुजगार हैं
४ है० जैसें ५ है० ओ ६ हैं० मैंदी

कवित्त

कूबरी कठारो कर, कोधना ते कस कटि,
राखें नख केस, बठ करिक आधीन कों।
राख को लगावें तन घूनी ते जरावें, रवि
माऊ द्रष्टि लाव, बहु हैं करि अधीन कों।
सुकवि 'गुपाल' जप-तप ये करत, करें
काष्टा अनेक भूष देष नहिं तीन कों।
देह रहै छीन, भेस बन्यो रहै दीन, याते
सब में मलीन, यह भेस तपसीन को॥

विरक्त

पुरुष वाच

कुज कुटी में बास बन, कर करुवा कोपीन।
है विरक्त सब सों सदा होत भगति में लीन॥

कवित्त

कुजन में बसि, कथा कीरतन सुन, नित
हिय में उमग, सतसग साधु भक्त कों।
सगृह कों तजि कें, भजन ही को सगृह क,
करवा कुपोन कटि राखत हैं फक्त कों।
'सुकविगुपाल' हरि-लीला में मगन मन
मधुकर वृत्ति ही में होइ कें असक्त कों।
त्यागि करि जक्त होत हरि अनुरक्त, याते
सबही में श्क्त यह काम है विरक्त को॥

में वाम अनु

के हृदय

कवित्त

भक्त अनुरक्त, झूठो जान सब जक्त, हरि
भक्तन के संग सदा रहे जत-मतमें ।
'सुकविगुपाल' सीष सतन सों लेकें, सबही
कों पीठि देकें, मन रापत बिरति में।
होइ न प्रकास, कर आस कों बिनास, सदा
जाइ बास करें कुंज कुटी जो यकत में ।
तना झिरकत, घर घर रिरकत, ऐती
होति हरकति, बिरकत के बनत में ॥

बिदेही

पुरुष वाच

देसन में बिचर्यो करत, रहत ऊजरो भेस।
सदा बिदेहो साध कों पूजत सकल नरेस ॥

कवित्त

कष करामाति, सदा रहत जमातिन में,
रहें दिनराति भक्ति भाव में भिदेई हे ।
'सुकविगुपाल' कठ बटुआ कों धार आप
तर, और तार सुद्द करें निज देही हैं ।
जात जित सिद्धि चली आम रिद्धि सिद्धि ठोर
ठोर ह्वै प्रसिद्धि सुष रहत है देही हैं ।
देष न बिदेही आप रहत बिदेही सदा
करनी बिदेही की सी करत बिदेही हैं ॥

दोहा

निरमोही सब सों रहे नगन इकत निवास ।
बिदेहीन को होत है केतिक कष्ट प्रकास ॥

कवित्त

देसन पै मांस सदा फिरनौ परत, चौर
　　ढहनौ परत, सीस घाम बरसाति म ।
'सुकविगुपाल' सर्तौ सेवग बिगरि पकरनौ
　　परत कडाको, रिदधि आजे विन हाथ में ।
धारनै परत जटा, कोंधना, कठारो, धूनौ
　　तपनौ परति चीमटा लै सगसात में ।
फटिजात गात, नग रहू दिनराति, दुप
　　होत है विप्यात, औ विदेही की जमाति में ॥

जोगी

पुरुप वाच

तेज प्रचड रहू सदा नन वरत दोश्रू लाल ।
धारत जोगीराज तन बाघबर मृगछाल ॥

कवित्त

माल मुद्रा-मेपला विभूति सेली शृगी हाथ
　　रहैं, सग सदा अवधूतन समाज हैं ।
'सुकवि गुपालजू' निरजन की ध्यान हिय
　　साधत समाज हरि मिलन के काज हैं ।
होत जग ख्यात सो दिपाय करामात जात
　　वस करि लेत बड राजा महाराज हैं ।
फलत अवाज, जिनें आवति अगाज, याते
　　राजन के राज, महाराज जोगी राज है ॥

स्त्री वाच

सोरठा

जटिल अमगल वेस, वास करन बन मैं सदा ।
　　यातें कठिन विसेस, काम सुजोगी राज को ।

कवित्त

जटिल अमगल, मसानन में बसैं पच
तपा तें तपत, सुप जानत न भोग कों।
करत रहत तन काष्टा अनेक यम-
नियम के साथ मुष देपत न लोग कौं।
कानन फरामें, जोगी जगम कहावें, या में
'सुकविगुपाल' ध्यान धरत अमोग कौं।
काहू को न सोग रहै तिय त वियोग, कैऊ
लागे रहैं रोग, सदा साधत में जोग कौं ॥

पर्महंस

पुरुष वाच

भोजन कर न करें कबो, अुज्जिल जैसें हंस।
हरि के अस प्रसंस जग, परमहंस अवतंस ॥

कवित्त

तन, मन, पीन, कटि, रापे न कुपीन, होइ
हरि लव-लीन, साधुता के अवतंस हैं।
बसन दिसा है कर ध्यान को नसा है मुष
मौंन है न चाहें ह, गिरि कंदरा के मस है।
'सुकविगुपाल' कबो जांचना न करें, सबही
की उपाधि हरें, जे बढावत न वस हैं।
काहू की न सस, रहैं अुज्जिल ज्यौं हंस, याते
अस हरि ही को, जे प्रसंस पमहंस ह ॥

स्त्री वाच

दोहा

सीत घाम जल तप है, बसै गुफा के मांहि।
परमहंस को साधनौं, धम सहज ह नांहि ॥

कवित्त

करनो परत गिरि कदरा में वास, मन
मारनो परत, मुख मौनता के लये में।
सीत, घाम, जल, सदा सहनौं परत, बहु—
आवति है लाज सो नगन वेस कैवे में।
'सुकविगुपाल' भूप जाति रहे जब पर—
हाथ ते न स्वाद आव भोजन के पैवे में।
पर हाथ जवे, नहीं होत है कमैवे, वडे
होत दुख पव, या परमहस ह्वैवे में॥

मोड़ा

पुरुष वाच

[1]गांम गांम में मांगि क, मगन रहत दिनराति।
याते या ससार में, मोंड़न को बड़ी बात॥

कवित्त

अस्तल में बास माई गाई राप पास नाम
पावत है दास पूजा कर सांस भोरा को।
करि कें बहु रगति दूनी ब्याज पात लेत
चूनन के चुगल झुकाइ[2] कडे तोडा कों।
कुल प्रतिपाल सदा पेत विरिहान किसान[3]
नते मिलिकि लक राप घोरी घोरा को।
करें छोरी छोरा, 'ओ' कमात होडी, होडा, याते
बडौ धन जोडा रुजिगार यह मोंडा को।

---

१ है० घटा जाझि बजाइ के करत भजन दिन राति।
याते या ससार मे मोडन की भली जाति॥
मु० घटा शाप बजाइ के मगन रहत दित रात।
२ है० दिवाई ३ है० विमासन
है० याते यह कलिकाल में मोडन की बुरी जाति।
मु० जाते या कलिकाल मे मोडन की नहिं बात।

स्त्री वाच

दोहा

मोडा-मोडी करत धन, जोडा जोडी जात ।
धन जैहो मोडान को, मोडा मोंडी पात[1] ॥

कवित्त

करनी परति जिमीदार को पवासी, गरें
परि जाति जाके विसें बासना की फाँसी है ।
'सुकविगुपाल' आए-गये साध सगति में
गारी दयी करें जो पवावें न मवासी है ।
दाम लै उधार, पाय जाँय नर-नारि, तब
जिय में विचारि, हारि आवति उदासी है ।
कबौ न पलासी, जिय जायौ करै सासी, साध
भोगत चुरासी, सदाँ अस्तल को बासी है ॥

सजोगी

पुरुष वाच

सोग नही विहु बात को, निसदिन भोगत भोग ।
साध सँजोग सँजोग में, घर बसि साधत जोग ॥

कवित्त

ब्याह गौने चाले कौं, न परचनें परें दाम,
लाय नित नईन सौं भोगुयौ करै भोगी कौं ।
गोत औंर नात न मिलामनें परत नाम,
धरिवे को डर न रहत, काहू लोगों को ।

---

१ दि० पाते यह कल्किाल मे मोडन की बुरी जाति ।
मु० जाते या कलिराज में माइन की नहिं बात ।

'सुकविगुपाल' बड़े होत परवीन, रूप
निकर नवीन सदाँ, नैनन के रोगी कों।
कबी न वियोगी सदा रहत निसोगी, याते
सब में सजोगी को सुकरम संजोगी को ॥

रती वाच

दोहरा

बिपय लीन है होत हैं, दीन ते सदां कुदीन।
सजोगिन की बात यह, याते जग में हीन ॥

कवित्त

बब पाप बीज, सो गृहस्त ते गलीज रहे,
भोगिवे कों तरयो करें, भामिनि अभोगी कों
भगति गमाय बण-सकट कहाय क
भयकर से ह्व क काम करत कुयोगी को।
'सुकवि गुपाल' धन जोरत ही जात दिन
माया-जाल परि निंदा सह्यो करें लोभी कों।
नरक को भोगी, देह रहे न निरोगी याते
सब में सजोगी यह करम संजोगी को ॥

जती

पुरुषवाच

दोहा

कहत मठपती गजपती, जाहर जग में जोति।
पूलत रती बाढ़ति मती जती जाय जब होत ॥

कवित्त

पीमें जल छानि, रापै जंवण के प्राण, पूछि
पात पान पानि, सुग्घ रापन मती कौं है।
रहत न दीन, जत्र मन्त्र में प्रवीन, जादू
करि के नवीन, वस्तु लावत वतीको है।
'सुकवि गुपालजू' कहामें मठपत्तौ, जन
मत अघपती हैं के जानत गती कौं हैं।
साधि के व्रतीकों, वस कर गट्टरतो कौं, नाते
सब में रती को, मर्ते करम जत्ती को है।

इस्ती वाच

दोहा

सुमृत सास्त्र आगम निगम, निदत है सब ताय।
याते साधि सु जन मत, जनी न हूजै जाय॥

कवित्त

महुँ रहैं बाँधे, झारु घर रहै काँघे, सदां
जन मत साघ, जे अराघ ल घतीन कौं।
नद नहीं घ्वामें, मिष्ट भूतिया कहामें
परलोक दुप पामें, सुप पामें न गतीन कौं।
बेद औ पुरान निंद्य, कहत निदान, जे
अधम्म कम ठानि घम टारत सतीन कौं।
देप मुष तीन, पात निस में रनी न, यौं
'गुपालजू' मलीन हीन करम जतीन कौं॥

स्यानपत

पुरुष वाच

सोरठा

सुमरि इष्ट को जाय करहु स्यानपत जाइकै[१]
बस करि कै नरनारि, धन संचित करिहौ बहुत ॥

कवित्त

नर की कहा है, भूत प्रेत कों करत बस,
बाँझन को पूत देत, भभूति लगत में।
देव सिर आवत में, गावत बजावत
पिलावत, दिखावत, चरित्र अजगति म।
'सुकविगोपाल[२]' घर घर में बगति बान
सब को ठगत, जोति बाती के जगत में।
होइ आसु-भगति, कहावत[३] भगत, याते
जगति ह जाति, स्यानपत की जगत में ॥

स्त्री वाच

सोरठा

याते मोचि निदान, कबहुँ न कीज स्यानपत ।
होइ जीय कों ज्यान गति न लह परलोक में ॥[४]

---

१ है० जायकैं   २ है० कहत गुपाल   ३ है० कहवत
४ इसकी जगह पर यह सोरठा है
मेरी कह्यौ प्रमानि, क हुँ न कीज स्यानपत।
होइ जीय को ज्यान सुभ गति कबहु न पावही ॥'

कवित्त

करत रपत जाके अति ही कमप गात
होइ जीव[1]- घात, घात चलत फिरत में।
सम्पति न पावै, 'औ' गरीजता बढावै, सब
निरफल जावै, कम यस्ट[2]के कुपत में।
'सुकविगुपाल' मत्र जाप के जरत, ध्यान
घरत डरत प्रान जातहू [3]वुफति में।
भिस्ट होति मति, नहिं पव सुम गति प'त
बडी है अपति, या करत स्पानरत में।

सरभगी

पुरुप वाच

जत्र मत्र म निपुन मति, सिद्धि होत सब मत्र
याते यह सरमग मत, सबते भली सुतत्र

कवित्त

डिम्म नहीं रावें ब्रह्म सब्ही म भावें, म्रुप
काहू सौं न मांग काम करत उमगी कौं।
काहु में 'गुपाल' कबी भेद नहिं माने, मन
जानें हरि अग, सदा ब्राह्मन रु भगी कौं।
आपस में प्यार, सौंने ठीकरा कौं झारि, ठ ढे
रहैं नर अनारि, द्वार ल कै चोज चगी कौं।
देहू रापें नगी अवधूतन के सगी, यातें
सब में यरगी यह मत सरमगी कौ।

---

१ है० जीउ   २ है० इप्ट   ३ है० है।

स्त्री वाच

न्हाइ नहि धोव भली बुरी ठौर तोमें, चोटी
सिर प ते पाँमें अपवित्र राप लगी रौं।
करि मल मूत्र रौं, न धोव हाप नाइ हाप,
धोपटोन राप दूजो गापत न लगी कौं।
'सुरविगुपाल' रहे सबतें उदास भरप
अभक्षण पात, सब काया राचि नगी कौं।
होन बहु रगो बात मारत दुरगो, याते
भगी ते गयो ह यह मत सरभगो को।

गुरदक्षा

पुरुष वाच

चेला चांटो करत में पावत सुण्र सरीर।
नवत रब जग आइ[1]क मटें भव की भीर॥

कवित्त

राम नाम कह, माला मुद्रा घर रहें, कम
श्रुकृत[2]के गहें, लाग मानत परक्षा कौं।
चरन धुवावे सीत, सब को पवावें, गर
ईश्वर कहाव, नवबाव, कर रक्षा को।
बढ़त 'गुपाल' भाव भगति विसाल होत
हाल ही निहाल प्रतिपाल बाल वच्छा कौं।
मानें जग सिवपा तामें पूरें सब यत्रप [3]याते,
सबही में[4] अच्छा रुजिगार गुरदक्षा कौं॥

सोरठा

लीज सिवपा मानि, अरु इच्छा[5]होइ सुईकरो॥
मेरो कह्यो प्रमानि गुरदक्षा नहि दीजिय॥

---

१ है० आय २ है० सुकृत ३ है० इच्छा ४ है० ५ है० इच्छा

कवित्त

देस-परदेस अपदेसियै न धन काज
घरिकैं सुवेस, बिन भवित रक राऊ कौं।
लागैं अपराध जो असाधु ते न साधु होइ
गर-भव वारिध अगाध परैं ताहू कों।
'सुक वगुपाल'[1] बहु सिष्य जो करत पाप
सबते लगत आइ आधो आध जाहू कौं।
भिक्षा मागि जीज, और इच्छा हो मुकीज, मेरी
शिक्षा मानि लीजे, दोज दच्छा नहिं काहू कौं॥
होत भवपार विवहार छूटजात हरि
रूप दरसत तिहि बन मन दर्अ त ।
'सुकविगुपाल' जनैं, सुजन प्रभाव, भाव
भक्ति वढिजाति, ज्ञान होत पद नर्भे ते।
हिय होत अमल विमल मत नैन होत
होत चित चल भन रह कोऊ विये ते।
नयो होत जनम करम शुभ होत कर
यते सुष होत गुर सनमुष भअे ते॥
तन मन धन सब अपनो परत, कर्म
करने परत अनुवस्त गुर रवपा के।
पूजा पाठ भजन अषाल सध्यादिक करि
मानने परत सब जते वॅन सिक्षा के।
चलनो परत निज मप्रदा के अनुसार
सारहि कौं गहि भाव भगति परवपा कि।
रोप पक्षा पक्षा, कर्नी परै जोव रक्षा अेती
करनी परति बात लोये गुरदक्षा के॥

इतिश्री दपतिवाक्य विलास नाम काव्ये साघ प्रवध वणन नाम त्रयोदश विलास।

---

1 कहत गुपाल

चतुर्दश विलास

ब्राह्मन

पुरुष वाच्य

सोच, सांति, सतोष, दम, दया, सुघाई जानि ।
हरि ततपर, तप, सत्य, धम द्विज लच्छन अ जानि ।।

जगत अपावन, तप करन, धम रच्छके काज ।
दान पान भगवान निज पूजय करे द्विजराज ।।

सबही के पूज्य, औ' पवित्र सब जीवन में,
कोमल हृदय जे बनाअे धम-काज हैं ।
होतहु पवित्र घर तिन के प्रविष्ट ही सों,
तिनकी कृपा सों मिल बहु सुपसाज है ।
जिनही के तप तेज जगत की रच्छा होति
तिनके चरन धारे हरि महाराज ह ।
कहत 'गुवाल' भगवान को सरूप याते
राजन के राज महाराज द्विजराज हैं ।।

सोरठा

जप तप व्रत भन देइ, करि सतोष रोष न करै ।
तब द्विज है जस लेइ है वदक करि काष्टा ।।

कवित्त

निस दिन जाप रहै भोजन की आत बन
भिक्षुक भिखारी, आस कर सब जन की ।

'सुकविगुपाल' सो सरासि देत हाल जाति
कौन देपि सकै घोटी कहत सुजन की ।
रहत न तेज पति गृहन की कौडी पात
पात न कमाई कबौ अपने भुजन की ।
धर्म के सृजन को बिगरत तुरत कम
अजन की, याते यह जाति है द्विजन की ॥

क्षत्रिय

पुरुस वाच

कवित्त

छिमा, तेज, सूरता, प्रभाव, दान, धीय, धाति
रहत प्रसन्न, मन जीतत पवित्र हैं।
तिनहीं के हाथ रन सत्रुन के जीतन को
बाधयो है बिधाता नें बिजै को जीत-पत्र है ।
सुहृर 'गुपाल' गऊ साधु द्वज दीनन की
हूकें हितकारी रच्छा करें सरबत्र हूं।
बांधे अस्त्र सस्त्र, भारी सब में नक्षत्र, याते
सुजस को सोह सिर छत्रिन के छत्र है ॥

स्त्री वाच

दोहा

मिले रह महु सों सदा जियकी कसक न जाय ।
याते यह छत्रीन की, जाति बडी दुपदाय ॥

कवित्त

संकट में छांड स्वामि नरक में पेर, तिय
सोप न सरीर बडो लगतु ग्रवम है ।

कायर भजे प जार-भ्राति कहु'य धन-
धरा-राज काज मन पट रन गम हु ।
'सुकविगुपाल' मौन करिबे हुलास काज,
बेटा बाप लरे रन छोड़ निज सम है ।
बेधे पर मम, कट तिल तिल चम, याते
सब में कठिन, यह छत्रिन को धम हु ॥

वैश्य

पुरुष वाच

दोहा

धन सचे करिके पहुल रावत बीच बजार।
याते यह सबमें भलो वैश्यन को रुजिगार ॥

कवित्त

समत कुसमत में राखि लेत लाज, राजु
राजन की काट बद, करत निसांको हैं।
याही ते जगत मांझ, मेवा को कहत प्रथप,
याते सदां होत प्रतिपाल दुनियां को है।
'सुकविगुपाल' कांम परें सबही को सदा
घर भरयो रहत, कुवर को सो ताको है।
बनिज को पाको, धन जोरत सदां कों, काज
करनी कों बांको, सो बनायो बनिया को हु ॥

स्त्री वाच

दोहा

पहल नरम, पाछे नरम, काम पर करपात।
याते यह बनियांन की, सिंह तुल्य है जाति ॥

कवित्त

जानिकै निसक, चाहै सोई धमकाइ लेइ,
मानत न कोई आनि कानि नक ताकी है ।
साह बने रहै, अरु चोरी को करत काम
दिनही में काट्यो करै गाँठि दुनियाँ की है ।
'सुकवि गुपाल' वह जानते को मार माल,
काँम भजे पाछै, फिरि जाति बाँधि जाकी है ।
लार गिरै याकी, जाति सिडिबिडि न ताकी
डरपोकनी सदा को, यह जाति बनियाँ की है ।

सूद्र

पुरुषवाच

प्यारे चारिहु बरन के सबन देत सुख गात ।
याते यह सब जाति में भला सूद्र की जाति ॥

कवित्त

भले बुरे करम में निंदतु न कोई, वहु
करनों पर न जप तप व्रत गात को ।
हुरमति, इज्जति सुचाहिय न बडो, बडो
दीसै कारपानों ताकी बोरी सी बिसाति को ।
तिनसों 'गुपाल' काँम निकर अनेक, रहै
सबही के प्यारे, सो बनाय निज बात कों ।
सब काँम हात करै, भोजन न पात, यात
सुख सरसात, वहु सूद्रन को जाति की ।

स्त्रीवाच

दोहा

दीन रहत भूपन मरत, होत भोगते हीन।
सूद्र लोग दुष भीनि क, रहत पाप में लीन॥

कवित्त

चारिहू बरन को सुननो परत, सब
कहे नीच जाति, हय्या भयो करे हात हैं
जिनको 'गुपाल' अधिकार नही वेदन को
तापै मथ छेदन को बनति न बात है।
बुरे दिन जात, भवष अभवषहि पात औ'
कुकरम को कमात इतराइ हाल जात ह।
मरत न शुद्र, घेरे रहत दलिद्र, यामें
सबही में छुद्र, यह सूद्रन को जाति हैं॥

पुरुषवाच

गृहस्थाश्रम

चारि बरन आश्रमन म है सबको सिर मौर।
गृहस्थाश्रम के सद्रस, कोउ न जगत में और॥

चारिहू बरन, चारि आश्रम को मूल यही
याही ते सकल अवादांनी[1] होति बस्ती है।
बस बढ़वारि, ब्याह-सादी-भोग राग-सुष
ह रहत यामें पुन्य-दान जबरदस्ती है।

---

१ मु० अबोदानी

'सुकविगुपाल' याते जगत के जीवे जीव,
सदा सब ही की भयो करे परवस्ती है।
तनकी दुरस्ती रहै, धनकी न सुस्ती, तो पै
प्रथिवी के मांझ सरवोपर गृहस्थी है॥

स्त्रीवाच

दोहा

कुटम सुसील सपूत सत, अनगण धन प्रभु देइ।
तव गृहस्त ह कें कछू या जग में जस लेइ[1]॥

कवित्त

रातिदिनां यामें केई परच लगेई रहै,
आयो गयो, व्याह गौनों, गमी औ' बधाई है।
विषय के भोग कर्म जोग के वियोग रोग[2]
जिकिरि फिकिरि मारें आपनी पराई है।
'सुकविगुपाल' भाव भजन बन न यामें,
फँस्यो रहै सदां मोहजाल में महाई है।
करत कमाई, तऊ रह हाइहाई, याते
सबते सवाई दुषदाई गृहस्थाई है॥

ब्रहमचारी

हरि गुर अगनिह पूजिकें, साध सदां त्रकाल।
ब्रहमचय ब्रत धारि गुर ग्रह बस सब काल॥

१ है० मु० करनी कर तव करि कछू तव गहस्त सुष लेइ।
२ है० मु० योग

वानिप्रस्थ

गहि बिसबास निवास बन सदा सुसाधत स्वास ।
बानप्रस्थ गिरहस्त ते इढत बहुत सुपरासि ।

कवित्त

मुनिन के सम तेज आवत ह गुण, पुनि
रिपिन के लोक भोग भोग निज दास के ।
'सुकविगुपाल' निरविघन बनग्राम बसि
जान निज रूप रहे आसरे न आस के ।
जप, तप, होम, के अदवत मत साधन में
व्यापत न दुप अहममता के फांस के ।
ज्ञान परगास होत, ब्रह्म पास बास, सुप
षहे नहि जात बनप्रस्थ सुप रासि के ॥

दोहा

जाय जब बारह बरप, रुग सुवन में बास ।
ब्रह्मचज ते होइ जब वानप्रस्थ परगास ॥

कवित्त

धारे जटा रोम, तन डड औ' कमडल कौं,
बकुल अजिन अगनि राप परगासी कौं ।
पवन रु धूप, जल, सीत सदा सहै, अनसन
व्रत गहै, रापै काहू की न आसी कौं ।
'सुकविगुपाल' अन्न काचो, रवि पाचो, पात
काल पाय पके बिन जोते बने बासी कौं ।
रहि सुपबासो, धान राप नहि पासी, धर्म
सबते कठिन बानप्रस्थ सुपरासी कौ ॥

कवित्त

पूजत रहत हरि गुर-भगति सूरज कों,
साधिक अकाल कर्म करो सुभकारी को।
मन बस करि, पढ़ि, वदन की भद जानें
गुरकुल बसें तजे मादक अहारी को।
'सुकविगुपाल' होइ चतुर सुसील अद-
-मान प्रयोजन मात्र करै विवहारी को।
सत्य सुखधारी, ब्रह्मचर्ज व्रतकारी, भारी
करनी परति क्रिया बालब्रह्मचारी कों॥

स्त्रीवाच

दोहा

देह छुटै, सुख सब मिटैं, घटैं कुटम सों हेत।
कष्टा बहु करनी परत ब्रह्मचर्ज व्रत लेत॥

कवित्त

सांझ औ' सवेर भिक्षा लांमनी परति, तजि-
भूषन, अरगजादि पट सुखकारी को।
जटा, कुस, मेखला, कमंडल, अजिन डंड,
नव गुन धारि मुख देखनौ न नारी को।
हकरि दयाल, इंद्री जित मित सुख गुर-
अगया पाइ पानौ परैं भोजन की थारी कों।
बेद मत कारी, ब्रह्मचर्ज लेती बारी, भारी
करनी परति क्रिया, बाल ब्रह्मचारी कों॥

वानिप्रस्थ

गहि बिसवास निवास बन सदा सुसाधत स्वाम ।
बानप्रस्थ गिरहस्त ते बढत बहुत सुपरासि ।

कवित्त

मुनिन के सम तेज आवत ह गुण, पुनि
रिपिन के लोक भोग भोगै निज दास के ।
'सुकविगुपाल' निरविघन बनवास बसि
जानै निज रूप रहै आसरे न आस के ।
जप, तप, होंम, के अदवत मत साधन में
व्यापत न दुप अहममता के फांस के ।
ग्यान परगास होत, ब्रह्म पास वास, सुप
बहै नहि जात बानप्रस्थ सुप रासि के ॥

दोहा

जाय जब ब रह बरप, कर सुबन में बास ।
ब्रह्मचज ते होइ जब बानप्रस्थ परगास ॥

कवित्त

धारे जटा रोम, तन डड औ' कमडल कौं,
बकुल अजिन अगनि राप परगासी कौं ।
पवन र धूप, जल, सीत सदां सहै, अनसन
व्रत गहै, रापै काहू की न आसी कौं ।
'सुकविगुपाल' अन्न काचो, रबि पाचो, पात
काल पाय पकें बिन जोते बमे बासी कौं ।
रहि अपबासी, ध्यान रापै नहि पासी, धर्म
सबते कठिन बानप्रस्थ सुपरासी को ॥

सन्यास

निरारम, निरदम नित, आत्मराम सुप रासि ।
चारि बरन, आश्रमन मे सर्वोपर सन्यास ॥

कवित्त

आतमा को दरसी है, निजगति जानें बध-
मोश्रहू में मानें, रापै काहू की न आस कों।
सब सों सुहृद, सदा समचित साति गहि,
होत महामना परब्रह्म रति तास कों।
तजिकें सकल पक्षपात बकवाद है
नरायण-परायन सुकर्म कर दास को
कहत'गुपाल' बरनाश्रम के बीच याते,
सबमें धरम सरबोपर सन्यास को

इस्तीवाच

मानपमान समान नित, ग्राम ग्राम में बास।
बडी कठिन तातें कछु, धम सधत सन्यास ॥

कवित्त

करनौं परत ग्राम ग्रामन में बास, गूगो
बाबरो सो ह्वैकें, कम करयो करै हास के ।
देह कों न ढांकै, तजी बस्तु को न रापै, ध्रुव
मरन कों भाष, अभिलाप न प्रकास कों।
सुकविगुपाल' कहो सिप्य कों न करें, सदा
बिचरै अकेले तजि बासना की फांस कों।
गहि बिसवास, सोव जागें न निवास, याते
सब में कठिन धम्म साधन सन्यास कों॥

।इतिश्री दपतिवाक्य विलास नाम काव्ये वण । श्रम प्रवध वणन ना
चतुरदसो अध्याय '१४'

पंचदशो विलास

सहर प्रबंध*

पुरुष वाच

सच कहै सबसों[1] सदा सकी है[2] सबही को अच ।
[3]जानत नहि परपच कों, जिनते कहियत पच ॥

कवित्त

रक करैं राजु, अरु राजु को करत रक,
दूषन को मेंटि देत, आवति न अच हू ।
काहू सों न सकें, चाहै सोई कवि सकें, करि
दया अुपकार, रहैं पापन ते बच हैं ।
जिनकों[4] 'गुपाल' सब[5] सौंपि देत न्याय,[6] तिन
मांझ आप बोल पनमेसुरहू सच हैं ।
आवति न लच,[7] रूअ करत न रच, नहि
जानैं परपच, जिनै[8] कहियत पच हैं ॥

---

* मुद्रित प्रति में शीर्षक इस प्रकार हैं अथ क्षत्रिय रुजिगार, शहर प्रबन्ध, तत्रादि सरदारी ।

१ है० मुपते, मु० मुपसा २ मु० सबन ३ है० मेटतु जो परपच को सोई साचो पच ४ है० सुकवि ५ है०, मु०, राज, राजा ६ है० न्याव, मु० न्याऊ, ७ मु० लच ८ मु० अरु ९ है० मु० तिन्हैं

स्त्री वाच

दोहा

[१]पचायति में पच जो, कर न सांचो न्याइ।
[२]ताकी पीढी सातहू, सदा नरक में जाइ॥

कवित्त

डोलनो परत, झूठ[३] बोलनो परत, न्त्र
पक्ष न करत जाकी,[४] सासू देत गारी हैं।
'सुकवि गुपाल' धम-सकट परत न्याय
मामल के छानत में लगत अवारी है।
अरनौं परत, कछु हाथ न परत, भलो
बुरी के करत यामे पाप होत जारी[५] है।
[६]चिता रहै भारी, धारी कर नर नारी, याते
पच कौं पँचाइति म होत दुख भारी हैं॥

सिरदारी

पुरुप वाच

सुघराई सरसाति, सब सौं सरस सनेह नित।
स्यौ सोभा सुख सात, सिरदारी वृत सहज मैं॥

कवित्त

जाकी बूझ होति सदां राज दरबार, गुन-
मानन के भूप ते बडाई गाइयति हैं।

१ है० जो कहुं साचो पच है, कर नही कहुँ न्याय २ है० जाकी
३ हैं० साच ४ हैं० ताका तेई ५ है० पाप लानत न वारी है
६ है० लोग कर ख्वारी।

बाँधि के मुजाद तोन्ह आपनी जनाइ,,[१] पर
कारज बनाइ, अरि छाती दाहियति है।
'सुकविगुपाल' बडे मामल सुधारि करि,
जाकौ[२] घर वठही कमाई पाइयति है।
होत मुपत्यारी जाहि चाहैं नर नारी बडे
भागिन ते भारा सिरदारी पाइयत है॥

स्त्री वाच

सोरठा

सिर प्यारी परिजाति, सिरदारी कृत सहज में।
बिना तोल दरि जाति, याते कीजो समझि कै॥

कवित्त

राति दिन यामें पाअ जात हे भिपारी लोग,
सौगुनो भरम घर आमदि की बारी में।
घेरे रहै लोग, कई लगे रहै रोग, आवे
जामें वाठ पाअ बात रहै मुपत्यारी में।
'सुकवि गुपालजू' पराअे काज जाय साधि
भरनी परति झूठी सांसी[३] दरबारी में।
भार पर भारी, बुरी कहै नर नारी, बडी
भारी होति प्यारी, या करत सिरदारी में॥

थोकदारी

पुरुष वाच

न्योते देतर लेन में, रनि दरपनी बार।
होत आपने थोक में, थोकदार सिरदार॥

---

१ ह० जनाय   २ ह० ताकी   ३ ह० सांची

कवित्त

जाकी थोकदारी पर बैठ सदा आयो करें,
पायो कर हुकम सदा सबते अगार कों।
'सुकवि गुपाल' सादी, गमी, औ' वथाइन में
जाके हाथ सब कांम होत बिवहार को।
मार्यो कर माल सदां न्योते को पनीतन
कों, पाय मुखत्यार दनी दक्षपना की धार कों।
दब नरनारि रुप राखें सिरदार याते
बडो सुपकार रुजिगार थोकदार को ॥

रती वाच

दोहा

गारी दीयो करत सब, ल ल जाको नाम।
याते बडो निकांम यह, थोक दार को काम ॥

कवित्त

पात ब्रह्म अस जाते जात निरबस लोग
कर्यो कर पुस बर करि करि भारी कों।
माल लाइ कहूँ को पचाय जाइ जब तब,
मूड फूटयो करें, दनी दक्षपना की बारी कों।
करि करि चारी, गारी तारी दे दे लोग, अह–
'कारी जे 'गुपाल' सदां दीयो करें गारी कों।
देव छरकारी कोस्यो कर नरनारी, याते
बडो दुपकारी, यह काम थोकदारी को ॥

मुहल्लेदार

पुरुस वाच

रुप राखें नरनारि सब, घर घर होइ मुख्त्यार।
हल्लो भल्लो लगतु है, होत मुहल्लेदार॥

कवित्त

मानैं सब कोइ, जो कहै सो काम होइ जाय,
सब ते पहले बात बूझैं जाइ जाइ कें।
झगरेऊ' झाटे, बट-चुट लैन-दैन जाके,
हाथन है निघटें अनेक काम आइ कें।
'सुकवि गुपाल' कैई मिल्कि-मकानन के
मामिल करत, घूस पच्चर कों पाइ कें।
सुप सरसाइ, सिरदार गन्यो जाइ, होइ
दरजा सिवाय, या मुहल्लेदारी पाइकें॥

मुहल्लेदार

स्त्री वाच

राखैं अब नरनारि की, घरघर की सुम्मार।
तबै मुहल्लेदार की, बूझ होति दरबार॥

कवित्त

रापनौ परत घर घर को हवाल यादि
आय रहै दोस भलो बुरी मैं यकल्ले कों।
इह चौकीदारी, दनौ परति अुगाहि, लोग
अंच-अंच डोलें, काम परें रल्ले झल्ले कों।

'सुकवि गुपालजू' फरेब की कहै जो बात
अत्ले मत्ले लोग आय पकरत कल्ले कों।
पायो घर पत्ले, लागे रहैं ग़ल्ले टल्ले, याते
हूज न मुहल्लेदार, भूलि के महुल्ले को॥

जुमेदार

पुरुप वाच

बढ़े हुकम हासिल सदा, सबही सों होइ हेत।
काहू जिल्ले की जबै जुम्मेदारी लेत॥

कवित्त

बूझ होति भारी जिमीदारी सिरदारी बीच,
होत दरबारी, काम परै नर नारी कों।
'सुकविगुपालजू' हुकम रह बस्ती बीच
करि परबस्ती, सदा रायत हुस्यारी कों।
चुंगी औ' करौनी घर वढ़ै घूस आयो करै,
पायो कर हुक्क सो निकारि चोरीचारी कों।
बैठि के सवारी, कर देसकी सँभारी, याते
सबही में भारी, यह काम जुमेदारी को॥

स्त्री वाच

दोहा

नितप्रति हित करि लाइ चित, जो कोई देइ हजार।
काहू जिल्ले को तऊ न, हूज जुम्मेदार॥

कवित्त

डर रह्यो करत डकैत ठग चोरन को,
चास वास लेत, फरि सकत न हल्ले कों।

चोरी की 'गुपालजू' लगाइ कें सुलाक, लाइ
दनौं परें मुद्दा आप जाय दूरि पल्ले कौ।

सूतरी गमें पैं लाइ ररसा दनौ परें, लें–
मर जो झूठ कोऊ तब पायौ परें टल्ले कौ।

सूधि जात वल्लै, कोऊ वहतु न मल्ले, याते
भूलि कें न हूजे जुमेदार कहू जिल्ले कौ॥

जाति चौधर

पुरुष वाच्य

चौधर के रजिगार की बडी जगत में बात।
जाटि-पाति उपकार की, होतिह् ताके हात॥

कवित्त

व्याह बधाई' रु[1] सादी गमी, मुखिया सबही के बन्यो रहैं भारो।
काज सँभारतु है सबके सदा थोरे घने में करें निसतारो।
डडे धरें तक्सीर परें कोऊ देन' रु लेत न रोकन हारो।
राइ 'गुपालजू' पचन में नित चौधर को दरजा बडो भारो।

---

१ है औ'

स्त्री वाच

सोरठा

पचन में दवि जाति, गारी देत रुपात में ।
रुवयो रहै दिनराति, चोरी कों भरमत सबै ॥

कवित्त

पकति जुवान, बात सुनत न कान, बेसरम
है निदान हौंनौं परत लरत में ।
कहत 'गुपाल' देत नेगिन[१] की लाग जाकी
भुतरति पाग गारी पातु हैं मुफति में ।
घूस अुघरत, मम चोरी को घरत, पाप
करत डरत[२] दीण दुपो सौं अरत[३] में ।
मूपन मरत, नहीं दौलति जुरति वुरवाई
सिर परति या चोधर करत म ॥

चवूतरा की चोधर

पुरुप वाच

सब बजार में[४] हुक्म करि, लाऊ धनहिं कमाइ ।
चोधर पाग बधाइ कं, चोधर करहुं बजाइ ॥

कवित्त

मानें आनि-कानि छै रकानि पैं हुक्म सो
बिपारिन ते मिलि माल मारें आठो जांम म ।
ल करि 'गुपाल' सिरोपाव सिरकार ते चवू-
तरा की लाग वढ्यो लीयो करै धाम में ।

---

१ है० नेगिन २ है० गन्त ३ है० अरत ४ है० पै

बाँधि तौल हाँसिल, करीनौ बनोबस्त, यहु
जिनसि के निरधनि, कर्यो करें[1] गाम में ।
होत परकाम, फल देसन में नाम, होत
अंते सुप भाम सदा चौधर के काम में ॥

स्त्री वाच

दोहा

राजकाज के काम कौ, चौधर कीजे नाँहि ।
मार-धार मारी रहै, बडो दुख्य या माँहि ॥

कवित्त

गारी दयौ करें चपरासी मजकूरी लोग,
सहूयो करें[2] राजदरबारन की घाम कौं ।
आइ के जगामें, अधराति पिछराति लोग
फौज के परे पै जब भरत[3] गुदाम कौं ।
'सुकविगुपाल' बुरा रहतु बजार को औ'
चुंगी औ' करीना जाकौं बद करे गाम कौं ।
पावै न अराम, बिच्यौ डोलै आठो जाम, याते
भूलिक न कीजै गाम[4] चौधर के काम कौ ॥

गाम चौधर

पुरुष वाच

जोरि जोरि धन भो धरत, जग में होत अुदोत ।
सब कोअु जाको मो धरत, जो धर चौधर होत ॥

---

१ है० गाम २ है० नित ३ है० काम पेट दे ४ है० कबू

कवित्त

चली आमें जाकी, गाम गामन ते भेंट, घूम–
पच्चर अनेक रिपि देव ताको ताक ते।
'सुकवि गुपाल' नेंक देवत न कही ज्वाब,
साल के परे प, ज्वाब देनु हु अराक तें।
गाँम-गाँम, घर घर, देस में करें सो होइ,
मामले बनाइ बडो रहत मजाक ते।
मानें जाकी धाक, सब मानें यस्तपाक, दब्यौ
करत कजाक, देपि चौधर की धाक ते॥

स्त्री वाच

दोहा

काहू के नीचें जनें, गाम बिगो दबि जाय।
जब चौधर के काम में दडी दुष्य होइ आइ॥

कवित्त

आठ पाइ यामें नित नौ की रह भूप, सूकि
जाइ गुदा गात, दिन राति रहै मो धरी।
'सुकवि गुपाल' घूम पच्चर के लेत्त, लोग
रापत अकस, पाप होत या में सो धरी।
कारपाने बिगरे पं, बूयत न कोऊ तब,
करज के नाने जाय मिलत न जो धरी।
'गाहो जौ' घरी सों न घरी सो मिल सकें याते,
भूलि क न हूजे गाँम गाँमन को चौधरी॥

ठाकुर

पुरुष वाच

रन में सकै न काहू मूपो देपि सकै, झूठ
मुप सौं वकै न तकै पर धन माल कौं।
साँच मुप बोलै, नही घर घर डोलै, सदा
एकसम जानै, वृद्ध तरुन' रु बाल कौं।
घूस नहीं पांइ, झूठो करे नहि न्याय, देपि
कुटमै सिहाय, कवौं मारै-नहिं गाल कौं।
हिय मै दयाल, सदा रहत पुस्याल, सोइ
जानियै 'गुपाल' बडो ठाकुर सुचाल को ॥

स्त्री वाच

दोह

चुगल चोर घुसिहा बडे, तकै परायो माल।
कपटी लपटा लपटी, ठाकुर है अजकालि ॥

कवित्त

अैठि बांधै पाग, कुआ वागन मैं अडै, रापै
पीठि पाछै मूठि वद, चूतर पै ढाल के।
चूहरी-चमारि, नटी नाइनि सौं नेह करि,
जाके द्वार-द्वार 'याय करत विहाल के।
लवे कौं यकट्ठे 'यारे दंवे कौं रहत जग-
जूरे, दुरे घौंस औ' बुलाए 'रवार के।
झूठो मेप, घालि तकै परधन माल, अब
असे रहे ठाकुर 'गुपाल' आजुकालि के ॥

जिमींदार

पुरुष वाच

सोरठा

जग में जागति जोति, करत जिमींदारी सदा।
मूझ राज में होति, गाम चलैं सब हुक्म में॥

कवित्त

धारि कैं हथ्यार धारि आरि की निहारि मार
मारत में हारि नहीं मौन किय स्यार तैं।
पावै परिवार, परवार कौं समारि, निराधार
कौ अधार नहिं टूटै हितू यार तैं।
कहत 'गुपाल' लोग भूमिया-भुवार, सिर धारन
हजारन में रहैं सदा प्यार तै।
करै षेत क्यार, सबही के मुषत्यार, देषि-
दबै दरबार, जिमींदार की बहार तै॥

स्त्री वाच

दोहा

करत जिमींदारी सदा, अे दुष होत सरीर
सदा राजदरबार की, परै आय के भीर॥

कवित्त

यामें धौंस तलब की रहति उपाधि, सेना
पकरैं अगारी, बाकी रह षेत षषारी में।

पँट दैनी परति, यजारदार आमिल कौं,
लगै मलजाम, कहूँ होत चोरी चारी में।
'सुकविगुपाल' बडी चाहिय हुस्यारी जो
मदारो के करेते माल मिलै मुपत्यारी में।
होति मार मारो, बिसौ दवत में मारी, बडो
भारी होइ ख्वारी, या करत जिमीदारी में

यजारदारी

पुरुप वाच

गाम यजारो[1] लत में, जग में जागति जोति।
भिक्षुक दोन दुपोन की, परबस्ती बहु होति॥

कवित्त

जामें नित भेट, पलै जोवन के पेट, सदा
बयो रहै सेठ, मजा मारत तिजारे में।
बार न लगति होति आमदि हजारन की,
घरि के वहार, छक्यो रहत तिजारे में।
भापत 'गुपाल' हुक्म हासिल हुवैस जाको,
ताको दरवार बयो रहै गुलजारे में।
देव हर हारे, बात मानैं बूढ बारे, याते
भारे सुप होत लेत गाम के यजारे में।

स्त्री वाच

दोहा

देर न लागे परझने, सुरझत लागे बार।
याते भूलि न[2] हूजियें, गाम यजारेदार॥

---

१ ह० यजोर   २ ह० बवहु न

कयित्त

दाम पट यामें, मारे मरें, जिमीदारी के पेचन ते उन छोजें ।
सती में होत 'गुपाल' कछू न, किसान की जो परवस्ती न कीज ।
हाल ही होत हवाल बुरो, जो जवाल परे पे जमा नहि दीज ।
भूषहो जीजें, कि ल विप पीजे, प मूलि के गाम यजारें न लीज ।

गाम बैनामा

पुरुष वाच

त्योर होत हैं राजसी, राजसीन सों हेत ।
जिमीदार दबते रहे, गाम बिनामा लेत ।

कवित्त

रयति से रहें सब जाके जिमीदार लोग,
दबे सब जाति सिरकार रहें हेत में ।
'सुवविगुपाल' घर घूरो रहे हाथ सब,
जाही को सु होत त्रण तरु जितो पेत में ।
अठिबो करत, जमा पठिवो करति, ओं'–
सदा कों चल्यो जात, नही रुक लत देत में ।
पावत अरामो रावें राजसी सुसामों, मोग
मोग्यो कर धामा, सो विनामा-गामा लेत में ॥

स्त्री वाच

दोह

दीसे महुं नहि बाम को, नाम होत बदनाम ।
पाव नहीं अराम कहूँ, बनामा ल गाम को ॥

कवित्त

पहलें परचने हजारन पचत रुपे,
पाछें सिरकार में भरतु रहे दामा कों ।
घूस दे अनेकन कों, तामा को लिपावें पत्र,
तऊ डर है जिमीदारन की घामा कों ।
'सुकवि गुपाल' लोग रापने अनेक परें
होत जब काम छोडि बैठे निज घामा को ।
जात जिय जामा, वाज फिरें डोल डामा होत
लीजियें न नामा, याते गामा के बिनामा कों ॥

किसान[1]

पुरुष वाच

गाम बिनामा[2] छोडि व, षेती करिहों वाम ।
सब जग जाके करे तें, पात पियत निज धाम ॥

कवित्त

सातहू बिरह दही दूध के रहन सुप
लीयो करें स्वाद, औ रसाल नई नई को ।
नितप्रति रहै सातो पोनि पें हुकम,–
सिरकार में रहत भलो ठरसा ठकुरई को ।
जीवें जग जाते, जीव जनु कों कनूका मिलें,
पिल भली बात, यह कांम मरदई को ।
कहत 'गुपाल' बीस नहूं की कमाई, याते
सबही में भली यह पसो किसनई को ॥

---

१ है० षेती   २ है० पजारो

स्त्री वाच

दोहा

पेती करत किसान पै मो ते दुप सुनि लेउ ।
हर लकें पिय पेत में, भूलि पाँव मति देउ ।।

कवित्त

कारी होति देह, सहै सीत घाम मेह, नित
रहै लेह देह, सुप नही पान-पान कौं ।
बरहे में बास, रापै बोहरे की आस, ईति
भीति ते उदास गिर मानत इमांन को ।
बाजै देत पोता, हर जोता सुप सोता, नाहि
पोआ दिन मौंहो, रहै लेस न समांन को ।
देह में न माँस, रहै हाथ में न दाँम, याते
कहत 'गुपाल' काँम कठिन किसान को ।।

स्यारी

पुरुस वाच

पारो घनो होइ, बडो भारो सुप रहै, सब
कोई करि लइ, यामें काम नही प्यारी कौं ।
थोरो पर बीज, थोरि लागति, थोरे दिन में–
(बहुत) कमाय लाय डारें घर बारी कौं ।
'सुकवि गुपाल' हाल लाल परिजात, कछु
लालो नहिं रहै, कुआ पल्लर की स्यारी कौ ।
बनि जाय प्यारी, चय बरहा न क्यारी याते
बडो सुपकारी, सदा पेत यह स्यारी कौं ।।

स्त्री वाच

परँ मड़सारन, गमारन को पानो, होत
गुर तन रावत ही हारि जात जेती है।
'सुकवि गुपाल' पूरो किसान न बाजै, कछू
गरज न सरै, फोऊ करो क्यों न पेती हैं।
चारि मास रहै, असमान ही कौं मुप वयें,
सुप नहीं अूचे नीचे पटपर रेती हैं।
पसम के सेतो, होति घने मेह हेतो, बहु
प्रानन कों लेती, यह स्यारी की सुपेती है॥

उनहारी

पुरुष वाच

ब्यौसत कमेरे, घर हेरे जे सबेरे ही तें,
पेरे बीच, साझो पट्टो मिले बिसेदारी कौं।
सुकवि 'गुपालजू' अुपज बडी होति सैक-
-रन मन जिसि आय परै घरबारी कौं।
बढत 'गुपाल' दोअु सापि बीच सापि बर-
-दाजो बडो दीसै कुआ पल्लर की त्यारी को।
बोहरे भिपारी, रुप रापैं जिमीदारी, कवो
आवति न हारी, अुनहारी बीच हारी कों॥

इस्त्री वाच

हारी छकि हारिन की कारी पर देह, थकि
जाय बैल मारो, बाको रहै न अुनारी में।

यात जिम गोत, घना मानत न जोत छोत
देषत ही जात दिनराति अआ वयारी में ।
चाहिये 'गुपाल' बीच पादि वडी भारी, ओरो-
छोरो डर त्यारो सामी रहै आमें प्वारी में ।
बनति न न्यारो, वडो चाहिय तयारो, याते
स्यारी ते सरस दुष होत अनहारी मैं ॥

पटवारी

पुरुष वाच

षेतन कौं अब नापिहै, करि जरीव की सार ।
लिषै पढ़ैं, कागद करें, बनि 'गुपाल' पटवारि ॥[१]

कवित्त

लिष्यौ जाको मानें, सिरकारहू प्रमान, मन
मानें जोई ठानें, जानें पेच जिमीदारी को ।
जेवरी परत, दाम पोता के भरत, जमा
घटि बढि करत, करत मुषत्यारी कौं ।
राज के फिरत, काज केते के सरत, जाते
जाके हाथ हैं क होत काम बिसेदारी को ।
राज दरबारो, बूझ सब ते अगारी, यौं
'गुपाल कवि' भारी याते पेसो पटवारी कौं ॥

---

१० में सोरठा   बनि गुपाल पटबारि, षेतन को अब नापिहैं ।
करि जरीब की सार लिषें पढ़ै कागद करें ॥"

इस कवि की यह प्रकृति मिलती है कि दोहे को चाहे जब सोरठे में परिवर्तित कर देता है ।

स्त्री वाच

सोरठा

और करहु रुजिगार, पटवारी नहिं हूजियै ।
याके दृव्य विचारि, कहति श्रवन सुनि लीजिए ॥

सवैया

जाकी ओ कज बतावत में, सो किसांन को रिछहू ते मुष सूजे ।
हाथु ही हाथु में टूटत पाथु, सी[१] सेना सदा सिरकार को भूजे ।
"राय गुपालजू" षेती में जात जरीब के कागद ते मन घूजे ।
पूजे जु पाइ के, ग्राम में सूजे, पै गांमन को पटवारी न हूजे ॥

कवित्त[२]

जाकी अेक बात साची होति न हजारन मै,
सबै घमकाय गरे काट्यौ करै काम मैं ।
"सुकवि गुपाल" घूस पच्चर के लवे काज,
करिके फरेबी, फूट रावै ग्राम ग्राम मै ।
हाकिम सौं मिलि, करि लुटकी गरीबन की
पोटी परी कहि, पामी पारि देत काम मै ।
होत बदनाम, सब कहत हराम, चांदि
पिटै आठो जांम, पटवारिन की गांम मै ॥

कानूगोह

पुरुष वाच

कांम परै परगनन[३] को, बूप राज में होइ ।
याते कानूगोह को, बडो यजाफा होइ[४] ॥

---

१ है० टूटेंगे पाय औ'   २ है० म नही है   ३ है० सब गाम
४ है० दरजा भारी जोइ

कवित्त

जेते पातसाही परमाने रहै जाके हाथ,
जानतु है बात, परगनन की गोई कौं।
सबते पहल,[१] जाके दसपत होत, राजकाज
में "गुपाल"[२] आइ पूछत है ओई कौं।
अदक' रु जीना, चुगी राज के करीना, चदा
पूछ ही पै मिलत फिरस्त माझ कोई कौं।
लिख्यो[३] सही होइ, भेट देत सब कोई, याते
सबमें बडोई, यह काम[४] कानूगोही कौ ॥

स्त्री वाच

गाम गाम परगनन को लिपत बडो दुप होइ।
याते कबँहु न जाय[५] क हूज कानूगोह ॥

कवित्त

रापने परत रुजनामे परमाते हाथ,
करनी परनि गाँम गामन की जोह कौं।
दैनो परै डड, इचै पिचै फलै मड, जब राज
के फिरे[६] पै जो बताबत न टोह कौं।
काहू को "गुपाल" जो करी ना कब्ज करै तो प
कृपन कगाल कोस्यो करै करि कोह कौं।
होत बडो तोह लीग करमो करै द्रोह याते
बडो निरमोह रुजिगार कानूगोह को ॥

---

१ है० सुकवि गुपाल   २ है० के फिरत   ३ है० लिपी
४ है० रुजगार   ५ है० मूलि   ६ है० बदले

जामिनी

पुरुष वाच

जिमीदार ते लै जमा करू जामिनी जाइ।
दाम दिवाऊ राज के, लाऊ हास[1] कमाइ॥

कवित्त

मामले बनाइ कें, हजारन रुपैया लेत,
लेत अरु देत, हेत रहु सदा ही को है।
बूझ करै राज दरबार तहसीलदार
जिनसि के काटत में दीयो बरै घी को है।
"सुकविगुपाल" साहूकारे में बढति साषि,
भाषि कें जुबान सोदा कर सबही को है।
गाढो होत हीको, काम करत सब ही,[2] को, सदाँ
याते यह नीको रुजिगार जामिनी को है॥

स्त्री वाच

सोरठा

घर बैठो सुप पाइ, अरु मन आवै जो करो।
कीज कबहुँ न जाइ, जिमीदार की जामिनी॥

कवित्त

राज दरबार इत ऊत में फिरयोई डोलै
लालो करि नाहक पराये काज अरियैं।

---

१ है० बहुत   २ है० सही

टूटत में बाकी जो असामी भजि जाय कहूँ
बात रहै जब तब आप दाम भरिये ।
देत नहीं किस्त तो सिकिस्त लगि किस्त बात
सुकविगुपालजू फरेबिन ते डरिये ।
भूखें दिन भरियें कि खाय विस मरियै
गामन के लोगन की जामिनी न करियें[1] ॥

तहसीलदारी

पुरुष वाच

छाँडि[2] जामिनी करहुँगो, गामन की तहसील ।
धन कमाइ कें लाइह,[3] तनक करू नहि ढील ॥

कवित्त

गाम पै हुक्म, परगने पै दवाजु रहै,
चाजु रहै हिय, मजा लेत सब ठारी में[4] ।
हाली औ[5] मबालिन में, होत[5] ज्वाब साली, हरि
साली नफा लालिन में, तेल बात सारी में ।
'सुकवि गुपाल' चलो आमें सहुगाति भेट,
सेठ बनि सदा माल मारै मुफ्त्यारी[6] में
मोटो रहै भारी, कबहो न होति हारी, दव्यो
घर जिमीदारी, सदा तहसीलदारी में ॥

---

१ है० अँगरजी लोगन की नाजरी न कीजिय ।
वृदावन प्रति म यह पाठ भ्रमवश हो गया है ।
ऊपर का पाठ है० और वृ० दोना मे है ।
२ है० छोडि ३ है० सुप पाइहा
४ है० नरनारी ५ है० तैं करि ६ है० मजेदारी

स्त्रीवाच

"कविगुपाल" जो आपनों राप्यो चाहत सील।
तो कवहूँ नहिं कीजियै, गामन की तहसील॥

कवित्त

त्यागि निज गाँम, घिर्‌यो रहै आठो जाँम, होइ
नाँम वदनाँम, काँम जोम जरवोल को।
करने परत हैं कसाई केसे कम, जव
राज वदले पै, जो वतावत न टोह कौं[१]।
मार[२] वध[३] डड यै लिलाम करि लेत याते
कहत "गुपाल" यह काम न असील को।
चाहत जो सील, माफ कीजै तकसील, तोप
भूलिहू के कीजियै न काम तहसील को॥

सहना

पुरुषवाच

गई गाम में जाइ के तव कोऊ सहना होत।
पत माँझ पितिहार ते, तव यतनें सुपहोत॥[४]

कवित्त

षेत ओ' किपार जे निगाह में रहत, जिमी—
दारन ते माल मारयो करैं दिन रना कौं[५]।

---

१ है० राज के पइमें देत कोई करै ढोल को।
२ है० मारि ३ है० म० वाँधि ४ है० मु०
"जमींदार के गाम को जो कोई सैंना होइ।
षेत प्यार पितियार तो य सुप विल्स सोइ॥"
मुद्रित में तुक होन। होन की है।
५ है० मु० को काम नित पर लेना देना को।

'सुकविगुपाल' चाक रासि पै लगाइ पिति-
हारन ते धाम सदा परै लैना-दैना को[1]।
बन[2] रहु मोर, नित पात[3] चांड पोरि, सदा
पोढि कै अथाइन मैं, लीयौ करै चैना कौं।
देप मजा नैना, कमी कछू की रहै ना, याते
बडो सुप दाता रुजिगार यह सैना को।

स्त्रीवाच

दोहा

घर छोडै गामन अर, परै पराऔ आन।
याते भूलि न छूजिय, सैना पेत किसान॥

कवित्त

मारनो परतु है गमारन ते[4] मूड पिति
हार जिमीदारन ते नित तन लूजियै।
चौकहु लगायें, चित चिंता ही में रहै,[5] रासि
घटि बढि जायतो पकरि करि भूजिय।
'सुकविगुपाल' याकै पहरे कौं लेत देत
पायबे को भोजन, वपत पै न पूजियै।
कबहो[6] न चैना, दुप देष्यो करै नैन[7] याते
मेरे मानि बन,[8] कहु सैना नहिं छूजियै॥

१ है० मु० माल यारनो करैं दिन रैना को।
२ है० बयो ३ है० पाय
४ है० मु० जमीदारन सौं सदा मूड, और पितियारन ते मित तन घूजिए।
५ है० कहू कहीं'। इस शब्द से अर्थ अधिक स्पष्ट होता है।
६ है० मु० पसहू ७ है० मु० नना ८ है० मु० बना

ग्वार

पुरुस वाच

जबहू दिवारी के दिना, गोधन पूजा होइ ।
ग्वारन कौ आदर करै, घर घर में सबकोइ[१] ॥

कवित्त

नित गोरज[२] गग मे न्हात रहै परब्यो कर पोहै हजारन कौं ।
बहु पात रहै सदा दूध दही, बन की रहि लेत बहारन कौं[३] ।
मिलि हेरी दै हरी कौं गायो वर, जब जात है गोधन चारन कौं ।
यह 'राय गुपालजू' याते भलो सब में रुजिगार गुआरन कौ ॥

स्त्री वाच

दोहा

अेक न विद्या आवही, कोरो रहत गमार ।
याते जाय कवो[४] नही, हूज कबही ग्वार ॥

कवित्त

झार झूकटन ही मैं डोलत रहत, अुजरे–
पै[५] पेत बचार, लगै मारि ग्वारिया को हैं[६] ।
घर छोडि बरहे को बेवर्नो परत, परै
रापनो सम्हार आई गई की सुताको[७] है ।

---

१ मु० ग्वारन को भारो सब घर घर आन्दर होई । २ मु० गोरस
३ मुद्रित प्रतियें प्रथम और द्वितीय चरणा के उत्तरार्द्धों म परस्पर विपर्यय विनिमय है । ४ मु० बहूँ
५ मु० 'उभैरेप' है । पर इसका कोई अर्थ नही है ।
६ मु० गारी मार याका है । ७ मु० सुवाको है ।

'सुकविगुपालजू' कहायत गमार गृवार,
विनटत पोहे[१] दाम दने परें ताको[२] हैं।
बुरी चहुँधा को, तन कारो होत ताको,[३] याते
सब में लराको, यह कौम गवारिया की हैं॥

[४]"इति श्री दपतिवाक्य विलास नाम काव्ये सहर प्रबध
वणन पच दशो अध्याय"१५'

---

१ पी हो २ जाको (मु०) ३ जाको मु०)
४ मु० म -'अति श्री दपति वाक्य विलास नाम का्ये प्रवीजराय आत्मज गुपालकविराय विरचत शहर प्रबध वणन नाम नवमो विलास ।'

षष्ठदस विलास

राज प्रबन्ध[1]

पातसाही[2] पुरुषवाच

*पुरप वाच

राजा-राअु-राना वर जोर आगे ठाढे रह
निष्ठो जात अन में मुलक सव ताई कौ।
'सुकविगुपाल' चारि मूबन पै हुकम ताकौ,
जाके रहै अूपर सा जेजिया न काई कौ।
वजीर नवावन के रापने परत रप,
मुलक अवाद वरनौ परै मवनाई कौं।
होत बातसाही, परि जात बात साही, याते,
बडा आनसाही, यह काम पातमाही कौ॥

स्त्री वाच

करने परत मनमूबे सब सूदन के,
नोरन परच करिवे कौ चय जाई कौं।
'सुकविगुपाल' मुमनमानी हो में मिलै ये,
हिंदमानी माल मिल कवही न थाई कौ।
वजीर, नवावन, के रापन परत रप,
मुनक अवाद करनो परें सव ताई कौ।
होत बातमाही परिजात बातसाही याते,
बडा आतसाही यह काम पातसाही कौ॥

---

१ मु० अथ राज प्रबन्ध तत्रादि राज रजिगार।
२ यह दा विषय है० मु० म नहा ह।

नवाबी[1] पुरुष वाच

जते पातसाही सुप भोग्यौ कर नितप्रति,
जाके हाथ रह पच सूबे के हिसाव कौ।
'सुकविगुपालज् हुजूर मे कर . सौ होइ,
दुनप न कोऊ सब धारें धूरि पाव कौ।
कर सर मुलक, अनेक दाव घावन सौ,
चायन सा याय निवराव राय राव कौ।
दब अुमराव देस मानत दवाव, यातें
होत बडो रुवाव पातसाही मे नवाव कौ॥

स्त्रीवाच

पावै छुटकारी न निमाफ ओ हिनावन ते,
जावत ही जात मप राव भुमराव कौं।
करि न सकत कोई वात गोरि सार मस्त
होइ जात हाल यामें पी करि सरात्र का।
'सुकविगुपाल' घन चय दात्र-घात्र तत्र
पावत है चात्र टर रहै परतात्र कौ।
परत दवात्र जब रहन न आत्र, वडे,
होतट पराव काम करि क नवात्र कौ॥

राजसुप[2] पुरुष वाच

ईश्वर रूप कहाव ही होइ[3] मत्र को सिरमौर।
रजई के सम सुप नही तीनि लाक[4] में और।

---

१ यह विषय है मु म नहीं है।

२ मु राजा ३ ग्गार ३ मु हैं ४ है मु कोउ जगत

कवित्त

परम प्रताप परसिद्धि देस देसन में,
प्रजा प्रतिपाल पुन्य पन प्रगटाइ कैं।
साधि सत्य-सील, कोस देस कौं वढाय सत्रु—
सामन कौं[1] नामन, के अग्रता[2] दिपाइ कैं।
'सुकविगुपाल' दान दुनन[3] दिवाय, मर—
मुलक कराइ वुध वलहि वढाइ के।
आय कैं हजूर, सुप रहै भरिपूर, वटौ[4],
आवत सहूर, नृप पदवी कौं पाइ कैं॥

स्त्रीवाच
सोरठा

देपत सुप अधिकाइ, पुन सुप दुप ही रूप है।
तीनि लोक में नाँहि, नरपति के से दुप कहूँ॥

कवित्त

सभासद जुत, पावै नरक में वास, काम—
—क्रोध-लोभ मोह-मद-मत्सर वढाऐ में।
विद्दति अनेक, नान-ध्यांन न विवेक, वनै
भारी भय होत, जामैं[5] रिपि के दवाऐ में।
'सुकविगुपाल' जाके[6] धन वे गृहे या पाप—
लागत सराप, आप प्रजा के दुप्याऐ[7] में।
तीनि लोक पायैं[8] तृष्णा घटै न घटाऐ, याते
सवते सवाऐ दुप राज-पद पाऐ में॥

---

१ है० कैं २ है० दीनता ३ है० मु० दीनन ४ है० मु० वहु।
५ है याम ६ है म तावे ७ है दवाये ८ है मु आयें

दीमानी पुरुषवाच

दविज दीनन को दान, गुनमानन को सनमान।
मान होत सब देस में भज दीम[1] दीमान ॥

कवित्त

राज को पईमा, जमा हान सब जावें आय
ताके हाथ परन रहन राजा रानी को।
जाको बाधी-टारी कान काई रोकि मन, ताको
महर मजे पै काम हातु है जिहान को।
सुकविगुपाल' न्याव मामले अनेक करि
लीयो कर सुप भल सेई रजधानी को।
होत वडो दानी, सदा कर[5] अवादानी, वात,
देसन में जानी, जाति करत दिमानी को ॥

स्त्रीवाच

दोहा

न्याव मामले परत मे, अरु हिसाव की पोत।
रहै वडो टर राज को देस दिमानी होत ॥

---

१ है० देस २ ताकी ३ है राप

राजचाकरी[1]

पुरुषवाच

मन्त्र वकील पजानची दाना दवप ग्मिार।
अरु बक्सी रुजगार करि, लाऊ धन ऽ प्रमान॥

मन्त्री को मदाई सब मान्यौ करैं मन्त्र औ
वकीलई में राजा हरराय कर जेते हैं।
दानपुन्य होत दाना दग ही के हाथ औ'
पजानची के हाथ धन मदा रहै तेते है।
चोबदारी माहि पर सबही को काम आइ
है क हलकार महैं मागो मौज लेते है।
सुकवि गुपालजू कह न जात येते इनि
चाकरी में चाकर को होत सुप ते ते ह॥

स्त्रीवाच

राज्यधान खानो परे, करत चाकरी माहि।
मो ते सुनि रुजगार ये, इतने कीजै नाहि॥

मन्त्रई में साची कह मालिक रिसैहै, औ'
वकीलई में सदा परदेस दुप रहिहौ।
दानादक्ष ह्वहौ नहि द हो ताके बुरे ह्वैहौ
दौलनि सँभारत पजानची ह्वै वहिहौ।
चोबदार माहि ठाडे राह है दरबार द्वार
बनि हलकार सदा आगे जाम रहिहौ।
'सुकविगुपाल' मेरी बात को न ताहिहौ,
तौ सबते बहुत दुप चाकरी में सहिहौ॥

---

१ यह प्रमाण दृ नौर 'मु म नही है।

कवित्त

करत भलाई दुरवाई आइ रहे हाय,
भले बुरे मांमले के बीच के करत मैं।
चुगल चवाइन सौं, कांप्यौ कर देह, डाढि
लीपो जात नेक में फरेबी निकरत मैं।
'सुकविगुपाल' राज–काज को रहत[1] बोझ,
मार्‌यो जात राजन के क्रोध के धरत में।
पाप की निसांनी होत मानी अभिमांनी, मति,
रहति दिमानी, या दिमांनी के करत मैं॥

कामदारी[2] पुरुष उवाच

केतिक केतिक नरन के, बढ्यौ करत बर कांम।
कामदार के काम ते, होत जगत में नाम॥

कवित्त

होति मुखत्यारी, अधिकारी सब बातन की,
जाके हाथ कैं होत काम दरबारी कौं।
'सुकविगुपाल' निज अक्कलि के जोर जोर,
तोर करि करि माल मारे नरनारी कौं।
सज को बनाय, दरबार के निकट रहै,
आपने अगारी नही गनै धनधारी कौं।
दबै कारबारी, बात आमैं सिरकारी, याते,
सबही में भारी यह काम कामदारी कौं।

---

१ बोझ राज को रहत।

२ यह विषय मू म नहीं है।

स्त्रीउवाच

दोहा

जाही मैं भरमार नित सब कामन की होइ।
भलो कहै कबही नही कामदार कों कोइ॥

कवित्त

मिलै न भलाई, कहू कलम कसाई, मुष,
छाइ जाइ स्याही, चोरी निकसै छदाम की।
'सुकविगुपाल' नेकी कर होति बदी, जाको,
बाँधत प्रबध पात जुडि जाति पांम की।
रहत सदाही घर बाहर कौं बुरौ, फली—
भूत नही होत पात कौडी जो हराम की।
छूटै घन धाम, कबी पाव न अराम, यात,
भूलि कै न कीज कामदारी काहू काम की॥

मुसद्दी पुरुष उवाच

बठू गद्दी दाबि कं, बनू मुसद्दी जाइ।
चौहद्दी को ऐंचि धन लाऊँ हाल कमाइ॥

लाषन को लेषो, होत रहै मता जाके हाथ,
सब ही को काम परं भलौ अरु बददी को।
राअु–अुमराअु औ सिपाह को परच जाके,
लिपे ही पै पटत, गरीब औ जुमद्दी को।
'सुकविगुपाल' भले मार्‌यौ करै माल, काट—
फाँस करि करि लेत, देत झारि मद्दी का।
बैठू दाबि गददी, दब्यो करत चहद्दी, याते
सब में विरुद्दी यह काम है[1] मुसद्दी को॥

---

१ है रुजगार

स्त्री उवाच
दोहा

लिपत पढत, कागद करत नैंक न लेइ[1] अराम ।
याते यह सब में बुरो मुसद्दीन कों काम ॥

कवित्त

मारि जात दाम, ताकौ होत नहि काम, तेई,
कहि कै हराम, लोग करयौ कर बद्दी कों ।
कागद सो कागद, मुकाबले करे पै, निकरैं
जौ हमजददी होइ दफतर रददी कों ।
'सुकविगुपाल' यामैं भली बुरी कह बात
रद्दी परिजात बुरौ होतु है चहुद्दी, कों ।
छाई रहे मद्दी, होइ बडो बेदरद्दी, याते,
भूलि क न कीजै काम कबही मुसद्दी कौ ॥

चेला राजा पुरुष उवाच

बने रहै राउ–उमराउ ते सरस, बाला
सब पै रहत' डर रहत न मैला कों ।
होतुह 'गुपाल' सब बात की अगेला बडे,
तोडन पहरि धारैं समला' रु सेला कों ।
रहै अलवेला, मेला ठेला में नवेला, नप
सब ते सवेला, प्यारा रायत अगेला कों ।
सदों सब वेला निसदिन रहै मेला, याते
बडौ होत हेला, महाराजन के चेला कों ॥

---

१ रहत

म्त्री उवाच

कवित्त

जाति निज जाति, निज धरम न रहै हाय,
डरै दिन-राति निज लाग्यौ रहै पला कौं।
भने बुरे कम, वर वरने परन वर्णी
परति गुलामी नोग बुरौ यह वेला कौं।

हाजरा-हजूर हौनौ परत हमेस, तजू,
रहत 'गुपाल' डर हुकम के झेला कौ,
रहै न अलबेला, सब दीयौ करै ठेला, बडे
रह अरझेला राजु राजन के चेला ॥

बतिसलक्षन[1]

सज्जन सुरत्ती, सत्य सुचि सदा तुष्ट सील,
प्राक्रमी प्रवीन उपकारी परदार हानि।
आतम अभ्यासी, बुद्धि- व्रत, विद्या वन, वादी,
विचक्षन, गुण, रूप, देत सव जाका मांन।

इन्द्रीजित अल्प अहारी रति- नीद हनी,
मात पितु गुरु देव भक्त है धनमांन।
दाता, धरमी, कुलीन, मत्रजित, रण, पीन,
लक्षन 'गुपाल' ये मनुस्य के बतीस जानि ॥

अवगुन[2]

कलही, कृतघ्नी, कोढी, कुटिल, कुमति मति,
कायर, कुरूप कुवचन वे कुरस को।

१-२ ये प्रसग है मु म नही है।

वांमन, बधिर, क्षुव्ध, बावरो,' र बालय
अभागी, अध, अधम, अनाथन् मुरग कौ।
गु, गगु जजारी, विभचारी, चार धारी अग,
हीन अहकारी, अतिरागि या पुरस कौ।
मन–वच–काय, सेव सदा सुप पाइ, तिय
सपन न त्यागें यहूँ अस हू पुरस कौ ॥

रानी के सुष[1] पुरुष उवाच

राजा ते सरम जा कौ हुक्म रहत, जानी—
मानी जाति सार रुप होतु है भमानी कौ।
सुकवि गुपाल नृप जाके वस होन, जस
देसन मे फर्ने, दान–मान कर मानी कौ।
सबते सरम, जाको परच रहत होत
चतुर सुसील मान मारें अभिमानी कौ।
पज पनसानी, जाकी राष सब आनी, सुप
अेते मिल आनी, राषु राजन की रानी कौ ॥

स्त्री उवाच

कैद मैं रहति, दीस नर कौ न मुप, सुप
सेज कौ न नित, चित रहै अभिमानी कौ।
'सुकवि गुपाल' तरुनाई गअे याय होत,
छाटौ मिलै पति, सुप जानति न जवांनी कौ।
जतन बडे तै, होत नृप कौ मिलन, रहु
सतवि का दुष, सौति कर प्रानहानी कौं।
रहे क्रोध सानी, मति रहति दिमानी, अेती
रहत गिलानी' रजवारन की रानी कौ ॥

---

१ यह प्रसग है मु म नही है ।

फौजदारी पुरुष उवाच

मदा रहत महाराज को, जाते निस दिन प्यार।
राज काज के करत होई, फौजदार मुखत्यार॥

कवित्त

प्यार रह्यो करै सिरदारन को जाते, सदा
रहत हुस्यार जग जुरत की बार कौं।
मारि मारि रिपु वारि धारि कै हथ्यार सब,
सिमह सँभारि करि देत सिंघ स्यार कौं।
'सुकवि गुपालजू' छतीस कारखानन में
पावतु है सदा राज-काज मुखत्यार कौं।
सानो मुख त्यार, रहै, हाजरि सवार, याते
राज ते सरस दरबार फौजदार कौं॥

स्त्री उवाच

दोहा

जग जुरत को बार, है फौजदार सिर भार।
कहुँ न रहै ठलवारि कहू, रह्यो कर भरमार॥

सिपह को स्वाल, इकबाल को हवाल सुनि,
हाजरी रपोट जानो परत सवारी को।
'सुकवि गुपाल' राज-काज को रहत बोझ,
बृथा जात दिन नेक पावत न बारी को।
करत मुहर, बीत्यो करत कहर, बात
लायति जहर बिन करत हुस्यारी को।
चिंता रहै भारी, कैई रोग रहैं जारी, याते
बडो दुखकारी रुजिगार फौजदारी को।

वाहू वे अगारी नेंक रहै न ठसक सी।
आप चढिआवै, विधो रिपु ही दवाव, तव
रातिदिना यामें वडी रहै धवपक सी।
लगति न जव, रहै नृपति की सब, याते
भूलिहू क हूजियै न राजन कों ववसी ॥

रसालदार पुरुष उवाच

बाँधि ढाल-तरवारि रण मारत सत्रुन सीस।
नृपति रसालेदार कों, मौज देत करि प्रीति ॥
चढ तुरगन प सग प सिमाह घनी, जीत
जग जाइ वाढे किम्मिति हथ्यार की।
'सुकवि गुपाल' सदां रहै नृप पानी वडी
रहै महमानी सेंनापति सिरवार की।
वाढ नाम गाम मिर्ने गहरी यनाम कमी
दाम की रहै त रीय भजे सिरदार की ॥

स्त्री उवाच

दोहा

हय गय चढि कर पगा गहि, वढि-वढि घर घर देत।
तब रसालदारैं कछू, मिलनि यनाम सहेत ॥

कवित्त

बाधने परत तरवारि ढाल माले त्यार,
रापने परत जेते जग के मसाले हैं।
है तरि निराले, सो तिलाले न रहत, प्रान
परै परपाले, लाले रहत न साले में।

काहू के अगारी नैंन रहै न ठसक सी।
आप चढ़िआवें, किधों रिपु ही दवावें, तव
राति-दिनां यामें वडी रहै धकपक सी।
लगति न जक, रहै नृपति की सक, याते
भूलिहू कें हूजियें न राजन कौं ववसी॥

रसालदार पुरुष उवाच

वांधि ढाल-तरवारि रण, मारत सत्रुन सीस।
नृपति रसालेदार कौ, मौज देत करि प्रीति॥
चढ तुरगन प मग पै सिमाह घनी, जीतै
जग जाइ वाडे किम्मिति हथ्यार की।
'सुकवि गुपाल' सदां रहै मुप पानी वडी
रहै महमानी सेनापति सिरदार की।
काढ नाम गाम मिनें गहरी यनाम कमी
दाम की रहै न रीय भये सिरदार की॥

स्त्री उवाच

दोहा

हय-गय चढि कर पगा गहि, वढि वढि घर घर देत।
तब रसालदारें कछू मिलति यनाम सहेत॥

कवित्त

वाधने परत तरवारि ढाल माले त्यार,
रापने परत जेते जग के मसाले हैं।
है करि निराले, सो निराले न रहत, प्रान
परें परपाले, लाले रहत न सानें में।

'सुकवि गुपाल' कहूँ नहीं हालें चालें जाके
देपत पसाले मन परत फसाले में।
सबही गों सालें, सदा रहै काल गालें, रहै
कितने कसाले रसालेदार गों रसाले में।

मुसाहिब

दोहा

रहत सदा आराम में जुरत पजानें दाम।
साहब कौ पुस रापिबौ मुसाहबन कौं काम ॥

कवित्त

सुनै राग-रग, भोग भाति भाति भोग, सग
गुनिन के गुन सुनि, आनँद बढाइयै।
तिनही सौं सब, सब बातन कौं बूझें, मत्र
रहत मुतन, प्यार नृप कौ सिवाइयें।
'सुकवि गुपाल' बैठि बरबरि राजन के,
काजन कौ-सारि हिय वैरिन के दाहियै।
दबै राउ-राइ, होइ दरजा सिवाइ, याते
बडी सुपसाहिबी, मुसाहिबी मे पाइयें।

स्त्री उवाच

दोहा

पचत नहीं कहुँ हाजिमा रहत भोर अरु साँझ।
मिल न कहु सुष साहिबी, मुसाहिबी के माझ ॥

कवित्त

रहनों परै पास हजूरहि के पुनि मारे परैं हैं दुसाहिवी में ।
निसवासर ही जिय जायी वरै, दरवाग्नि की सुमु साइत्री में ।
मुप जोवत ही जिय जात सदा, मिलै पान न पान कुसाहिवी में ।
यो 'गुपाल' कहै न पर जितने, तितने दुप होत मुसाहिवी में ॥

पोतेदार[1]

ओजदार[2] भारी रहै वोझदार होइ चित्त ।
फौजदार दवते रहै पोतदार[3] ते नित्त ॥
फौज को परच जाके वर ते अुठत जाको
कटि व कटोता रुक्या पटै दरबार को ।
राज[4]को पजानो सब जाके जमा होत आप
होत जमाबद लेंनो परै न अुधार कौं ।
'सुकवि गुपाल धन रहै कँअू राह[5], वहु
लै करि[6] अुमाह, साह रहत वजार कौ ।
दवै सिरदार, रुप राप जिमीदार, याते
बडो ओजदार, रोजगार पोतदार कौ ॥

दोहा

गाम गाम परगनन को, जमा होइ नहिं जाइ ।
बोप[7] परैं सब राज को, पोतदार[8] सिर आइ ॥

१–३ मु पातदार ४ मु राज्य
५ मु वेऊ सिक्का के रहन स्पे
६ वरिके ७ मु बोज ८ मु पोजदार

कवित्त

ऽन पर्ग दाम लैनो परनि रगोरि, लोग
गारी दयो कर थाट फांसा फो जारी मैं।

दोननि म भिनटे पै, मार–बांध होत जब
पटत न रावा जिय आद जात[1] नारी में[2]।

'सुकवि गुपाल' जाय जुर जब जग तब
मग न पजानों जानों पर भरमारी में[3]।

रहै बोम भारी चार चार करें ख्वारी याते
होत दुख भारी पौनदारें पोतदारी में[4]॥

दरोगा पुरुष उवाच

कछ काम प जाइ क, होइ दरोगा सोइ।
राजा के घर ते सदां, तब इतने सुख होइ॥

कवित्त

तेज बढ भारी, सिरदारी मांझ गयो जात,
मारयो कर माल, मिलि–घुलि जाई ताई में।

'सुकवि गुपाल' भलों भयो करें हाथन ते,
बातन की पाय, सदां बैठ्यो रहै छाई में।

सबहि को प्यार,[5] काम परमुपत्यार, धन
बढत अपार, कबू काम रहै धाई में।

कीरति अबाई, बडी होतिह बडाई, याते
सब ते सवाई है कमाई दरोगाई में॥

---

१ मु जाय २ म म यह ततीयचरण है। ३ मु म यह द्वितीय चरण है। ४ मु म के स्थान पर को है। अंतिम चरण इस प्रकार है वडो दुखकारी रुजिगार फोजदारी को। ५ मु नपनि का प्यार। यह चरण मु म द्वितीय है।

स्त्री वाच

दोहा

टीकौ लागत लील को, बिगरि जाइ जौ काम ।
दरोगई के करत में नाम होत बदनाम ॥

कवित्त

देइ नही जाय, रिस रह्यो करै सोई सदा,
दोस आय रहै, सहै सबही पै नाम को
राज को 'गुपाल' नित रहै डर भारी, छुटकारो
न मिलत, इक छिनहूँ अराम को
काम बिगरे पै टीको लील को लगत सिर,
बडो कष्ट करि यामें देवें मुप दाम को
टूट्यो करै पाम, पडो देप्यो करै काम, याते
भूलि क न हूजियै दरोगा काहू काम कौं ॥

पजानची पुरुष वाच

राज रहत आधीन नित बडे बडे सुप लेइ ।
है पजानची राज को, काम परै धन देइ ॥

कवित्त

रहत अधीन राज-थान के सकल लोक,
भोग कर्यो करत, कुवेर के समाने कौं ।
नमे औ' पुराणे[1] कै पजानन कौं जानै आन,

---

1 है पुरान

कवित्त

दने पर्‍ दाम सनी परनि रसोदि, लोग
गारी दया क॰ पाट फांसन पी आरी में।
दौननि प दिनठे प, माग–वाँध हान जब
पटन न रवमा जिय आइ जात[१] गारी में[२]।
'मुरनि गुपाल जाय जुग जब जग तब
मग न पजानौं जानौं परे भरमारी में[३]।
रहै वोन भारी चार चार करे प्वारी याते
होन दुप भारी पोनदारेँ पोतदारी में[४]॥

दरोगा पुरुष उवाच

कछ काम प जाइ क, होइ दरोगा सोइ।
राजन के घर ते सदा, तब इतने सुप होइ॥

कविन

तेज बढ भारे, सिरदारी माझ गयो जात,
मार्‍यौ कर माल, मिनि–भुलि गाई ताई में।
'सुकवि गुपाल' भलौं भयो करे हाथन ते,
बातन को पाय, सदा बैठ्यो रहै छाई में।
सबहि को प्यार,[५] काम परमुपत्यार, धन
बढत अपार, कऊ काम रै धाई में।
कीरनि अवाई बडी होतिह बडाई, याते
सब ते सवाई है दगाई दरोगाई में॥

१ मु जाय २ म म यह ततीयचरण है। ३ मु म यह द्वितीय चरण ह। ४ मु म के स्थान पर को है। अन्तिम चरण इस प्रकार है बडो दुखकारी हजिारर पोजदारी को। ५ मु नृपनि का प्यार। यह चरण मु म द्वितीय है।

कवित्त

हेत रह्यौ करत सिपाह, सूरबीरन कौ,
वडौ रणधीर होत किम्मती हथ्यार कौ।
जग में अुदोत सदा राजा पुस होत, मिल
गहरी पनाम धाम परं मार-धार कौ।
'सुकवि गुपाल' रप रापत है जेते[1] तिन
देत अस्त्र-सस्त्र मोल महँगे अपार कौ।
राज दरबार, सिलपानें मुपत्यार भय
यतने अगार सुप होत सिलेदार कौ॥

स्त्रीवाच

दोहा

सिलपान मे जाय मति सिलहदार होअु कोइ।
लेत देत हथियार कौ, वडौ राज डर हाइ[2]॥

कवित्त

करे न सँभार जोपै बिगरै हथ्यार, वडौ
रहै डर भार, महाराज के रिसाने कौ।
लेत-देत, गिरत-परत, जिय ज्यान लगि
जात में विस्वास नहीं आपने विराने कौ।
'सुकवि गुपाल' कर कालिमा कलित रह
नित प्रति यामें धाम परं बनवाने कौ।
अति ही कठिन पहचान कौ सुकाम याते
भूलि कै न हूजै सिलैदार सेलपाने कौ॥

---

१ मु है तई २ है इथन डर नित होइ।

दबै के ठिकानें रहै हिम्मिति बँधाने कौं।
'सुकवि गुपालजू' भँडार पोलि देत धन,
काम आय परे, जब जग के जिताने कौं।
राज सामानें, सब रापें आनकानें, याते
बड़े सुप पामें, है पजानची पजाने कौं॥

स्त्री उवाच

राज्य षजाने में रहत रहत बडौ शिर भार।
जिय जोप्यो के ज्यान ते, कापति देह अपार। [१]

कवित्त

दौलति सँभारतहि जात दिनराति, नित—
प्रात ही ते लेत देत धन तन घजियैं।
चोर औ' चगल, नृपराज कौ रहत डर,
होइ मार-मार न पमारि पाय सूजियैं।
परच नढे[२] पै गढ टूटत लरे पैं, राज—
काज के फिर प तौ पकरि करि भूजियैं।
'सुकवि गुपाल' याते मेरी सिप मानि, कहूँ
राजन कौ आंन कैं पजानची न हूजियैं।

सिलहदार पुरुष उवाच

सिलह पान में सुपय ते सिलहदार कौं होइ।
सूर वीर रनधीर हित, सदा करत सब रोइ॥

---

१ मू म यह दोहा है, व में नहीं है। २ है परे

कवित्त

हेत रह्यौ करत सिमाह, सूरवीरन कौं,
वडो रणधीर होत हिम्मती हथयार कौं।
जग में उदोत सदा राजा पुस होत, मिल
गहरी यनाम काम परें माग-धार कौं।
'सुकवि गुपाल' रुप रापत है जेते[1] तिन
देत अस्त्र-सस्त्र मोल महँगे अपार कौं।
राज दरवार, सिलपानें मुपत्यार भये
यतन अगार सुप होत सिनेदार कौं॥

स्त्रीवाच

दोहा

सिलैपान में जाय मति सिलहदार हाउ कोइ।
लेत देत हथियार कौं, वडो राज डर होइ[2]॥

कवित्त

कर न सँभार जोप गिरैं हथ्यार, वडौ
रहै डर भार, महाराज के रिमाने कौ।
लेत-देत, गिरत-परत, जिय ज्यान लगि
जात में विस्वास नहीं आपने विराने कौ।
'सुकवि गुपाल' कर कालिमा कलित रहै
नित प्रति यामें काम परे दनवाने कौ।
अति ही कठिन पहचान को सुकाम याते
भूलि कै न हूजै सिलैदार सेलपाने कौ॥

---

१ मू है देई २ है इतन डर नित होइ।

दानादक्ष : पुरुष वाच

दाना दक्पन हाथ ते, दान होत दिन राति।
दुपी दीन द्विजराज गुन, मान सराहत जात ॥

कवित्त

जाके हाथ है क ही परच होत लप्यन[1] को,
देई–देव, तीरथ औ' सुकरम पक्ष कौं।
ह्वै करि दयाल, सो निहाल करि देत हाल,
भरिक भँडार माल मेंटें दुप–तुक्ष कौं।
'सुकवि गुपाल' निसदिन यहीं काम, गुनमान
सनमान प्रतिपाल बाल वक्ष को।
भूपन को भक्ष पुन्य दान दीन रक्ष, याते
सवही में स्वक्ष, यह भाम[2] दानादक्ष को ॥

स्त्री वाच
दोहा

राजन के घर को सदा, होत हि दानादक्ष।
दुपी दीन दुप देपतें होतह पाप यलक्ष ॥

कवित्त

सो तो रहे माई औ' पिसाई रहै सेव पुन्य—
पाप हा। आई बुरवाई रहै माय कों ।
वेद[4] नहि जाय,[5] ताको आतमा दुषित होत,
तुपित न रह पाम जाम जो मैं गाय कौं।

---

१ है सक्षण २ है स्नगार ३ है धाय ४ है ५ जाती

'सुकवि गुपालजू' प्रतिगृह कौ देत लेत
दुपी औ' अनाथ दीन छाँडत न साथ को।
सतन के साथ, सुनौं हरि गुन गाथ, नाथ
भूलि व न हूजे दाना-दवप नर-नाथ कौं॥

मत्री राज पुरुष उवाच

राजन के दरवार मे मन्त्रि मत्र जव देत।
जग[1] जीति जुलमीन सौ जवै जीति जस लेत॥

कवित्त

होत[2] गुनमान, चौधौ विद्या के निधान, नीति--
याव के विधान जानें लिपे जेते तत्र में।
आगम निगम सरवगृय वहु बात घात
पच अग गुन पट रापत सुतत्र में।
'सुकवि गुपाल' होइ सूरिमा, सुसील, छिमा—
वत, इसधारी, सालै रिपुन के अत्र, में।
जानें जत्र-मत्र, राजा रहै निजतत्र याते
अेते नृप होत देत मन्त्रिन कौं मत्र में॥

स्त्री उवाच

दोहा

राजन के मत्रीन कौ जग जुरत की पोत।
मत्र देत के सभै मे, इतने डर मित होत॥

---

१ मु हि जुरत जग जुलमीन सा जग जीति जम लेत।
२ है होन

कवित्त

सांचो जो कहै तो, जाम राजा रिस हात, गुनि—
सिर पै वचन विष सम मुप मूजिय।
'सुकवि गुपाल' सभासद बीच बठि बड
सोच मैं परत मन मंत्र जत्र बूझिय।
अु[1] जात होस, जत्र आइ जात दाम, राहया
पर नप रास राजकाज लगि धूजिय।
जग जुरि जूभिय कि फौज बान दूजिय, पै
राजदरबारन की मंत्री नहिं हूजिय॥

वकीलायति[2] पुरुत्र वाच

रापत सकल नरेस हित, देस होत है नाम।
याते भली 'गुपाल कवि' है वकील की काम॥

कवित्त

सभासद जत्ते रप राप्यौ कर सदा, सब
देप्यौ कर राज दरबारन के सील कौ।
लिपि-लिपि पत्र, होत बातन विचित्र, राअु
राजा होत मित्र यामें ज्यान नहि डील कौ।
'सुकवि गुपाल' राज काज के बहाल जानें
हाल माल मिल, नेक लागत न ढील कौ,
चढ्यौ करे पील, बहु बाढतु है सील, याते
सबमें असील, यह काम है वकील[3] कौ

---

१ है दत्त सब दास यान उडि जात हास सह यौ
पर नपरोस राजकानि नित छूजिय।

२ मु वकीलात का रनिगार ३ ह उकील

स्त्री उवाच

दोहा

निसदिन[1] अरनौ परतु है, पर दरवारन जाय ।
लिपने परत हवाल वहु[2] या वकीलई पाय ॥

सवैया

देसकों छोडि प्रदेस रहै घर कौ सुपजाने[3] नहीं सपने में ।
दूसरे राज में लागै बुरो, दरवार में बातन में थपने में ।
हाल ही जोप हवाल लिपै, न, तौ काप्यौ करै सदा जी अपने में ।
'राय गुपालजू' याते सदा यतने दुप होत वकीलपने[4] में ॥

पहलमान पुरष उवाच

पहलमान के बनत में जोम, रहत तन माँहि ।
अमल माँहि छाके रहै, काहू सौं न डराहि ॥

कवित्त

जायो करै कवू दाअु-घाअु अँच-पचन कौ,
करि कसरति देप्यौ करत भुजान कौ ।
अमल में छाके बाके बनिकै अदा कै, तोरि
रिपुन के टाकै, लेत नाके के मजान कौ ।
'सुकवि गुपाल' लेत गहरी यनामा, गुटि
झटकि, पटकि, जब मार वलवान कौ ।
पाय पान-पान बने रहै जवर ज्वान,
यतने निदान सुख होत पैलमान कौ ॥

---

१ है सब २ है नित ३ है देपे ४ है उकील

स्त्री वाच

दोहा

गुडन की सहुबति रहे निसदिन आटो जाम।
याते नही भलौ कछू पहलमान को काम॥

कवित्त

सबही को पोछि महु[1] पानी पर चीज औ'
निबल बल हात सग तिय क ढरन में।
'सुकबि गुपाल' यार बासन में आव लाज
देपि बल भारे त अपार में मुरत में।
ल्करत–भिरत अर गिरत–परत हाथ
पाइ टूटि जात बार लागे न मुरन म।
रहै अकरत कसरति के करत कछु
काम निकरत नहि मरलई करन म॥

राजचाकरी[2] पुरुष उवाच

जमादार सूबेदार चपरासी रुपनास निज।
सिपाही चौकीदार इनके सुप वरनन करु॥
पलटीन पर सूबेदार मुपत्यार रह
हुक्म जमादार को सिपाही माने जेते ह।
है क चपरासी चाहै ताहि धमकामे चौकी–
दारी माहि चोरन को मारि माल लेते है।
करे ते पवासी षुस प्वामद रहत औ'
सिपाह में सिपाही मजा लियौ कर जेते ह।
'सुकबि गुपाल' जू कह न जात येते इन
चाकरी में चाकर कू होत सुष तते ह॥

---

१ है मु मुप २ मु अकडत ३ यह केवल हे म है। मु ओर
'ब मे नही है।

स्त्री उवाच

आय कही विन कोइ, एक नही सिय मानिये।
लाप टका किनि होइ, तउ न करो ये चाकरी ॥

ह्वैहो सूवेदार, है है मार तरवार धार,
बनि जमादार सिरकार व्यार वहिहो।
वाधि चपरास को दुपाइहो गरीवे चौकी—
दार वनि राति में पुकारत ही रहिहो।
करि हो पवासी, तो कहाइ हो पवास, कहूँ
हुहो जो सिपाही सदा आठो जाम वहिहो।
भू-वि गुपाल' मेरी व त को न गाहिहो तो
सबते वहुत दुप चाकरी को सहिहो ॥

चाकरो[1] पुरुष उवाच

और काम सब छांडि के, करूं चाकरी जाय।
जामें जे सुप होत है, सुनहुं श्रमन मन नाय[2] ॥

जौम जिय रापें, मरदाई नन भाएं नित,[3]
रापत भरोसो, भारी भुजन में ठीको है।
काहू सो न डरें, रन सनमुप अरें, अरु
ननन में भर, न प्रताप सूरई को है।
पायके पुराव पिजि[4]मिनि करे प्वामद[5] की,
छल व यो रहै, सो रहै न सोच[6]जीको है।
कहत[7] 'गुपाल यामें सुप सबही को सदा,
याते यह नीको रुजगार चाकरी को है ॥

य है' मु मे है 'पु' मे नहीं है।२ मु सवव कविराव
३ मु हिव ४ मु पिन्मत ५ मु प्वाविद ६ मु तीच रप करो
७ मु सुकवि

स्त्री वाच

होत¹ प्रीनिको हानि चतुर चाकरी करन में।
घटै उकर-अभिमान, चन न पावै चित्त में ॥

वहनौ² परत नित,³ रहनौ परत पास,
सहनौ परत दुप, भली औ' बुरी री है।
चाकर कहावै, बडो दरजा न पावै, भारी
नाम को घटावै, औ हटाव हित ही को है।
कहत गुपाल' देह बिक्नो पराये हाथ,
मार-धार पर याम होन ज्यान जो को है।
कुजस को टीको, मोहि लागत न नीको याते
सब ही ते फीको⁴ यह पेसो चाकरी को है ॥

सूरवीर पुरुष उवाच

जाहर जस जग में रहै, तेज होत⁵ परचड।
सूरवीर रण रारि करि, फारि जात ब्रह्मड ॥

कवित्त

जाइ-जाइ, धाय-धाय, करै चाय-चायन
'गुपाल' दाय, धाय, पाय हरै परपीर कौं।
जग जस छायकै धरगना वराय आप,
जान चढि जाइ, दिव्य पाइकै सरीर कौं।

---

१ हा"२ म मु'नौ ३ मु याम ४ मु म
५ है होय

बारबार सहै तरवारि-धार, बार तिल--
तिल तन कढेहू पै सहै सेल तीर कों।
होत[1] रनधीर, औ कहावतु है वीर, याते
सदमें अमीर यह काम[2] सूरवीर कों॥

स्त्री उवाच

दोहा

रुड अर रन में मरे, लर परे रन सोइ।
कठिन छतिया धम कों, याते काम सु होइ॥

कवित्त

सनमुप ह्वै करि हथयारन की सहै आच,
जाय प्राण देवु छाडि कुटम लुगाई कों।
पाच की पचासन ते, आय पर जग जव,
बिगरे जनम पाछै बगदन जाई कों।
होत बदनाम, जौ प स्वामि के न आव काम
धाह को कनाम डोन होत यही काई कों।
'सुकवि गुपाल' करे रुड ह्वै लराई, याते
बडी दुपदाई यह काम[4] सूरताई कों॥

सिपाई के

और काम सब छोडि कैं, करूं चाकरी जाइ।
जामें जे सुप होत हैं, सुनि प्यारी चित लाइ॥

---

१ है रजगार २ है रुड लर रन में अर मर पर रन माइ।
२ है रजगार

जौम जिय रापें, मरदाई बन भापें, नित
रापत भरोसो भारो भुज की कमाई को।
काहू सौं न डर, रन सनमुप अर, अरु
नैन में भरे, लै प्रताप सूरताई को।

पाय कें पुराक पिजमति करै प्वामद की,
छन बच्यो रह सो रह न सो चकाई को
फैलति अवाई, य 'गुपाल' की सवाई याते
बडो सुपदाई यह कामहू सिपाई को॥

सोरठा

होइ प्रीति की हानि, चतुर चाकरी करत मैं।
घटैं अुकर अभिमान, चन न पावै चित्त में॥

कवित्त

बहनौं परत नित, रहनौं परत पास,
सहनो परत दुप, भली औ' बुरी को है।
चाकर कहावै, बडो दरजा न पाव, भारी
नाम कौ घटाव औ हटावै हित ही को है।

कहत 'गुपाल' देह विकति पराअे हाथ
मार मार धार पर, ज्यान होत जी को है।
कुजस को टीको, मोहि लागत न नीकौं, याते
सबही में फीको, यह पेसो चाकरी को है।

वहु चाकरी[1]

काजी[2] बख्शी औ' र पुनि नायक तुरक सवार।
हवालदार सूबेदार पुनि रहत राज दरबार॥

कवित्त

काजी सब न्याय निबटायबो करत पुनि
नायब निगाह सही करि लिप तेते हैं।
तुरक सवारी म सवारी रहे घोरन की
है कैं इवाल बक्वाल जानें जेते हैं।
पलटन पर सूबेदार सपत्यार और
हवालदारी पाय क हवल जानें केते हैं।
'सुकवि गुपालजू' कहे न जात जेते, बहु—
चाकरी में चाकर पू होत सुप तेते हैं॥[3]

---

१ है प्रति म पुनचाकरा है।
२ है—नाजर नायब मुसाहब मुसद्दीर बख्शार।
अरु दरबारह के कहूँ सब सुप हिय बिचारि॥
मु—नायब मुसाहब सूबेदार सिपाह।
चोबीदार र पौरिया रहत राज दरबार॥
३ है—बनि के मुगद्दी गद्दी दावि करि बठ मना
नाजर इनाम के सवान कहै नेत हैं।
साहब क साहिबी मुसाहब करत रहे
नायब निगाह रही करि लिप तन हैं।
हैके घरबार घटवारन सा नत धा
बनि बटवार बख्शारन सा नरे हैं।
सु—सहब क साहिबी मुसाहब करतु रहे
नायब निगाह सहि करि लिप नरे हैं।
तुरक सवारी गाह राह की सम्हार चारा
न्यारी मारि चारा को मारि मार देत हैं।
पलटन पर सूबदार सुपत्यार और
सिपाह म सिपाही मजा लीया कर केरे हैं।
[चौथी पंक्ति तीना प्रतिया म समान है।]

सोरठा

लाप[1] कहहु किनि कोइ जद नही सिप मानिय।
लाप[2] टका किनि होइ तऊ न करौ कह चाकरी[3]॥

कवित्त

काजी भयै न्याय की विददति म रहै पुनि
नाइवी में पहौ दगा मिलि जौ न रहिहौ।
तुरक सवारी भय रहिहौ सभार ही में
इकवाली होत इकवालन सौ दहिहौ।
हैहौ सूबेदार सहौ मार तरवार धार,
है हवालदार प हवा बुरी लहिहौ।
'सुकवि गुपाल' मेरी वात को न गहिहौ तौ
स्रम त वहुत दुप चाकरी में सहिहौ[4]॥

---

१ म आय २ — ग
३ है दा । स्म प्रकार है —
मि कारन का चाकरी करौ करन की धार।
नर फरैबा निरर न जि यार्ग निरारि॥
४ है — न हो जो ममदा त प ग्त्र का म्याग बद्दा
नाजरपन म ग सान्न मा रहिहो।
पान्था त वठ रप गान्वी मुसाहिबा म
नान्दा म पन्ना दगा मिलि जौन रहिगो।
वठन फिराग बन्वार बनि वाटर प
रैर पटबार व ो मरना मा रहिगो।
म—पाना न कन मुप मान्वी मसान्वी म
नारजा म पन्ना न्ना मिान जा न रहिगो।
दु । सूबगार पट्टो मार तरव ध र
ह ना जा सिपाना मना आठो याम बढिगो।
राद्र का मम्हार मार रकमभा ी चौरा—
नार बनि गनि म पुकरा ना रहिगो।
[पा पदित सभा म समान है।]

द्वालीबन्ध · पुरुष उवाच

रहि दरबान में सदा सब की जानत सार।
दयौ बर द्वागोह द्वा, द्वाली बदन द्वार॥

कवित्त

भुमिया, भुवार, सिरदार, जौंमदार, जेते,
राख्यो करें रथ भारी करि-करि प्यार पैं।
सबकी अरज करि पजरि गुजारैं जाय,
तिनही की बात पेस परति हजार प।
ठाढो करि राप महाराज के हुक्महू प
रिस करि जाको करयौ चाह जो बिगार प।
'सुकवि गुपाल' जान राजन की सार होत
दरजा अपार द्वाली बदन को द्वार पैं॥

स्त्री उवाच

दोहा

घटत जानि-पहचानि, घर पान-पान को जान।
याते यह दरमान को उद्यम बुरौ निदान॥

कवित्त

सहनी परति ह अवाज औ' तवाज नित,
रापत निगह करि सक्त न काजे गी।
जानने परत बहु कायदा-कदरि, नौकरी
ते बेतरफ होन करत अकाजे की।
यत दुपी दीनन के रोकिवे को पाप अुत—
पकरि गुजारत म रहै डर राजे को।
'सुकवि गुपाल' हौनौ परत निकाज, याते
भूलि क न हूजें दरमान दरवाजे को॥

चोवदार पुरष उवाच

दरबारन मे जादा सारत रहबो काम
मिलत चोबदारन तहाँ वारन मुकना दाम।[1]
राजदरबारन में हाजर हजूर रहै
बढत सहर नूर नाद बहार को।
काम जाय पर सदा जाते सब लागत की
राअ अुमराअु नट गुनिया भुगार की।
'सुकवि गुपाल' चाद ताहि राखि लइ औ
मिलाय हात दद अरज-गुजार को।
सबही को प्यार रहै राजदरबार याते
सबम अगार रुजिगार चोबदार को।

स्त्री उवाच

दोहा

ठाढौ रहनौ परतु है निस दिन आठौ जाम।
याते यनौ निकाम यह चौवदार को काम॥

कवित्त

सबही की अरज गजारनो परति याम
लागत है पाप राप दीन दुपकारी को।
जान दइ भीतर तौ राजा रिस होन नहि
जान दइ भीतर तौ लाग दत गारी कौ।
सुकवि गुपाल गरौ परि जात भारी असवारी
के भअ प बढि बोलत अगारी कौ।
छोड़ घरबारो सदा ठाढौ रहै दवार। याते
बडो दुपकारी यह काम[2] चोबदारी को॥

---

१ बहलोहा मु म है व मे नही। २ रुजिगार

हलकारे पुरुष उवाच

दोहा

ठौढा[1] रहनो परतु है निसदिन आठों जाम।
याते भलौ 'गुपाल कवि' हलकारन को काम॥

कवित्त

सैल देस-देसन, नरेसन की देषें आपि,
काम परयौ करत जरूर काम-वारे को।
'सुकवि गुपाल' तिनें रोकत न कोऊ कहूँ,
चल्यौ क्यौ न करो नित साझ लौ सवार कौं।
वार न लगति रजवारन के वारन में,
गहरी मिलति मौज मजलि के मारे कौं।
राजन के द्वारे, करें बातन के वारे-न्यारे,
याते सुष भारे सदा होत हलकारे कौं॥

स्त्री उवाच

दोहा

राति दिना चलनो परत, दैनो परत जवाव।
छिन भरि कबहू रहत नहि, हलकारन के पाव॥

कवित्त

राह ही में रहै, परदेस[2] दुष सहै ठग
दारन ते दहै देह चलत अवारे को।
आय कें सिताव, पहुचें न जो जवाव, तव
होत वडो ख्वाब राजु राजे के द्वार कौं।

---

१ है मु–देस [illegible]दम नरस [illegible] महु माग नय दाम।
२ है मु ते ² है रातिदिना

'सुकवि गुपाल' हेला–हेली मची रहै ओ,[1]
मजलि रहि जाय जज[2] वेली रहि हारे कौं।
परि जात कारे, पाअु थकि जान न्यारे, याते
सबही ते भारे दुष होत हलकारे कौं॥

धाअू · पुरुष उवाच

भागि जगै जाकौ सदा, होइ दूसरौ राज।
राजन के धाअून कौ मिलत वडे सुष-साज॥

कवित्त

जग में अुदोत जोति तेज सी पुरस होत,
राजा मार्यों करत अुकर[3] जैसें दाअू कौं।
पान–पान–काजें जे निकरि आम गाम, तिनें
पायौ करें सदा सात सापि तोनी जाअू कौं।
'सुकवि गुपालजू' सदा कौ घर होत, इतवार
रहै अैतौ जेतौ और नहि काअू कौ[4]
होत है कमाअू, दबें राअु–अुमराअु, याते
गत में अगाअू यह काम भलो धाअू कौं॥

स्त्री उवाच

दोहा

बडी कठिन की चाकरी, पर आधीन रहाइ।
राजन के घर को कबहुँ, धाअू हूजे नाहि[5]॥

---

१ है मु जो २ मु जहा ३ मु नन्द ४ मु मे यह किमि चरण है। ५ मु नाव

कवित्त

रापनी परति तिय आपनी पराअे घर,
ताके सुत-मुता सुख पावत न नेसि कौ।
राजा के ढिगारे[1] नित रापनौ परत दर-
वारी जर्‍यौ करै बात करत में पेस कौ।
'सुकवि गुपाल' हितू[3]-यार[4]-जाति[5] वध सदा,
ताकौ नित प्रति नाम धरत विसेस कौ।
छूटै निज देस, मुप पावत न लेस, याते
धाअू नहि हूज, काहू जायकैं नरेस कौ॥

षोजा कौ पुरुष उवाच

जब होइ पोजा जायक रनमासन कौ कोइ।
रावनि राजन के यहा, तब अते सुपहोइ॥

कवित्त

काम न सतावैं, बडे दरजा कौ पावैं, सदा
भूज्यौ करै राज, हुक्म मानें सब कौजा कौ।
सबतें पहल रनसास में पहुच होति,
रानी अरु राजा हुक्म मान्यौ करैं दोजा कौ।
'सुकवि गुपाल' दरवारन[७] में बठि जा-यौ-
कर दडबडे[८] गुनभानन के चाजा कौ।
पुलि जाय रोजा, बडो भारी होइ वोझा, सदा °
मार्‍यौ कर मौजा, काम करतहि पाजा कौ[११]॥

---

१ निकट २ रहा ३ मु जाति ४ मु यार ५ निने
६ मु राजा और रानी ७ मु सरदार ८ म व॰-बड़े
९ मु बाजा १० मु मा। ११ मु मबही म भला रजिगार
मह खाजा का

स्त्री उवाच

दोहा

पोजा कबहूँ न हूजिये, रनमासन[1] कौं जाइ।
निसदिन तिन की सवन की, अरज गुजारत जाइ॥

कवित्त

मरद न महरो कहत तासौं, अैसें सब
कबही[2] न जानें नेंक विषै के हुलास कौ।
सुत अरु सुता नाम–गाम को न जानें सुप,
रहै काहू काम को न, नाम बुरो तास[4] कौ।
'सुकवि गुपाल' सुनि सबकी पबरि दरबार[5]
में गुजारती परति सदा बास कौ।
घर ते अुदास ज्यौ रहत पवास माते,
भूलि कै न हूज महूँ पोजा रनमास कौ॥

चिरबादार · पुरुष उवाच

ओषधि किम्मित जानि गुन, जानत परप सवार।
चढि घोडन लीयौ करै चिरबादार बहार॥

कवित्त

घोटन पै चढैं, सग रहैं सिरदारन के,
जानें जाति–किम्मित, अनका सवारी कौ।
'सुकवि गुपाल' जे निकारैं घनी चाल हाल,
माल मारि जात देत लेत में [illegible] कौ।

---

१ मु [illegible]न्वासन २ म ताम। ३ मु वय [illegible] ४ [illegible] उप
५ मुनि [illegible]वत्री अरज न हजूर म।

सालोत्तर पढ़ि नाना भानिन की जानें दवा,
पावत यनाम नाम करिके तयारी की।
परपै हजारी, वूझ कर नप भागी, याते
बड़ो सुदकारी यह काम निरवादारी को ।।

स्त्री उवाच

दोहा

दौरत–दौरत द्वार प, मट्टी हाति पुआर ।
पारी देतु न करम तब, होतुए चिरजादार ।।

कवित्त

दाने–पास पानी वो मसाले न पवावन,
पुजावत सिपावत में मानि जात हारी को ।
लगि जात लात, रदिजात काढि पात, ताकी
मारुर औ' डक पाय जात देह सारी को ।
'सुकविगुपाल' छोड़ा करि कै तयार, पाछे
दौरनौ परत, पुनि सग असवारी को ।
हत्या होति भागी, कम देत नहि यारी, याते
बड़ो दुपकारी यह काम चिरजादारी को ।।

पवासी पुरुष उवाच

मन राज की हि बटन, रहत रनि दिन पास ।
यात सबही म भला, या जग माझ पवास ।।

---

१ ह रहे र र रहे ३ ह भला स्पान करि

कवित्त

करत पुसामदि अनेक लोग आइ जाकी,
    करि के भजज राप काहू की न आस की।
परम प्रवीन-बीन, जातन की जान नित
    जमर मगर राप्यौ करत मवास कौं।
'सुकवि गुपालज' निहारि सो रहत कडे-
    ताडन चकाज की कहावतु है पास कौ।
सदा रहै पास राजा मान बिसवास, याते
    वडौ सुपरास रजिगारह पवास को ॥

स्त्री उवाच

दोहा

नीच टहल करनी परति रहिकै सवदिन पास।
याते सनही म बुरौ या जग भाज पवास ॥

कवित्त

हाथन मे छाले, कछू बात[1] के रहत लाल
    पाने पर पाल, बडी करत तलासी कौ।
करनी परति नीच टहल अनेक भाति
    राति दिना म.में भागयौ करतु[3] चुरासी का।
'सुकवि गुपाल' झूठौं-जूठा पानो पर नित
    सग जानी पर असवारी मे सुपामी कौं।
रहत उदासी जिय जायौ कर सासो, याते
    वडौ दुप-रासी, रजगारह पवासी कौ ॥

---

१ ० कहावति
२ है चप रहि रत्त उदास मौ मन काइ रहत [कहत] पवास।
   न कड्या रहत उदास मा मग काउ कहत पवास।
३ ३ मु पाटुआन ४ मु काम ५ है करिकैं ६ ह नित भागत

गुलाम पुरुष उवाच

रहत हजूर हजूर के, सदा आठहू जाम ।
याते सबमें काम को, है गुलाम को नाम ॥

सवैया

नित आठहू जाम हजूर रहै, पहुँचाय सबी को सलामति कों ।
नुकता पै रिझाय कै राजन ते, सदा पायो करै है यनामन कों ।
सबमें अुमराव बनेई रहै, दरबारिन के करि कामहि कों ।
रहै न यहै 'राय गुपाल' भनो सबमें रुजिगार गुलामन को ॥

स्त्री उवाच

दोहा

नाम होत बदनाम पुनि, मत कोई कहै गुलाम ।
कामन ते छूटै न छिन, नेह न नेक अराम[1] ॥

कवित्त

करनी परनि जाइ नविकैं सलाम झूठौ,
मिलै पान-पान, नहिं दरजा छदाम को ।
'सुकवि गुपाल' यह काम के करन नेक
पावै न अराम, रहै काहू के न काम को ।
ठहर न पाम, बडो होतु है हराम, आठौ
जाम सहि नाम-बदनाम कर नाम को ।
लिख्यौ है कलाम, आव दोसला कलाम, याते
सबमें निकाम, यह कामहू गुलाम को ॥

पिलमान पुरुष उवाच

तरत अंकुस हाथ पै गज पै बैठत आनि ।
राजन के पिलमान जब, होतहु राज समान ॥

---

१ म यान काहू का नही, दूजे जान गुलाम । २ म पीलवान

कवित्त

राह ही में रहे,[१] परदेस दुप सहे,[२] सीत
घाम जल सहे, पाव वाहर उतारे कौं।
गारी पात हाल, सिर पेल्यौ करै काल, लगि
जात यलजाम[३] यामें नेंक बैल मारे कौं।
'सुकवि गुपाल' रहै परच कौ पालौ, नित
रातिदिन लालौ रह्यौ करै दाने-चारे कौ।
टूट्यौ करै, भारे दिवय[४] रहैं घरवारे, याते
होत दुप भारे, रभवारे गडवारे[५] कौं॥

मुल्ला पुरुष उवाच

होत पूरक्स यलम में ज्ञन जवान दराज।
पढत पारसी अक्लि के मुल्ला होत जिहाज[६]॥

कवित्त

करत सलामी सहजादे औ' अमीरजादे,
ताकौ अदबजादे लोग रापत मुहलौ के[७]।
पिजिमित करि कै पुसामदि करत पाना
आगें लै पडे रहें फ्रजद[८] भल भल्लौ के।
'सुकवि गुपालजू' हजारन किताबन की
कहत सिताब, वाज पारसी की रल्लौ के।
मोटे होत कल्ले[१०] कवी रहै ना इकल्ले, याते
दरजा पुभल्ले, होत सारही में मुल्लौ के॥

---

१ मु गाड तन दहे २ मु प्रदेशन मे रहै ३ मु इलजाम ४ मु दिन ५ मु ग्बवान गडमान ६ मु जहाज ७ मु मुल्ला के। इसा अन्य पंक्तियों में अन्त्यानुप्रास मल्ला रक्ता और मु ना है। ८ मु खिन्मत ९ म कुमर १० मु कल्ला इसी प्रकार आगे इकल्ला और मुमल्ला

स्त्री उवाच

दोहा

पढत पढावत में मगज, सब पच्ची हो जात ।
लडकों से मुल्लान की, अकलि चरप हो जाति ।।

कवित्त

फूटे जात कान, पा सकें न पान-पान, घन-
राय जाति जांनि छोहरों के होत हल्ला कौं ।
'सुकवि गुपाल' रूप हालत में कल्ला सब,
पूछि पूछि पाओ जात पोपरा इकल्ला कौं ।
रहत निवल्ला, वडौ लगत[1] झमल्ला, जब
कहि अली अल्ला सो जगावत मुहल्ला कौं ।
बढे रह कुल्ला, लोग कहत मुसल्ला, आप
होत मति भुल्ला काम करतहि मुल्ला कौ ।।

हकीम पुरुष उवाच

चढत नालिकी पालिकी,[2] बोलत सग नकीम ।
रजवारन में[3] जात ... कोऊ होत हकीम[4] ।।

कवित्त

हय-गय-रथ-पालिकीन में चढत, बहु
बढत पत्यारो, सो निकारें तरकीबी में ।
'सुकवि गुपाल' दरमाह यौ घर आयो करें,
पावै वडौ दरजा सिवाय काम कीबी मे ।

१ मु झगतु २ चढत पालकी रजन म ३ मु को ४ मु होब
ु नवहिं हकीम ।

जानत मरज, मरि ओषधि अरज, होइ
समज[1] सिवाय पारसी औ' अरबी की में।
मिलें ग्राम जीमी, सब महत मदीमी, याते
येते सुष होत रजवारे की हकीमी में॥

स्त्रीवाच

दोहा

रहत काल के गाल में, छुट्टी मिलत[2] न जाइ।[3]
हूजे यह हकीम नहि, रजवारन कौं[4] जाइ॥

कवित्त

रहत दुवारे, दिक्य[5] रहे घर बारे, रोग
बढि गअे भारे, ढील लगति न मारे कौं।
'सुकवि गुपाल' दबादारू के करत, नहीं[6]
मिल छुटकारो, कबी सांझ लौं सवारे कौं[7]।
आवत औ' जावत में, महज दिषावत में,
दिक्य[8] करि लोग, लेइ, लीयें जात द्वारे कौं।
हारत जमारो,[9] लोग महत हत्यारो[10] याते[11]
पावै दुषभारो है हकीम रजवारे कौं॥

कलामत पुरुष वाच

गावत पावत सवन में[12] गहरी सदा यनाम[13]।
याते यह गुन कदरि कौं, कलामतन को काम॥

---

१ मु समझ २ मु मिलति ३ मु ताय ४ मु को
५ मु न्विक ६ मु नैंक ७ मु म यह ततीय चरण है। ८ म
जयमारे ६ मु हत्यारे १० मु रूग्न ११ मु भारे दुख पाव है
१२ मु ते १३ मु इनाम

कवित्त

कदरि बढावत, कहावत है गुनी, रज-[1]
वारन हजारन हीं[2] पावत सनाम में।
सुनत ही जेत पसु-पछी नर-नारि चित्र-
कैसे लिपे गावत हीं[3] करि देतु धाम मैं
'सुकवि गुपाल' मन मोहि लेत जब, तब,
बाजे कौ बजाइ भरि लेत सुर ग्राम मैं
मिलै गज ग्राम, ऐसे[4] करैं आठौ जाम, बड़ौ
पावत है नाम, सो[5] कलामन के काम मैं

स्त्री उवाच

दोहा

गाइ बताइ रिझाइ कैं, जब वहु तोरत तान[6]।
तबहू[7] कलामत[8] को कबहुँ[9] देत मौज कीभू[10] आनि॥

कवित्त

आवत न कछू सो हलामत[11] रहत हाथ,
पावतु[12] है सदा छोटौ दरजा कनाम मे।
गावन मैं सबै सुर बाजे[13] के मिलावत मैं,
रूप गरौ-गात[14] ऊंचे नीचें भरे ग्राम मैं।
'सुकवि गुपालजू' हलायौ कर नारि, मेया
कर परवार रहि सकतु[15] न धाम मैं।
हलामति पाय न सलामनि मा मावै, यौ
गलावत है देह या कलामत के काम म॥

---

१ मु म गुणा वन्त २ जाय रजवारन ही
३ त न्यार ही ४ म ऐस ५ म या ६ ह न मिलान
७ मु तब ८ मु कलावत ९ मु कछू १० मु को ११ मु
हलावत १२ यू पावत १३ मु स्वर बाजे १४ मु हाथ मग
१५ बू सकत

मोदीषानौ पुरुष उवाच

मोदीषानें राज कौ, जब कोऊ मोदी होत।
भरम, धरम, हुरमति, सरम, बढत धरम, धन, जोत।[1]

कवित्त

जा दिनते भरम, वग्म बढि जात घनौ
कायदा कदरि पावै सवत सभा में है।
माल लेत देन कहूँ[2] नाही नही होति जाकी
सही बात होति, चाहै ताक धमकामे[3] है।
'सुकवि गुपालजू तगादौ न करामे, घर
बठहा कमाम,[4] नफा होति घनी तामें है।
बडा होत तामे, काम सब की चलामें भऔ
मादी महाराजन कौ अत सुष पामें[5] है॥

स्त्रीउवाच
दोहा

मोदीषाने में बहुत, काम परत दिनराति[1]।
राजन के मादीन की, यातें बादी बात॥

कवित्त

लोभ करें रवारी, तगादे रह नारी कहू
मिलै न अुधारी[?], भीर पर चहुँ कौदी[1] की।
त्रस होत ग्यान मोच में ही दिन जात, यौं
'गुपाल' दिनराति सोध धरत न सोवौ की।

१ व बाति। २ मु ता ३ मु अकर ४ मु काढ़
५ मु धमकाव ६ कराव ७ म कमाव ८ मु चाह ताही
कौ जिना मै ९ मु याम। १० व रात्रि ११ व वो १२ मु मातौ

रहत लटूट, घर होत टूट फूट, घर
घर[1] होइ फूट, वात रहै न[2] विनोदो की ।
हात बडी कोधी,[4] वर करत विरोधी, याते
बोदीगति होति महाराजन के मारी की ॥

इतिश्री दपनिवारक विलास नाम काव्ये राजप्रबधवर्णन नाम षोडशो विलास

१ मु ठौर-ठौर २ मु विगर ३ मु स य" तिसरा चरण है
४ मु क्रोध

सप्तदश विलास

फिरग प्रवन्ध[1] पुरुप उवाच

दोहा

माने गग, बुटान को रापें नाम र टक ।
अक्मलि त पचें सदा पसा महति विवक ॥

कवित्त

त्यार[2] फौज राप, मत्र काहू सा न भाप, जोर
चानुरी को राप, काम वरें न लवेज को ।
पाप–पुन्य छान, फूट फरेब न जानें, एन–
की ही[3] वात ठानें, याव कर नहि हेज़ को ।
'सुकवि गुपाल' सदा सूरज की इप्ट, वडी
कपिनी की मानें आन, रापें न मजेज को ।
वरे तन तन, सदा प्रठत है मेज यात
सब मे अमेज, यह काम[4] अँगरेज को ॥

जगी कारपनिन की भरती करत सदा
फौज को सिपायो कर करि–करि हज का ।
'सुकवि गुपाल' जग जुरती वपत फेरि
मुग्न न मारे करि काहू परहेज को ।

---

१ मु म थ अब रगा प्रवध वणन तत्रादि फिरगी रुजिगार ।
२ ब बुराण ३ मु स्वार ४ ब अनेकी नी ५ म रुजिगार

जाकों पाप होइ, ताके सिर पर रापें, झूठो
न्याव नहिं करें, करि-करि लग लेज कौ।
धरे तन तेज, सदा वठत है मेज, याते
सब में अमेज, यह काम अँगरेज कौ।।

स्त्री उवाच

दोहा

रापत[1] फौज तयारजे, जानत बडो फिरग।
जग जुरत जुलमीन सौ जब जीतत जुरि जग।

कवित्त

वरसन लागें, तऊ टूटत न न्याय, परौ
परच अुठाय करि देत हाथ तगी कौ।
हिंदउस्तानी रिसपत पाइ जात अूचौ,
नीवौ करि नेक, ५रवायो करें चगी कौ[2]।
कर जरीमाना मार बहरी रसूम लै,
यजार सटामटि[4] मूडे पैचें नाम दगी कौ।
रापत न सगी, पानसामा करें भगी, याते
सन में कुढगी यह काम हे फिरगी कौ।

रह्यौ कग यामे वटौ कपिनी कौ उर, जैन,
कौसल, विगरि काम सरत न अगी का।
'सुकवि गुपाल' समझें न राग-रगी गन-
मानन के काजें सदा हाथ राषे तगी कौ।

---

१ मु राध २ मु हिंदुस्तानी ३ मु एकन सा म करवाया कर दगी को। ४ मु सठामठि

जियन विनासैं, भेष ठौर न प्रकासैं जाय,
  लरि न सकत बारें मास कहु चगी को ।
रापत न सगी पानसामा करैं भगी याते
  सब में कुरगी यह काम ह फिरगा कों ॥

[1]पहरन टोरी, टोरी धरि कें मिलत, पासी
  पिलति न राप, लाज आवति न सगी की ।
बीवी सग लेले, सदा डोलत अकेले, कहूँ
  रहत न भेले, सदा लेले फौज दगी की ।
'सुकवि गुपाल' होति आतस अधिक, मुप
  मौंछ नहीं रापैं, पायँ धरि सिर रगी की ।
रापत न सगी पानसामा करैं भगी, याते
  गत्र में कुढगी यह काम ह फिरगी कों ॥

फिरगीराज : पुरुष उवाच

डाडत न काहू, कबी मारत न काहू, पाप
  [illegible] जाई देइ डड रहै न विजाज मैं ।
[illegible] औ गाय घाट जेक पानी प्यामैं निज
  धरम कों जानें जग जोरत अवाज मैं ।
'सुकवि गुपाल' सदा, रोजी, नाजमीन कहू
  [illegible] की दई को न लगामे परवान मैं ।
कर न अवाज, डर गर्भ सब भाजि, भजे
  राम के से राज, अँगरेजन के राज मैं ।

---

१ [illegible] कवित्त [illegible] में नहीं है । २ यह [illegible] में नहीं है ।

स्त्री उवाच

दोहा

घर घर फूट औ' फरेब झूठ साच, बरबनि
नहिं नेंक, यामे सासे रह नाज के।
चोर निरभर, अरु साहु घिर फिर, मल-
जाम लगें यामें, नेंक निकरें अवाज के।
'सुकवि गुपाल' भलो बुरो अेक भाव, काहू
गुन की न बझ, रुजिगारन लिहाज के।
थिर्चे महाराज प्रजा दुषित निलाज कहे
जात न अकाज अंगरेजन के रजा के॥

सदर सदूली[1] पुरुष उवाच

रह आमदि की फूल, दरजा पाय बडौ सदा।
कोऊ करत अदूल, सदर सदूली करत में॥

कवित्त

कुरसी मिलनि अंगरेजन की तावौ, आमें
अन अगरेजी, न्याव करत अदूली कौं।
'सुकवि गुपाल' करि मामले हजारन के,
मार्‌यो करें माल करि मायल-मकूली को।
बैठि करि मेज, पै मजेजहि नों रहे वेर
जासों परिजात, ताय करि देत धूली को।
आवन सहूलौ, लाभ रहत हमूली, सदाँ
याते यह काम भलो सदर सदूली कौं॥

---

१ यह प्रश्न मूल में नहीं है।

स्त्री उवाच

दोहा

सूली को चढिबो रहै, हूली हिय के माहि।
हाल अहूली होत है, सदरसदूली पाइ ॥

कवित्त

जानर्नें परत हैं अनेक अँगरेजी अंन,
जात दिन रैनि वत्त कायल–मकूली को।
'सुकवि गुपाल' जोपै जानें फरेब तो फरेबी
के, करयन ते पाइ जात धूली कौं।
न्याव निपटैबो, पून स्यावति को वैवो, बहु
रिसवति लैवो इह कामह अदूली कौं।
रहनौं हजूली को चढिबो है सूली को, सुयाते
नहिं कीजे काम सदरसदूली कौं।

नाजर पुरुष उवाच

हाजर करिकें जानि कू नाजर बनिहूँ आइ।
फाजर धन लाभू घनौं, यौं कमाय कें आइ ॥

कवित्त

मायो कर लाग मत[1] जायो कर अंनन को,
मेज के अगारो जवाव करि क छडे रह।
साहब कों अरजी सुनाय समझाय कें,
दरागन ते मिनि माल मारत घने[2] रह।

---

१ है कन २ है कर

झूठन कौं साचौ, साचौ–झूठौकरि–क परे[1]
　　परचा कौ लै करि जितैवे कौं अरे[2] रहै।
'सुकवि गुपाल' सदा नाजर भअे प, लोग
　　हाजरी कौ दैवे, आगें हाजरि परे रहै॥

मन्त्री उवाच

सोरठा

झगरन में दिन जाय, राति–दिना पेग –है।
रहिय गाजर पाय नाजर कनहु न हूजिय॥

कवित्त

लागत सराप पाप[3] करत फरेवी जब,
　　झूटी साचौ[4] करि जाकौ–ताकौ वुरी ररिय।
नाजर कहावै, निरञन को सताव, परलोक
　　दुप पाव औ' अकारथ ही जरिय।
'सुकवि गुपाल' वहु हाजरी के होत सदा,
　　माहर मौं[5] अरजी सुनावत में डरियै।
रन चढि लरिय, कि आर कछु करियै, पै
　　अँगरेजी लोगन की नाजरी न करियै।

थानेदारी पुरुष उवाच

बैठि अदालति हुकम की बनिहा थानेदार।
करहु जोर जुनमीन कौं, जोरि जुलम दरबार॥

---

१ म मानेर का झठा झठा माचा करि करि मार २ म अडे
३ है हैं पाप नाम ४ है म झूठ गाचा ५ मु दा ६ चेर

कवित्त

रैयति पैं हुक्म जमयति रहति, पास
पयत अनेक सुप, सदा पाने-दाने में।
कापत चुगल-चोर, डरत फरेबी-ठग,
करत सलामी आय बैठ ही ठिकाने में।
सुकवि गुपाल' साँचे झूठ को करत न्याव,
लेत मुहमागे दाम, मामले जिताने में।
रहै बीरखाने सब गाम हौफमानें, याते
येते सुप होत थानेदारी पाइ थाने में।

स्त्री उवाच

सोरठा

माटी रहति अजीज, निसदिन थानेदार की।
बवत पाप के बीज, रयति दीन दुपाइ कै॥

कवित्त

गाम परगन्न जबरदस्तन पै दस्त दिन
अस्त न फिस्त गस्त समस्त बजारी में।
नालसि को डर रहै विदरनि को भर सदा
बिगरे जुवान, बुरो हाल दत गारी में।
होइ गैरि हाजर हाल निप न हवाल आप
आवै[1] चाट-फेंट, रहै हाल चारी-यारी में।
सुकवि गुपाल यामें रहै मार मारी, याते
अति दुख भारी, सदा हाल थानदारी में॥

---

१ हे मु [illegible]

चपरासी पुरुष उवाच

चपरासी–सिरदार की जब बाँधन चपरास।
हुक्म उदूल करै न कोइ,[1] सूप जात है स्वास॥

कवित्त

हुकम अदूल करि सक्तु न काऊ, कहू
ताको काम परै मिरदारन[2] के पासी कौं।
मार्‌यौ कर माल, धमकाय कै हजारन ते,
जाको नाम सुनैं थूक सूपत मवासी कौ।
'सुकवि गुपाल' तक्सीरवार जेत जिनैं
मार–बाँध करि, सूध करै यकवासी कौं।
ब्रात बन पासी, कर्‌यौ करत तलासी, याते
बडौ सुपरासी, रुजिगार चपरासी कौं॥

कवित्त

दोहा

रवाब, तेज, कूवति जिना, जौ बाधन चपरास।
काम होत नहिं अेक हू, दपत नहीं कोऊ तास॥

कवित्त

टटे औ' फिसाद क विपादन में जात क्नि,
ताके[4] मुप वन निकरैं न यरलासी को।
'सुकवि गुपालजू' दिमानी–फौजदारी बीच
आवत औ' जात ह्वान भोगिवो चुरासी का।

---

१ मु कन्ड २ है दरबो कर निग्कारन ३ मु इम्सानी ४ मु
दाव ५ है बार्

मारत म मार, तक्सीरवार मरैं, जाग–
तोप ताही बार, यह पानु है फांसी का।
होत अधरामी सिरकार की पवासी, वरि
याते दुपरासी, रजिगार चपरासी को॥

परमट पुरुष उवाच

तज जौम नन मैं रहै परमट कामहि लेत।
माल मिन महसूल की नौपारिन सौ१ हत॥

कवित्त

जाके हाथ हैकें जारी होन है रमना
मव करिक तलासी रोकि रार्षै जीमवारे कौं।
परयो कर आय के जिपारिन ते काम तासौं४
हुक्म चलायो तरैं पीकरि तिजार कौ।
रहत 'गुपान तईनात चपरासी घर५
बठ्ठी हजारन के दर बारे–यारे को।
काम सर सारे, दब महसूल बारे, याते
होत सुप भारे सदा परमटयार कौ॥

स्त्री उवाच

दोहा

नितप्रति रहति अुपाधि बहु, देत लेत महसूल।
याते कीज काम नहिं या परमट की भूलि॥

---

१ है तें २ मु ह लत म ३ मु है का ४ है नाते मु जान ५ है मानी

अरनौं परत मग माझ-दिन राति नित,
प्रात ही ते यामें काम परें गरमट[१] कौ।
लिपत पढ़त अरु माल की तलासी देत,
लेत में मिथिल करि देनौ परमट कौ।
निरदय है कें, बुरु बोलनौ परत, जारी
करत रमना, परें काम झुरमट कौ।
'सुकवि गुपाल' लोग देत रहै गालि, याते
भूलि कै न कीजे क्वौ काम परमट कौ॥

मीरबहारी पुरुष उवाच

सब सहरी तारौ दवन अरु लहरी बहु होत।
मीर बहरि के बैठते गहरी आमदि होति॥

कवित्त

घाट-घाट बीच बड ठाठ सौं रहत दूने
दाम लेत तासौं सोई बोलतु अमेठ तें।
'सुकवि गुपाल' रोकि राखें राजु राजन कौ,
काहू ते न सकें, माल मारें घुस-पैठ तें।
दबत रहत बार-पार के जवैया लोग,
भोग कर्‌यौ कर काम सरें सब मेटते।
सबही सो पैठ, नफा मिलति इकठ, बनी
पैठ नी रहै मीर बहरी कें बैठते॥

---

१ मु परमट २ है ढीलो हात मु टालो होत ३ यह प्रसग मु म नहीं है।

स्त्री उवाच

दोहा

दुरमति तेज अरु[1] होफ बल, धन बहु घर में होइ।
मीर वहरि के नाम कौं लेय यजारी सोइ॥

कवित्त

मारनी परनु है मिपारिन सौं मूड, बुरें,
बोलत में यामें, कछु जाइ जस लीजै ना।
'सुकवि गुपाल' जौना लालौं रह्यो करें, तौ लौं
गोनक वे दान न यजारे माझ दीज ना।
बिद्दति रहति है मितानी औ तुरानिन की,
श्राप लगें जाकौं, ताकौ अनग्न दीज ना।
निसदिन ही जे, बढवार देपि धीज, याते
भूलिक यजारी मीर वहरी कौ लीजै ना॥

जमादारी पुरुष उवाच

मौनत सकन सिपाह, हित, नाम रहत अुद्दोत।
हुक्म इलाप तीन बहु जमादार को होत॥

कवित्त

सदा दरवाजे दर[illegible] [illegible] री [illegible] पर
करत अराज औ अवाज लाग भारी कौं।
'सुकवि गुपाल' सदा गहरे मिलत माल
मिलकि मकानन क झगरत [illegible]री कौं।

१ मु इलाके २ है मु मीरानि

हुकम रहै भारी,[1]सुनैं सबते अगारी बात,
पावैं मुषत्यारी, सब काम की तयारी कौं[2]।
राज दरबारी, बडो होत तेज धारी, याते
बडो सुपकारी, यह काम[3]जमादारी कौ ॥

स्त्रीवाच

दोहा

यतने[4] दुख नित होत हैं, जम्मादारी माँझ।
बिद्दति ही में होति नित, सदा भोर ते साँझ ॥

कवित्त

करत सिपाह, सिर याके परें आय, नित
रापनी[5] निगाह परें, नजे नरनारी मैं।
गाम के हवाल–हाल सुनने परत नित[6]
कहने परत पुनि जाइ दरबारी[7] में।
'सुकवि गुपालजू' यलाये बीच चोरी होत
आव चोट[8]-फैट गस्त देत चोरी-चारी में।
छूटै घरबारी, रहै राति दिन प्वारी, याते
होत दुष भारी जमादारै जमादारी मैं[9] ॥

चौकीदारी[10] पुरुष उवाच

जागो जागो कहन, सब जागो[11] जाकी नूझ ॥
चौकीदारी करत होइ, चोर ठगण की सूझ ॥

---

१ है मु भारी २ है सासिपाइ इकठारी को मु सिपाह की हुस्यारी को ३ मु है रजिगार ४ मु इन्ते ५ [illegible] है करबी मु करनी निगाह है परत नरनारी म। ६ है मु [illegible] ७ है सिरकारी म ८ है मारयो जात कहूँ ९ है रात दिन प्यारी छूटि जात घरबारी, बेने दुष रहे जारी सदा होत जमादारी म। मु छूटै घरबारी रहै राति दिन [illegible] राते, दुष [illegible] पाय जमादारी म। १० यह प्रश्न मु मे नही है। ११ सभवत जाग समह है।

कवित्त

मारयो वर मान, ग्रग नार ओ' इतितन त,
राख्यो रूरे राजी नित हाकिम दिमान कौं।
'सुकवि गुपाल' चुगी गरग लगाइ, और
पराअु ते अुगाहि दाम, बनन न आन कौं।
सेल चमकाय चपरास कौं चुकाइ आय
आपने यलापन, म आछो मित पान कौं।
देनि वस्ती मान दयो वर हस्ती मान, याते
वडो मस्तीमान यह काम गस्तीमान कौं॥

स्त्री उवाच

दोहा

दिल होइ मस्ती मान पुनि, रह न दुरस्ती मान।
मन में तस्तीमानि कें, होइ न गस्ती मान॥

कवित्त

चोरी-डाके परे मारे परिहौ सुहाल, मार-
वाघ भय भारी, रोब कारी माथ रहिहौ।
गस्त देत गली औ' गर यारन के माझ आजी-
राति गिछराति कौं पुकारत हौ हिहौ।
देसी-परदेसिन की करत हुस्यारी, वैत-
तेली के लौं बहि, सुप सेज को न गहिहौ।
'सुकवि गुपाल' मेरी बात कौं न गहिहौ, तै
वडो दुष भारी, चाकिदारी मान गहिहौ॥

गवाह पुरुष उवाच

बनि गवाह गुजारि हौं, अबहिं गवाई जाइ।
कवि 'गुपाल' धन लाइ हौं, तेरे पास धमाइ॥

कवित्त

लीयें रह मन, जन धन रहें साथ, मिलें
पान-पान आछो मामले के मम्हरत में।
होइ सावधानी औ' जबानी साफ होनि, यामें
आवनि फरेबी, झगरे के बगरत में।
'सुकवि गुपाल' जाय बूझत अनेक आय,
मानत दबाय सदा चोवन मग्त म।
जीनत धग्न, सरकार जे करत,' हाथ
दौलति परति, या गवाई के भरत मे॥

स्त्री उवाच

दोहा

होइ चेल पानों जहां तनक फरेबी माहि।
याते जाइ गुजारियै, कहू गवाई[४] नाहि॥

कवित्त

बोनि झूठ माच, गगा धग्नी परनि हाथ,
रहै धक-धक देह काम्यो कर ताई को[५]।
अरजी दीजे[६] पै कहूं निकर्रे फरेबी जरी-
मानों जेलखांणो,[७] धनमारि होत जाई धा।

---

१ है मु भनौ २ है न्याव ३ ह मु क्वटु ४ गवाही ५ हू जाइ वा। मु न्यव ७ मु जेलखाना

'सुकवि गुपाल' मुद्दईते बैर बधै औ' सदा
 कों दाग लगै, यह काम बुरवाई को।
चयै चतुराई छल-बल अधिकाई याते
 सबते कठिनि है गुजारिबो गवाई को॥

फौजदारी पुरुष उवाच

करिकें स्यावनि[1] पूनकी गवाहन की गुजराइ।
मुददईन को देतु है जेलपान[2] डरवाइ॥

कवित्त

देपत ही होइ बेगि फसला मुकद्दमा को,
 जात सुनी जाति बात अरजी की लीये ते।
नायब[3] औ' मुनसी ते[4] मिलें घूस-ष[5]चरते
 जीतें चग स्यावति, बझारन के जीअेते।
पून करि स्यावति, गवाह गुजराय, नाम
 पाव जेलपानें मुदई की डारि दीअे ते।
'सुकवि गुपाल' होत जेते सुष हीयैं, सदाँ
 फौजदारी माहि, जाइ नालसि के कीअे ते॥

स्त्री उवाच

दोहा

नालसि कीअे पै कहू पून जु स्यावति[6] होइ।
होइ जरीमानो परै, जेलपान में मोइ॥

---

१ मु सावत २ मु जेहलखाना ३ मु नाजर ४ मु मो ५ दे
६ सूबसु मालुम हाइ।

कवित्त

घूस लोग पाइ, अुठै परचा सिवाय, हाल
हुरमति जाय, यामें चलति न यारी की।
तलबी भअेपै, जात मुसक बँधति, हवाला-
यति में रहै सहै आच दरबारी की।
गवाहन[1] सहिति पून स्याबति[2] भअे, हाल
जेलपानो होत, बात सुनत यझारी की।
'सुकवि गुपाल' यामें होति मारमारी,[3] याते
नालसि न कीज कबो भूलि फौजदारी की॥

दीमानी पुरुष उवाच

दीमानी में जायकें, जब कोअू अरजी देत।
स्यावति[4] ग्वाह गुजारि कें, जीति मामलो लेत॥

कवित्त

परचि के पाच करवावत पचास पच,
करि कें अपील, जिच्चि[5] करन हिरानी में।
आप मुखत्यार, दापरायति करत, भुगतायो
करें काम, घर बैठेही जवानी में।
'सुकवि गुपाल' मुकदम्मा मे मुद्दई सौं,
जीतें जग स्यावति गवाह गुजरानी में।
अैन करें न जानी, जानें[6] फरेब की बानी करें[7]
आपनी-बिरानी, देत अरजी दिमानी[8] में॥

---

१ मु ग्वाह्न २-४ मु साक्षी ३ बन्नी म्नारी ५ व जिचि ६ मु वालि ७ मु होन ८ मु न्विानी

स्त्री उवाच

सोरठा

कछ न आवे हाथ, साचौ न्याय[१] न होत कहु।
पांय पाल उडि जाति, या दीमानी के गय ॥

कवित्त

महु[१] नहि देप, जावे चाटन परत पाय
घूस–परचा के नाम बहि जात पानी मैं।
पायन की पाल उडि जाति जात–आवत
मुकददमा की हारें जबाब दई की जबानी मैं।
'सुकवि गुपालजू' मुकददमा मैं मुदई को
जीते जग स्यापति गवाह गुजरानी में।
औगन कौ जानी जानें परब की बानी, कर।
आपनी बिरानी देत अरजी दिमानी मैं ॥

अपील पुरुष उवाच

नाम होइ जग मे, न कोऊ जिदि सक दहु
आमें दाम धाइ, घर भर्‌या होइ रीते तें।
परचा समन ताको दाम मिलें परे हाइ
मुद्दई पराव, सब डरे जाकी भीन तें।
'सुकवि गुपाल' अमला के लोग राय हित
नित पुस रह होइ काम चित चाते तें।
बँधति सफीर, मोटो फनि होत डील डौल
पील कौ सौ चढिबौ, अपीलहि के जीते तें।

---

१ न्याव २ पु पाउ ३ मु महूँ ४ मु ताका ५ व भुलानी
६ यह प्रसग है मु म नही है।

स्त्री उवाच

कवित्त

भील सौ कुचील चील लग मडरानौं परें,
घर मे न कील, रहै दुष में पगतु है।
लगैं बहु ढील, हारे पील न मिलति, परी
करनी सफील, हारे भूक्तु जगतु है।
'सुकवि गुपाल' हौल–हुज्जति के होत, लागै
लील कौ सौ टीकौ, दिनरातिहि भगतु है।
जात सब सील, दुप पावें निज डील, याते
पील कौ सौ परच, अपील कौ नगतु है॥

तिलगा[1] पुरुष उवाच

पात तल्व नित माल कौ, रहि पलटनि के सग।
तिलगान के हुकम कौ, कोअु न करि सकै भग॥

कवित्त

बाँधत सगीन सो मगीन रहै रण बीच,
लरत सगीन सग रापैं फौज रगा की।
'सुकवि गुपाल' लैंवें लाषन कौ भूजि डारै,
गढे फोरि डारें, मारें फद बोलि जगा की।
डरत कवीन, ज्वाव देत है फिरगीन कौं,
माफी होति, किती तकसीर कत्त दगा की।
करें राग रगा, तल्व होति नहि भगा, याते
सबही में भली यह चाकरी तिलगा की॥

---

१ यह प्रसग मु है म नही है।

स्त्री उवाच

कवित्त

सीष मिलें कत्री न अुमरि वीति जाय, करनी
परति दवाज अँगरेजन के सगा की ।
वढि के 'गुगान' ठाठ लै करि सगीन, बारि,
जोरि भुज्यौ वरै फँड बालत में जगा री ।
बुरें दुष पामें अेक ठौर न रहन पामें,
देसन भमाव जैस जानत न रगा की ।
वमि करि अगा लरनी पर जोरि जगा, यातें
वटेई अडगा की सु चाकरी तिलगा की ॥

वडीपानो[1] पुरुष उवाच

मारि माल सुष सों रहै, दै जुवाब सो नाहिं ।
मुद्दई रो भार पर, दो आना निन वारि ॥[2]

कवित्त

भलौ बुरौ करें होति दादि न फिरादि, जाकौ
चाहै ताहि तूट, हर रहत न थाने कौं ।
'सुरवि गुगान' ता हृदय[4] पुष्ट होत, पान–
दान धुग रह, नित लेकें दोइ आने कौं ।
वोहरे भरई को करिकें हिरानें सो
निलाल जठ्यो रहै नित लेकें दोइ आने कौं ।[6]
होत है अगारो माल मारि क बिराने, ढीठ
होइह निदानें, सुष पाइ वडीपाने कौं ॥

---

१ म् प बखर्षि का हतिगन्न २ म्हदोश न म नहीं है ३ मु बुरो भना ४ व कष्ट ५ म निराल ६-मु म भर द्वितीय चरण है ।

स्त्री उवाच

कवित्त

घूरि परैं जनम, करम–त्रिया बने नही
आवति सरम पेट भरत न आने मैं[1]।
जाकी[2] 'सो गुपाल' हया हुरमति जाति तहा
गरत है गात बहु गैरति कमाने मैं।
पोदत सरक, बेधरक न रहत, औ'
नजरिबद हैबैं[3] रैनी परैं कैदपाने मे।
मार परैं जानैं बैरी परैं पाइ थाने, अक्लि,
आवति ठिकाने बदुआ की बदीपाने मैं ॥

इतिश्री दंपतिवाक्य विलास नाम काव्ये राजप्रबंध वर्णन
नाम सप्तदशा अध्याय ॥ १७ ॥

---

१ मु आवत शरम भेंट भरे नही आवे म।   २ मु तारी
३ हूं ‍है

'सुकवि गुपाल वहु जानते को मारे कौन,
काम भये पाछे फिरि जाति आँखि जाकी है।
लार गिर जाकी, जानि सिडिविडिन ताकी डर—
—पोकनी सदा की, यह जाति वनिया की है।

वनिज पुरुष उवाच

दोहा

अब वनिज की जायक, अधम कह्यौ ग्राम।
सब जग जाके करेते पात पियत निज धाम[1]॥

कवित्त

वेद यो कहत, सदा लक्षमी रहति, बडे
भूपन लहत, वात वनी रहै व्रज की।
सारत गरज, परजा के दुषी दीनन की
समत—कुसमन, में राष लाज रज की।
बडे धनमानन की, कमेरे किसानन की,
बिगरि ईमान नफा लेतहु अुपज की।
भरे रहु माल, रिन माग्यौ मिले हाल, याते
कहत 'गुपाल' वडी वातहु[2] तनन की॥

स्त्री उवाच

दोहा

वनिज—वनिज सब कोऊ कहै वनिज करौ मति कोइ।
जाकी हानो सार की वनज करैगो पाइ॥[3]

---

१ है मु जामे जाते मुर स— — मे रत्त वषान॥
२ है म सुकवि गुपाल घर बठे —।
३ मु वात है।

कवित्त

डटि जाय[1] मान तो राम दवि जाय पुनि
घुनि सरि जाइ यटु दिनके भग्त[3] मैं।
होइ जोप्यो ज्यान, चैय टाटग[4] पनान, धनी
देर न लगति, व्याज मारे मे चटत मैं।
आगि पाणी डीम मूसे सस फौज–फाई टर
चारा वो रहत दुवान मे भरत[5]मैं[6]।
वहत 'गुपाल' वछु हाथ न परत वहु
पचि पचि मरत या वनिज वरत मैं।

वहवनिज[7] पुरुष उवाच

व्यापारन वे बीच में, वनिज समान न कोइ।
जा वछु होत किसान वे, सो घर याके हाइ॥

कवित्त

रुई के वनिज नफा मिलि जात हाल, नाज–
वनिज अवालन में खोलि देत कोठो है।
धातु के वनिज मे न घुने–सर माल कोऊ
पट के वनिज मे विचारत न खोटो है।
वनिज किरान में ब्यौसत अनेक जीव,
तेल–घृत वनिज मे वन्यो रहै मोटो है।
'सुकवि गुपाल' कोऊ वहत न खोटो बहु,
वनिज के करिवे में आवत न टोटो है।

—१० मु है बढि जात २ मु है सरिजात ३ है धरत ४ है मु है मु औ ५ है धरत ६ मु आगि पानी दीम मूमे शश फाजफाइ ~र चारन वो रहत दुकान के धरत म ७ यह विषय केवल मु म है।

स्त्रीउवाच

दोहा

रुई, नाज, घृत, तेल, पट, धातु किरानन लेत।
ब्याज र भारे के चढे, यामें टोटो देत॥

कवित्त

रुई के बनिज पानी-आगि को रहत डर,
नाज के बनिज में नरक वास लेते हैं।
तेली से रहत तेल-घृत के बनिज माह्य,
बनिज किराने में प्रदेश डेरा देते हैं।
धातु के बनिज माय जिय को रहत ज्यान,
पट के बनिज में कपट-झूठ केते हैं।
'सुकवि गुमालजू' कहे न जात जेते चहु,
बनिज के करिब में होत दुख तेते हैं।

नाज बनज[1] पुरुष उवाच

पी पत्ता[2] भरि नाज को करत बनिज जो कोइ॥
वा व्योपारी को सदा घनने सुप निन होइ॥[3]

कवित्त

व्योमें जीव-जन्तु, औ' अनेक जीव जीवैया सौं
दूनों होनि नफा कोठे-धाम के भरया की।
बौहरे-किसान, औ बिपारी-धनमान जाके
द्वार ठाटे रह-वो पुसामदि करैया की।

---

१ मू मंडी को रुजिगार। २ मू खाता। ३ मू तासो मंडी माल
म, इतन सुख निन होइ।

रहत 'गुपाल' यह अन्न में अनेक धन
समत–कुसमत में बात न टग्या की।
पंज की परया, दीन दुपकी हरैया, याते
सबही में सिरें बात, नाज के भरैया की ॥[1]

कवित्त

देसन में आढति बिसाहत जिनसि सब,
कोठा[2] पास–पत्ती भरि लेत भाव झडी के।
अन्न–गुर–चामर–किराने आदि सौंज बहु,
महँगे भअे पर निकासै राह डडी के।
जोरि–जोरि धन कर परच, बधाई–व्याह
ब्रह्म–भोज, नाम, हनुमान–हरि–चडी के।
'सुकवि गुपाल' प्रजा पालत है हाल, याते
दया–धम–धारी अुपकारी[3] होत मडी के ॥

स्त्री उवाच

दोहा

बेचन काजै नाज की, बनिज न कीजै कत।
जीवत देत धिक्कार नर, नरक जातु है अत ॥

कवित्त

भूपौ प्यासौ देपत में दया नही आवै सस–
पेंज मे रहत, बेचि सकत नही फुरती।
'सुकवि गुपाल सो अकाल ही की देप्यौ कर,
माल धुनें–सरै जब रायौ कर भरती[4]।

---

१ यह पूरा छद मु और है म नहा है। यह वृ मे एक अतिरिक्त छन्द ही है। २ मु उपकार ३ मु धरती

वरषा न होइ, भूपे[1] गामन के लोग गों–
उपारि पाय जाय, जब पोचौ करै धरती
मरी वषत में, नरा जाय मखती सों
यात नहि कीजै कबौ नाजन की भरती ॥

घी –तेल वनज पुरुष उवाच

वनिज करन घृत तेल को इतने सुप नित होत ।
कवि गुपाल' तितने गुनौ, हममों वुद्धि अुदोत ॥

कवित्त

सब ते सरस नफा लीयौ कर नित प्रति
करि के मिलाअु वेच्यौ कर भडमारी कौ ।
'मुकवि गुपाल' जिन्सि कटअ कौ' लेत–देत
मार्यौ करै मजा सो किसानन की नारी कौ ।
ादत में मान, लाल बने रहे गात, पान–
पान कौ सरस सुप होत घरवारी का ।
देह होति भारी, रप रापत त्रिपारी, याते
होत सुप भारी, घत तेल के त्रिपारी कौ ॥

स्त्री उवाच

दोहा

तेल र घृत के वनज में, रहत कुचीले गात ।
नेत देत कटअू जिनसि, निसदिन होजत जात ॥

---

१ मु मिनि २ मु धन
३ मु छाटि को मिनाय वेच्चों कर नर–नारी को । ४ मु क
५ मु लीवा कर ६ मु पक्वान ७ दू वापारा कौ । ८ म हीटत

कवित्त

तेरी व मे पट जाम नीकने उनेई रह,
मनो¹ हान गान मा करन यह पेन का ।
'सुकवि गपाल पर्ले दन पर दाम पाछ
जिनमि वे दत मे लगावन जवेन का ।
गिरे पैर पाछ कछू हाथ नहि आव, नप
फास लगि रहै घेरा साथ ला मवेन को ।²
लगत झमेल मन रहै उरवेल, यात³
कबहू न कीजिय वनिज घन-नेल का ॥

नौन वनज⁵ पुरुष उवाच

त्रिगरै न कबी, सुध—सुधरें मन होइ रहै सुअधो नहिका ।
वहु पाय सक नहि कोऊ कहू परो पच रहै नहि गौनहि का ।
सु अजागर है सर आगर मै नफा लीयो कर भरि भानहि को ।
रह 'रायगुपालजू याते मदा रुजिगार भला यह नानहि का ॥

स्त्री उवाच

दोहा

छीजि छीजि क रहतु ह मन को जब अधान ।
वठि रहै जद मान गहि, नौन वनज कर तौन ॥

---

१ म मल २ म थमन का । मन्भवन यह यमा है ।
३ म नग्गा रह याम सना मान ना मवन का४ व उरवन ।
५ वन प्रमग मु म नहा है ।

कवित्त

तोरा पै न बिकं, पर पौनिनतें काम महसूल,
लग घनों, ताप बाव कहा बौन का ।
दैनो परै तोलि न अधीन की पचीस सेर,
पानी होत हाल, पुरवाइ लग पौन को
'सुकवि गुपाल' बुरो सान की रहन नौन
बचाही वहावै नैक रहनि न रौनको ।
गर गात गौन, बुरो रहै हाट भौन, याते
मत पै नहौन को बनिज यह नोन को ॥

गुरखाण्ड वज[1] पुरुष उवाच

मीठो मुष सबको रहै सीठो रहै न कोइ ।
भरि दुकान, गुरषाड को, बनिज करतु है साइ ॥

सवैया

सदा-पौन्यो कर निनमों, मरहो, मुष मीठो रह सुहजारन का ।
कट आन्ति देत निदेसन म, वारे थला नच घरवारन कों ।
हलवायन सो रह प्यार घनो, नफा होति उठै बिचवारन को ।
कहे 'रायगुपालजू' बजन में सदा बज भलो गुरपाड्ह का ॥

कवित्त

हाथ-पाउ वसन चिपकने रहत, मापी
भिनिरि-भिनिरि करि पाजे जात अुर को ।
धरत उठावत मैं, पाजें जात लोग जाइ,
वानिगीन ही में लीयो जात लोग मुर का ।

---

1 यह भा मु म नही है ।

'सुकवि गुपालजू' दिसावर का लत प्रान,
मासन ही जात भाजु ताजु लत धुर को।
वडी रहै डर, जाय मक नहि घर, यात
भूलि के न कीजिय, वनिज पाग्गुर को॥

रुई वज पुरुष उवाच

सकल किसानन वजई,[1] जावन कग्हुँ न नज।
करत रुई के वज में, दामन के होइ गज॥

सवैया

न्यौसत ह जासों जोदा अनकन, होइ कत्री पटकौं न सुई कौं।
काटि कपास किसानन त हि, टाटिके लेत नफा सबही का।[2]
(कची)लादिचढावै दिसावरकों,तव[4] वेचत वज लगै न कोई का।
राय गुपालजू' वजन मैं[5] सबही में भलौ यह वज[6] रुई कौ॥

स्त्री उवाच

दोहा

याके वदलत भाव मे, टोटौ आवत हाल॥
याते भूलि न कीजिए रुई वनिज विच हाल॥[7]

कवित्त

व्यौपारी अटैयन कौ राप परत रुप
आगि-पानी-डर नर नहीं कहु विज में।
'सुकवि गुपाल पप जोवनी कहत भाव
वदल्यौ करत नफा मिन नही रिज मैं।

---

१ मु वचई २ मु जावन जान है आगा अनकन ३ म काटि किसाननन सा कपास डेन्यकें नन नफा सवई का। ४ मु तहा ५ मु राय गपाल है यान मना ६ मु रुजिगार ७ यह नागा न म नहा है।

चयै ठौर घनी, टाटै जौपै होइ घनी, भाग
जग वढि जाइ लोग आय आइ पिजमे ।
जमा जाय ठिजि, जूती देत मिजि मिजि, दुप,
होत हियैं निज, अेते र्ई वे ग्रनिज में ॥

किराने पुरुष उवाच

देमन में आढति रहनि[१] वाढन है ग्रहु दाम ।
जीव-जतु ग्रौम ग्रहुन, भरत किरानें धाम ॥

कवित्त

आढति के ग्रोग मान भेजिवौ करत, मिल
सवने सरम नफा, माल के त्रिकाने कौ ।
'सुकवि गुपाल' जीव ग्यौसत अनेक नित
जासा दय्यौ कर लोग मकल खाने का
जेक कौ नफा न, टोटे अेक कै में देत, हानि
आग्रति न कहू,[४] सदा आछै मिलै पाने कौ ।
आपन-त्रिरानें दाम रहत थगनें, वौ
अग्रानें-पाने होत, वज करत किराने कौ ॥

स्त्री उवाच

दोहा

देस विदेमन जाइ वै भरत किराने मोइ ।
मँदवारे के विकन में टोटौ यामें होइ ।

---

१ मु ग्रह २ म ग्राम ३ मु म । ४ मु कम्

कवित्त

आटति बिगरि, ताम सरत न अर, भानु
राणो परत यादि सबल मता न का।
'सुकवि गुपाल' जानो पर परदस मान
भलो बुरो दीय, धरि परा जमान का।
भजत में भाल, मान गारत गुमास्त हो,
आस्ते ही पट दाम सवन रवान को।
रहत मनान, वस परन विराने वड
हात ह टिरानो काम करत किरान[1] का॥

वस्त्र बनज[2] पुरुष उवाच

नजे पुराणे त सरम, जामें मिनि त्रिवि जात।
बठ वस्त्र के बनिज की, यातैं मन में जात॥

कवित्त

बकुचा लगाइ बडी सज का बनाइ, रह
सीतल सुभाय, कबी राप न मिजाजी का।
'सुकवि गुपाल' सदा समन को चाह, डयौढि
धरम कें लक सदा सारें परकाजी को।
छीपी रँगरेज रप रापत रहत व्यौम
दरजी–रजक रापें कोरिया को वाजी को।
हानि बृद्धि चाखी जाते मन रह राजी यान
वडे सुप साजी को सुबनज बजाजी का॥

---

१ व किराण
२ यह प्रसग भू म नहा है।

स्त्री उवाच

दोहा

आप लामनौ परतु है देस विदेसन जाइ।
ताते पट के वनिज कौ, परौ है दुपदाइ॥

कवित्त

गरि-सरि जात, वहु घरें भडमरि जात,
काटि जात मूसे, समे देपि पट ताजी कौ।
सुकवि गुपालजू बजाजन कौ देत कछू,
मिलति न नफा रावै गाहक की गाजी का।
सौगँद कौ पाय नफा धरवम त लगि पर
दनी परै जमा, पाछ आवौ गनि साझी का।
नत राजी-राजी, पाछ देन यतराजी कर
यातें बुरौ पाजी, यह वनज बजाजी कौ।

धातुबज[1] पुरुष उवाच

राग, जस्त, पीतरि, कमा तामृ, लोह के गज।
चादी, माना रहत घर, करत धात कौ वज॥

कवित्त

रार मर डग धरें, जरें, मिगै ग, गपा
मिलनि दफट्टी गा दिगावर क जान रा।
हान गडी घार सीगी धमरे व्यौगार, वट
हानट विप्यान गा वनज नियं धान का॥

स्त्री उवाच

दोहा

आप नामनी परतु ह दम-गिदमन जाय।
ताते धातु में वनिज की पनी ह दुपदाय॥

कवित्त

दत-लत, धरत-अुठावत, गहावन में
डर रह्यौ कर टूटिव की पाय-हाथ का।
'सुकवि गुपालजू दिसावर में लावत में
भरत भरावत में, करें प्राण-घात कौ।
कसेरे-लुहारन, रापने परत रप, छाति
डिगि जाति ह, अुठाअे बोझ राति कौ।
कोअू न व्यौसात, कारे रहू वस्त्र गात याते
वड अुतपात को वनज यह धात कौं॥

चूनाबज[1] पुरुष उवाच

राज कुमहार, दलाल पुनि काकर-लामन-हार।
व्यौसत बहु जन करत में, चूने को विवहार॥

---

१ म म यह प्रमग नहीं है।

कवित्त

प्रीति बढ़ि जाति, यामें राउ अुमराअुन सों,
चाअुन सो मिल दाम, करै यह हट्टी कौ।
'सुकवि गुपाल' लोग पलत अनेक, याकी
बिक्री लगै पै, हाल सोनो होत भट्टी कौ।
लैंव-दवै काज कौ, दिसावरन जानो परै,
चौरें पार्यो रहै, याकी बिगर न गट्टी कौ।
हात झटपट्टी, नफा मिलत इकट्ठी, आमें
दाअु-घाअु घट्टी, वज करतहि भट्टी कौ॥

स्त्री उवाच

दोहा

हट्टी घर की छाँडि मन, रह भट्टी क माँहि।
जमा यकट्टी चाहिय, या भट्टी के दाइ।

कवित्त

कच्चे रहै जौप, तौप मार जाइ दाम,
असवारी है सक न, रज चढति मगज कौं।
'सुकवि गुपालजू न पावत भरावत में
पेय पायी कर, वस्त्र रहत न मज कौ।
होति-होति रहै, हत्या हजारन जीवन की
काम नीच जातिन सो रहै जिय झझकौ।
जाति रहै धज, होनों पर निरलज याते
सबही में कज कौं वनिज चून पज कौं।

लीलवज पुरुष उवाच

ग्रीज गादि मों गादि कें, नफा घनेरी लेत।
गरन लील को वज, होइ अंगरेजन सों हेत॥

सवैया

कत्री ढील लग नहि वचत में, मदा दस विदमन जान चल्यो है।
अंगरेजन सों रहै प्यार घना, करे कोठी ते दीमें प्रताप बली है।
कादि कें गादि, दिसावर ते भरि वीज में नेत नफा मगरो ह।
राय गुपालजू याते सदा सबमें यह लीन को बज भलो है॥

स्त्री उवाच

दोहा

देत-नेत छूवत-छुअत, पाप लगत तन मजु।
नेद पुराणन में कह् यो, अधम लील को बज॥

कवित्त

स्वपच, गमार, जिमीदारन ते काम पर,
 वडौ पाप लाग पत हैक जो निकरियै।
सुकवि गुपाल रपै पैल-पाय बठ लोग
 बाकी रहै जिनमि किसानन ते डरियै।
कूबा-यह वच्चा, कोठी करिवे को चाह दाम,
 नफा मिल जबही, दिसाबर का भरिय।
कार कर करियै, औ' वामन ते मरिए, न-
 याते भूलि लील को वनिज कहू करियै॥

---

१ म म यह नगी है।

चौहराके[1] अठवरिया पुरुष उवाच

जुर्यो रहतु है जोहरा, सारि सौहरा काम।
व्याज चौहरा आवही बौहरान के धाम ॥

कवित्त

यात तत्व माल, नित देह रापे लाल, बने
लाल' र गुलाल, रहै राधि आनि-कानिया।
'सुकवि गुपाल' बहु राति कौ जे चाह दाम,
डढतन न देइ ब्याज चौगुनी के पानिया।
हिय दया, दान, सदा रहत अमान, जैसे
बौहर दलेल अठवारी नदरानिया ॥

स्त्री उवाच

सोरठा

लेन आपने दाम, बिरिया बपत न देहयौ ॥
पारिज पाऔ राम, कबही अठवरियान सा।

कवित्त

दया नहिं जाई, सो बसाई बनि नेत दाम,
डोनै गाम-गाम, दरि रहै बडी माटी है।
'सुकवि गुपाल' नित कुटम के मग बठि
बिरिया-बपत, पाय सक्तु न राटी है।
बोल-बुलबाये डर, पटत है दाम तब,
मिर कौ पसीना आवे ओडी तक चोटी है।
सब कहै पाटी, दबि होअु किनि काटी, सदा
याते यह जाति आवारिया की छोटी है ॥

---

१ यह प्रसग मुम नहीं है। २ यह छन्द खडित है।

बोहरे॰ पुरुष उवाच

मन करे त बनिज ते, कर वहुरगनि नारि ।
तावी अत्र वरनन करू सुनि प्यारी मुकमारि ॥

कवित्त

जोति मुष हाति, निन कमँई कमाई होनि,
जग मे जुदोत होत भरम अपार है ।
आनिकानि मानें, सव जन सनमाने धन–
मानै रहै याते, सुप पाने की सदा रहै ।
कहत 'गुपाल' वूस[१] होइ सब जाग पाछ,
लाग वहु लागें, घेरें रहै घरवार है ।
राप सब प्यार कयी जावति न हार, याते
मत्रम अगार, बौहर की रुजिगार ह ॥

स्त्रीवाच

सोरठा

पहने घर धन देउ, पुनि घर घर मागन फिरो ।
माते दुप सुनि लेउ[३] कवहुँ न कीजै वहुरगति ॥

कवित्त

भारी करै घर[४] जाइ देइ न अुधारौ जाइ
मरम ते मार्यौ चोर भ ते तन छीजिय ।
चित में न चनौ होत, पर हाथ दनौ होत,
ननौ हात मन–धन देपि दपि जोजियै ।

०–मु वहुरगति का रुजिगार
१ है मु हात/हानि
२ ह मु यह पक्ति इस प्रकार है
जावत न हार धन रत्त अपार यान
मव न अगार बाहर का रुजगार है ।
३ है फिरि ४ मु वीर

रोतनो परत बुरे, टोतनों परत धर,[1]
कहत 'गुपाल' याते काहू कों न धीजियै ।
दीजै न उधार, होत मागत में प्वार, याते
भूलि रुजिगार बौहरे को नहिं कीजियै ।

ग्रामबौहरे[2] पुरुष उवाच

आमामिन की वजई, भरिक निज घर नाज ।
गई गाम के बौहरे, करत रहत हू राज ।।

कवित्त

नऐ औ पुराने[3] नाज भरे रहू जावें,[4] औ'
हजारन असामी आय परे रहें पाम में ।
लेन-देत जिनमि में, परत सवायौ, परै
धरम क टून, दाम भयौ कर धाम में ।
'सुकवि गुपाल क्वो पानी न परनि,[5] सदा
नाम वर हैक बैठ्यो रहत अगाम में ।
आय निज धाम, लोग कर रामराम, होत
तेते सुप-धाम, बौहरे का गई गाम मैं ।।

स्त्री उवाच

दोहा

छाती पै चढ़ि लेनु है, दाम मरेन का[6] मारि ।
अमे तो ग्रौं्रेन की, जीवो है धरकार ।।

---

१ मु पर २ मु गामन की वग्रगति । ३ व पुराणे ४ म ताके
५ मु सुकवि गुपाल जाकूं खामी न परनि कभ । ६ म नामी-नर
७ म छत रत मन रारि नन है गाम नग्म का भार । ८ म
रग्गन का

कवित्त

हाउ हाउ करि लाउ–लाउ में लगर रह
　　पाइन–पयामें गहे परन को पाछा है।
सादी औ बधाई में निपट रापें नेंनो मन
　　पुन्य के वपत को भगर भप काछो है।[1]
कहत गुपाल जोरि–जोरि धन धर, जेक
　　कौडी काज मर मरें परें जउ वाछो है।
पात गरयो–सरयो, पर्‌यो पोन के तरे को नाज
　　जसे बोहरेन त कंगालपनो आछो है ॥

आसामी[2] पुरुष उवाच

पाता के परे प, पट सबते पहल रुप,
　　परच औ' पादि, पामी परति न कामी का।
दव औ कमायब को, लालो भेक रह, और
　　रहत न डर, काम चलत हरामी को।
'सुकवि गुपाल' बोम वाही के रहत सिर
　　सादी औ' बधाई घर बाहर औ' गामी का।
होत वडो नामी, कवि परति न पामी, अेते
　　सुप होत सामी बोहरेन को अमामी को।

स्त्री उवाच

दोहा

देत में सवाअे, ब्याज लेत में सवाजे, जिसि
　　पेत में सवाजे, सो सवाअे पादि गनिय।
जौर का 'गुपाल लन देत नहि माल, दूजौ
　　लवे को अुधार, होन देत नहि धनियें ॥

---

१ मु म यह पक्ति इस प्रकार है—वडो धन जोरि क जगत म अयश लहै जिकिर फिकिर बीच मन जाय काछा है। यह पक्ति मु म तीसरी है। २ व खोज। ३ यह प्रसग मु म नहीं ह।

निमौ-बैल-टाला-टूम-रुष, घर-घर तौगों,
पात-पियत में (जाकी) छाती जरी जाति घनियै।
दाम टटै पामी, हाल पग्जिात साम्ही, याते
मूलि कै अमाह्मी, बौहरे की नहीं बनिय॥

लदैनो[1] पुरुष उवाच

न्योहरेन वे दुख कहे, प्यारी चतुर सुजान।
तन मु लदेने के कहै, सुख गुपाल गुणभान॥[2]

कवित्त

आपनो-परायो धन रच्छ्या करै हाथ, सग
साथ हा में परन पराउ सदा टैने को।
नायक कहावे, औ' किराने लादि नावे, भारी
भरम बढावें औ' रहै न टर देने का।
खाय न ठगाई, चतुराई ते कमाई, टव,
जावै माल बिकरी खरीदि करि नैने को।
कहत 'गुपाल कवि' मेरे ज्ञान मेंनो याते,
सबही ते भलो रुजिगार है लदैने को।

स्त्री उवाच

सोरठा

कबहुँ न कीज चाह, भूलिहु या रजिगार की।
निशि दिन चालैराह सबते दुखी लदनिया।

---

१ यह प्रसग व मे अपने विनाल (? प्रबध) म है। पर विषय की दृष्टि स हम यहीं रखना चाहिए। म म यह इसी विनाम के अन्तगत है।

२ है म म मारठा इस प्रकार ह—

प्यारी चतुर सुजान बौहरन क सुख कहे।
सुनहु बनिज सुख आन करत रहना जाय क॥

कवित्त

भूमि मे शयन, निशि-रयनि खरान होति,
बोलना परत झूठ-साच लैने दन म।
चिंता नित रहति, जिनसि घटि बढ़ि की,
जिय जाव्यो ज्यान को रहत टर टन म।
देश-परदेशन में डालना परत, भले
भेस ही सो सहनो परत सब धने म।[1]
कहत 'गुपाल' कवि आढति जिना ता होत
दिन-दिन दूनो दुख दुसह लदने में।

काठकौवज[2] पुरुष उवाच

लगी रहै बिक्री सदा होत दाम के गज।
सब बजन के बीच में, भलौ काठ कौ बज॥

कवित्त

लट्ठा-सोठि-पठा चले आवत दिसावर तें,
मिल जमा भारी कारखाने ते अरज मैं।
सुकवि गुपाल जासौ व्यौस वेरे वार बहु
बढ़ई-मजूर, काम करत मरज मैं।
जग के किमामी, रुख राखत रहत, होत
सबही की सुख जाकी सहज जरज म।
मिलत करज, जान सरत गरज, कही
होति न हरज, कवी काठ के बनिज मैं॥

---

१ व टन म
२ यह प्रसग मु है म नही ह।

स्त्री उवाच

दोहा

दामन में पामी परै, धुनें-सर जो माल ।
रहत सदा बेहाल ते, करत काठ की टाल ॥

कवित्त

हाथ नहै दाम, औ तिपारिन ते काम परै,
धुनें-सर धरै जमा यामे हाल छीजियै
रातिदिन यामें कर्णी परै रखवारी, घर—
लावत—उठावत में नित तन छीजियै
तोलत—तुलावत में, गिनत—गिनावत में,
व्यापारी मजूरन ते मन न पतीजिय ।
वुरो रहै हाल, औ पुमीमी रहै पाल,
याते टाल को 'गुपाल' रुजिगार नही कीजिय ।

पत्थर वज पुरुष उवाच

गरै, सरै, न बर, कहूँ, डर न चोर को होइ ।
याते बजन में भलो, यह पत्थर को जोइ ॥

कवित्त

राप हित भारे पानवारे गाडवारे होत
कारखाने यारन मा बूझ भोर-मज मैं ।
'सुकवि गुपाल' कवो बिगरै न माल, हान
होतु है निहाल, राजु गाजन के रज मैं ।

---

१ यह प्रसग म म नही है ।

चाहौ तहा रहौ, माल कहूँ परया रहौ कछु
लालौ न रहत, सज रहै तन मजु मे ।
मिट ससपज, कवी आवति न लज, हात
दामन के गज, सदा पत्थर के बज मैं ॥

स्त्रीउवाच

दोहा

इनअुत इनन होत निन सदा भो सज ।
याही ते सबमें नुरौ यह पत्थर कौ बज ॥

कवित्त

पानि, गटमाँन, कारपानन पै जानौ परै,
हात जिय जयान, याके देन नैन छोजे त ।
राजसी 'गुपाल' कारपान वहु चन नव
पाव नफ याम, घूम अुस्तन के दीजे ते ।
करयौ रहै मन, मान भरया रहै जहा, मूड
मारना पग्त माल ताल माझ जीये ते ।
सत्तरि के मिले पै वहत्तरि कौ पच मन
पत्थर सो होत बज पत्थर कौ कीजे ते ॥

नि श्री दसनिवासर विनाम नाम सा र ब्रज प्रबंध वरणन नाम
अष्टाश्न विनाम

ऊनविंशति विलास

दुकान प्रबंध[1]

दुकानदारी पुरुष उवाच

दोहा

करि दुकानदारी अबै बैठू जाइ बजार ।
धन कमाइ सुप पाइहौ, प्यारी या ससार ॥

कवित्त

रापन समान यामें, घटति जमा न, कर
सबही जबान, साचौ जाति कें जवान कौ ।
आवन न हानि, भलौ प॰त पान पान, करि
सिवजू कौ ध्यान, सुनें हरि चरचान कौ ।
कहत 'गुपाल,' जात मान अभिमान, बहु
पायक नफान, काम करत जिहान कौ ।
भिक्षुक दान, बहु आवत सयान यामें
हात धनमान पसौ करत दुकान कौ ॥

स्त्री उवाच

दोहा

सब दुकानदारी नफा, जाकौ यामें जाति ।
करत दुष्य भारी रहै, बैठक करि दिन राति ॥

---

१ यह पूरा प्रबंध मु म नहा है। इसम स कुछ दुकाना का उल्लख 'बनिज प्रबंध क अन्तगत है। २ है मु आवति ३ मु जनि ४ है किमान ५ है मु यारी

कवित्त

मारी[1] मार करे दिनराति मिरकारी लाग
सौगुनौ भरम वर आमदि की वारी में ।
मारी जाय ग्कम, जिना लिप अुवारी देत
बाकी रहि जातु है लवारी नरनारी कौ ।
कहत 'गुपाल' चौकीदारी जिमीदारी औ
भिपारी लाग आइ प्वारी करत लिवारी का ।
आवत अरारी, पेडौ देप घरवारी सा
कह यौ न जाइ मारी दुप या दुकानदारी कौ ।।

सेठ की दुकान पुरुष उवाच

दुज दीनन दीयौ कर दनि दक्षना दान ।।
सेठन क यामें गुनी साव मत सनमान ।।

कवित्त

दमन में नाम जीव जोम धाम–धाम, गाम–
गामन मे काठी राअु राजा रह दव ते ।
मदिर–मकान, कुआ–वावरी बनार्‌ नाल,
मद्र–मदावत्त, पुन्य दान होन ट्जत ।
'सुकवि गुपाल' राखें राजस के त्यौर गादी–
तकिया लगाय बैठ रह सदा छबि त ।
बनजें करोर, आई–गई कौ छार, न सदा
या सरबोर बात सेठन की सब ते ।।

---

१ है मार २ है मु जाय वमराम नाना कर बिपारी (म व्यापारा) का ३ है मु जा

स्त्री उवाच

दोहा

कवि–कोविद, दुजे दीनजन, जाचिक लोग अनत ।
सेठिन का घेरें रह, भिक्षुक मत–महत ॥

कवित्त

चोरी–डाके परिबे कौ डर रह्यौ कर, नित
बढे ते भरम थिति पावत न कितही ।
सेठि कौं बिगारि, बनि जात है गुमासते
अनेक रोग लग, भावै भोजन न हितही ।
सुकवि गुपालजू' दिवाले निकरे पै, कोठि
होति बरबाद धन जात जित–तितही ।
वितहीन भय, कोऊ कितही न बूझें, ऐसी
बिद्दति रहति, सेठ–साहन कौं नित ही ॥

गुमास्तगीरी पुरुष उवाच

मारयौ मान कर सदा, सब सौं करि घुमपट ।
सेठिन के सुगुमास्ते, होत सेठि के सेठ ॥

कवित्त

मनमे चढै पै बनिजात हाल यामें, आप
हुकम चलाइ काम करयौ करै औसन ।
जेती जमा जावै, सब हाथ में रहति, काम
निकर अनेक, सदा रहत हुलास त ।

'सुकवि गुपाल' रहै धन री न धर्मों रहैं
जाकों सदा घनो दर मार्यो मिल पास न।
रहै विसवास न, औ' टर नहिं पास न,
सु यात भागें मठ साहन के गुमासतें ।।

स्त्री उवाच

दोहा

रचि-पचि सेठि र साहू को, कितौ करा किनिहित्त।
तऊ गुमास्ता कें रहति, सिर बदनामी नित्त ।।

कवित्त

आढती अनेकन की लिपने जवाव परें,
होतह पराव धन देत लेत चाहू को।
'सुकवि गुपाल' रजनामे अरु पातन मैं
करि जमा पच समझाये होत दाहू क।
पठ पर पैठ वहु हुडिन सिकारत मैं,
जात दिनरैनि लेपे में सब जाहू को।
सेठि अ साहू, केती करौ क्यौ न चाहू याते
भूलि के न हूजिय गुमास्ते सुकाहू को ।।

जौहरी पुरुष उवाच

सोरठा

जौहरीन को काम, सेठ बने बठे रह।
भरे रह धन-धाम, बढत[१] भरम यामें घनौ ।।

---

१ है वट, मु भरम बन्त याम घनौ।

कवित्त

पन्ना, पुपराज, मोती, मूगा, मनि नाना भानि,
हीरा, लाल, चुनी[१] नगर वान गुघाट के।
सौने अरु चादी के गराभु जरे जेवरन
जगर-मगर जोति[२] जहा होति वाट के।
जौहरी महाय, अुमराय वनि वैठे रह,
जैस करि सदा, सुप लीयौ करै पाट के।
'मुकवि गुपाल' रह सपति के ठाठ, याते
कहे नहि जात, सुप जौहरी की हाट के॥

स्त्री उवाच

सोरठा

जौहरीन की हाट, वातन ते नहि होति है।
करै ओर कौ काट,[३] तव पावै यामें नफा॥

कवित्त

देपिकैं मुनम्मा न्गा पाय जात हाल, पर-
पत जवारायति मे नजरि के सामहे।
गरज न सरैं, नित विकरी न परैं, घनी
गाहकी न करैं,[४] पट ज्यौ के त्यौं न दाम ह।
मोल लेत-देत यामे जोप्यौ रहै वडी सदा,
'मुकवि गुपाल' वहु चहियत नाम है।
रहति न माम, सुस्ती रहै ाठो जाम, याते
सत्र मैं निकाम, यह जौहरी कौ काम है॥

---

१ मु चुन्नी २ मु ज्याति ३ मु करि ओरन की काट ४ मु है पर

कलावत्तू पुरुष उवाच

बने ठने[१] बैठे धन, लेत दाम गिज राम ।
कलावत्तू के वटन को, है अमराई काम ॥

कवित्त

बडो तौल-मोल, अमराई राखै जान मोल,
लेत-देत माल धरि देत हाल हत्तू का ।
'सुकवि गुपाल' वहु करत कमाई, नफा
मिलत सवाई जमि बैठे जगर धत्तू को ।
आपने[२] अधीन बने रहत अमीन वीन
होई' के सुधीन, खायो कर भात सत्तू को[३] ।
होत भदमत्तू औरैं करि देत अत्तू आप
होत बडे वत्तू काम करि कलावत्तू को ॥

स्त्री उवाच

दोहा

देह सकल रहि जाति है सदा आठहू जाम[४] ।
याते कठिन 'गुपाल कवि' कलावत्तू कौ काम ॥

कवित्त

जाति जिय सत, याकी महनति अति, देह
लटति घटति भाव माल के डटत में ।
इत-उत चलत में हारि जात हाल हाथ,
होत नहिं आछो काम चित के बटत में ।

---

१ मु बने २ मु अपन ३ वृ विची कभी न रहति जमि बैठ जगर धत्तू को । ४ मु याम

गुरवि गुपाल' चत्रि चूतर औ' रग जाति
नारि रहि जानि ऊचे नीचे के उठत में।
रोम अुपटन, दाम हाल न पटत, जोति
नन की घटत, कलावत्तू के बटत मैं॥

हुडीभारौ/ पुरुष उवाच

हुडामनि लै हौ बहुत करि हुडी की हाट।
आढति देस विदेस करि, धन के करि देऊ ठाट॥

कवित्त

नगयौं करै आद, देस देस की पकरि, औ'
भडार भर्यौ रहत, कुबेर के समाने कौं।
बाढत भरम जमा डारत अनेक[1] दाम,
सिकारत हुडी दाम पटत जवान[2] कौं।
सुकवि गुपाल'[3] दाम दाम लेइ हुडामनि,
ब्याज पाइ दाम गनि देय सवा धान कौ।
होत[4] धनमान, सुप पावत निदान, कह्यौ
जात नहिं आन, सुप हुन्डी की दुकान कौ॥

स्त्री उवाच

दोहा

रातिदिना यामें घनों, रहत परच कौ काट।
हुडामनि की हाट में, धन होइ बारह बाट॥

०—यह प्रसग मु म नहा है।
१ है अनके २ है जवान ३ है सुरवि ४ है हान ५ यह है
म मारटा के रूप में है।

कवित्त

चाहिय गुमाश्ते' र आढति अनेक ठौर,
दैनी पर चिट्ठी लिपि रगड जिहान के ।
करिकें फरेबी झूठी हुडी लिपि लाव, तब
मारे जात दाम, बिन दौअ ते जमान के ।
'सुकवि गुपाल' दस दसन में फल दाम
वडी कठिनाई ते, यकट्ठे होत आनि कैं ।
रहै न यमान नो दिवालौ कढ हानि, कह
जात नहिं आन दुष हुडी की दुकान के ॥

हुडाभारौ॰ पुरुष उवाच

आढति देस-विदस मैं धन के रहनह ठाठ[1]।
भरम धरम बाढत घनो, करि हुडामनि हाट ॥

कवित्त

देसन में आढति औ' बाढत ह दाम नाम,
होइ गाम गाम काम करत इमान में
'सुकवि गुपाल' बहु बचत में बीमा, सो
बिपारिन त माल, मारयौ करत जवान में ।
आवत मयान, देइ दव सनमान, होइ
हिय हरि ध्यान, मति रह दया दान म ।
चाहिये जमान दव्या करति रकानि[2]सुप
यसे मिन आनि, हुडा भारे की दुकान में ।

०— म हुडाभार की दुकान
१ है मु रहत सुठाट २ है मु रकान

स्त्री उवाच

दोहा

बहु बीमन के बीच ते, धन होइ बारह बाट।
हुडा-भारे की कबहुँ करो न याते हाट ॥

कवित्त

ठौर ठौर फिर बहु रापने परत नर,
रिद्दति की भर है तनासी जोमवारे[४] कौं।
बीमा के करत होत धकर-पकर जिय,
चिंता रह्यौ करें, नित[५] साझ लौं सवारे कौ।
'सुकवि गुपाल' नाव डूबिबे की भय, चोर
लूटि औ' पसोटि डर अगिनि के जारे कौं।
मन जाय[६]मारे, माल पहुंच न द्वारे, तौलौं
रहै भय[७] भारे सदा हुडाभारे जारे कौ।

दलाल पुरुष उवाच

बानन की रुजिगार, दाम लग नहिं गाठि कौ।
याते 'मुकवि गुपाल,' करह[९] दलाली जाइकै ॥

कवित्त

सही रगें-दग, दाम गाठि कौ न लग, जाहि
जान जग-जग, यामें भागि जग भाल कौ।
जात जित-जित, तित-तित नित प्रति हित[१०]
करत रहत सल सदा ही बजाल[११] कौ।

---

१ है मन मु बेंचन धन ना बारह बाट। २ है यान कबहुन कीजिए हुडामन की हाट ३ म कीज कहूँ न हाट। ४ है राभार कौ ५ मु धुकुर पुकुर ६ मु जिय ७ मु है रहै ८ है मु दुप ९ मु करहु १० मु जान नित हित नित प्रति माल ननन्दि ११ मु बजार कौ।

कवित्त

तोनत मे जाव मत्र चीज आय रहै भानु
ताअु की पवरि लाग्यो कर आठो जाम में ।
थान को जु माल मो वलायति में विक्र रह्यो
सह्यो सम्तो लैकें भरि लेत निज धाम म ।
सुकवि गुपाल नेत देत में विपारिन सा
मार्यो करै माल नित वैठ्यो निजधाम में ।
सर सत्र काम होत देसन में नाम वहु
वाढत ह दाम मदा आढति के काम में ॥

स्त्री उवाच

दोहा

लेपे कें ममयाव ते, मूड मारनो होइ ।
आढति वारे की सदा, वहुत परावी जोइ ॥

कवित्त

माल विकवाइ, कटवाइ दाम दैनें परैं,
मरवाय माल दाम मारे पर कितने ।
भम औ विपारिन की चैये ठौर घनी, लोग
पान-पान-मिती-राज घेरे रह तिननें ।
भरी-परी माल, आप रापनी परत, हाथ
पाव रहि जात जिस्मि१० तोलत है जितनें११ ।
'सुकवि गुपालजु' कहे न जात कितनें
लदैनिया की आढति में होन दुप तितने ॥

१ है वेय २ है कहत ३ ह गुपाल त ४ है मन ५ है निज गाम ६ ह वा ७ है लेव मु लेन ८ है जिनन ९ है टूटे १० मु है माल ११ है मु इतन

तमोली पुरुष उवाच

पाइ–पान परिधान सजि, वठू[1]पान–दुकान ।
करि सयान, धन मान वनि, सबकी रापी मान ।।

कवित्त

राच्यो रहै सुप, बहु पावै जामें सुप, बडे
लोग रापें रुप, बात बनी रहै तोली की ।
ग्रादर ते आव, जामें आमदि अधिक, ब्याह
सादी औ' बधाइ, वरपोत्सव औ' होली की ।
'सुकवि गुपाल' बनि ठनि मेला ठेलन में,
देप्यो कर सल को, लगाइ ग्राड रोली की ।
पोलि आगें ढोली, बानि बोलि कें अमोली, नफा
लेत महुँ थोली, हाट बैठि के तमोली की ।।

स्त्री उवाच

दोहा

'कवि गुपाल' याते अब, करि न तमाली हाट ।
रहिहौ जोवत राति–दिन, गाहक ही की ग्र ट ।।

कवित्त

देप विन, पान गरि जात, सरि जात, जामे
जात जमा जोप न समार[2]कर ढोली की ।
डूबि जात इस्क में, सुहात नही घर जाको,
लागि जाति द्रष्टि, कहू काहू मिटरोली की ।

१ है बठों २ है रापन ३ है सुमेन ४ सु सुँ ५ सु मभार

'सुकवि गुपाल' वाकी पटति न हाल जाकी,
मानें न वजार में उधार नेंक तोली की।
मगन की टोली,[1]डारयौ करै बोली-ठोली याते,
करियै न हाट पिय कवहू तमोली की॥

गधी पुरुष उवाच

गधी को रुजिगार यह, आछौ है जग माझ।
सब्रह सुगधित करतु है, निसदिन भोर' र साझ॥

कवित्त

राजु-अुमराजुन सौं, वडे सेठ साहन सौ,
होत[2]पहचानि, करें ज्वाब सलमधी की।
गनी औ' गरयारें, हाट-बाट, पुरदवार, हरि-
मदिर वहारें करें, करिनें सुगधी की।
'सुकवि गुपाल' दाम कैजू गुने हाल होत,
माल के विके पैं, नफा लेत वहु-धधी की।
काहू के न वधी, नित रहत प्रसधी, याते
सवही में[4]भलो रुजिगार यह गधी की।

स्त्री उवाच

दोहा

गधी के रुजिगार की, मदी विकरी होति।
फरफदी होइ जो कवहुँ,[5]कर धनहि[6] अुदोत॥

---

१ डारी २ मु मूलि ३ मु रहै ४ है त ५ मु तौ कछू
६ मु सुघन

कवित्त

जाते मिा तोल, सर रुवो रहै रामि, बहु,
मिलिवे मिपारिन मारयौ फरै दाम हैं।
'सुकवि गुपाल' माल सस्तौ परि जात हाथ
राम परै सर को सुरापै साप गाम है।
दोऊ साह बीच, जिस्सि लेत-देत साहन कौं
महत बडायौ करै, निज निज धाम है।
कयौ रहै ताल, जिस्सि आपनि अतोल, याते
सब में अमाल, यह तोलन ो काम है॥

स्त्री उवाच

दोहा

विना माल के होत कहूँ कोउ न बूझत बात।
डाडी झाला देत में तोला गारा पान॥

कवित्त

घटि बढि दीयें, दोऊ ओर को रहत बुरो
कअुन कौ लेत-देत, रहै डर भोला कौं।
'सुकवि गुपाल' तन रहै धूरिधाना, हाथ-
पाउ थकिजात मुप बोलत मे बोला कौं।
भार ते न सात तग मिल छुटकारा नहीं,
लागतु है पाप घनो मारै डाडी झाला कौं।
कहै बुरवाला, तन सूषि हाव कोघा, दुए
हातह अनाला, जिस्सि तोचत मे नाला कौं॥

इतिश्री दपनिबावय विलास नाम काय वनज प्रबध वणन नाम
ऊनविंशति विलास

विशो विलास

अथ रचान प्रबध

सराफौ पुरुष उवाच

छाडि[1]दलाली जगत की, करहुँ सराफी हाट।
प्यारी सुनियै श्रुवन दै, सदा रहत ये ठाठ ॥

कवित्त

झूठ कौ न काम, याम नेक रहै दाम, बडो
पावत अराम, काम होत, नित जाफी में।
आछौ रहै भेस, लेस लहैम नही पेस जात,
देस ही बिसेस धन बढत लिफाफी मे।
करें मलि पाकी, पाकी मान सब याकी बात
याकी[*] बाकी थाकी न रहति कम जाफी मे।
लेपो रहै साफी, जाम निकरति नाफी, याते
कहत 'गुपाल अमराफी है सराफी में ॥

स्त्री उवाच

दोहा

दैन लेन बारेनसौं नही करी नहिं जाइ।
करत सराफी राति दिन, सडसन ही जिय जाइ[५]।

---

१ है छाडि २ मु नाकौ है ता।म
४ है सु तुम गराफ ने टर गुन्हू दुप्य मुन नहिं कान।
फेते याम दुप सदा त मैं करति बपान ॥

सवैया

चोर सदा भरमें, घरमै नित जोष्यौ ते देह छिनों छिन[1]छीजै।
देत'रु लेत ग्रडी न नफा दमरी पर टोटौ रुपैया कौ दीजै।
ब्यौसे न जीव र जतु 'गुपाल,'मिलै विधि जौ नपरौ तन छीजै[2]।
देषत ही कौ निफाकौ रहै, पिय फाकौ भलौ प मराफौ न कीजै॥

बजाजी पुरुष उवाच

बनिज सराफी कौ तिया, करन न दीनौ मोहिं।
करहु बजाजी, तास सुष, बरनि सुनाऊँ तोहिं॥

कवित्त

बसन हजारन के रापत दुकानन में
तरह तरह रंग सूत पट साज अे।
दुसमन जाडे के, गरीबन अुधारे देत,
हौल-हौल लेत दाम, राषत हू लाज अे।
भिमषक कौ अुपकार करत भुगाहि रास–
लीला करवाय, बहु जोरस समाज अे।
जसनें जिहाज, वडे वडे कर काज, अति
हिमिति दराज, सब जग में बजाज अे।

स्त्री उवाच

दोहा

आजी आजी करत दिन, हाजौं हाजौं जाहिं।
या बजाज के बाज सौं मरी रागी नांहिं[3]।

---

१ मु दिनो दिन २ है तहाँ महा पाय बवाइ कै जीजै, मु सीजै
३ है मु करयो बनिज बजाज का सो सुनि लीनौ कान।
कवि गुपाल वाके सुनो औगुन मोतें आनि॥

कवित्त

जीव को न मान, सनमान काहू दीन को न,
धन के अधीन काम यामें दगाबाजी को।
मानत न सांच, बाको थर्वे लगे लाच, सौदा
लेवें तीनि पांच, लोग करें यतराजी को।
'सुकवि गुपाल' नित आगे नाय-लाय रहु,
हारने परत थान गाहक की राजी को।
आवत में आजी, घर गय लाजी-लाजी करें
याते यह पाजी, रुजिगार है बजाजी को॥

परचूनी पुरुष उवाच

बरन्यो बनज बजाज को बहुत बात करि बाल।
परचूनी की हाट को, बरनिहै 'सुकवि गुपाल'।

कवित्त

अन, गुड, तेल, बूरो, चामर, घिरत, चोपे
लै लै बहु जिनसि, दुकान में भरत हैं[२]।
चून पिसवाम जात्री[३] आमें इह आस, परे
दाम ल वें देत, पूरे बाट न धरत हैं।
यनते चहुल सोभा पावत बजार, दया-
धम-उपकार, भप सबन्नी हरत हैं।
आवति न ऊनी,' मादी बग्न है बनी, जे
'गुपालजू' दुकान परचूनी ते करत हैं॥

---

१ है बहु
२ मु धरत
३ मु यात्री

स्त्री उवाच

दोहा

परचूनी की हाट के कहे बहुत तुम ठाट।
य याके[1] दुप हात ह तिनके वरनू पाट।

कवित्त

सीले दिन राति धरि–वूसर रहत गात,
दूप दिनराति चित रहै सौज सूनी की।
फौज के पर पै सौदा नाही के कर पै जहा
सहनी परति बात बहुत कपूनी की।
'सुकवि गुपाल बहु माल भरिव में दीन
दुप कौ न देपें लग वरपा न भूनी की।
थात घूनीं चूनी, करि महननि दूनी, याते
सबही में अूनी है दुकान परचूनी की।

पसरट्टौ · पुरुष उवाच

परचूनी करत न दई करहुँ पसारट जाइ।
जामें ज मुप हान ह मुनि प्यारा तिन ता२।

कवित्त

सौज बहु रापें सरय भापें मोन गाहक सा
मामें सोई दइ राप सब की सँभारी है।
रागी, भोगी सोगी जागी सबरौ परन काँम
महँगी जिनगि कौ‍ी नारन निकारी है।

---

१ मु जे जात २ है ‍ दनि पर राय वान कहै सत गूवाँ कौ
३ है कवह् पै

कन-कन जोरै धन, जतन अनेक करि,
    परचत काज धरनी में यकधारी है।
अति हितकारी, दया धम उर धारी, ऐसे
    अति उपकारी, सब जग के पसारी है।

स्त्री उवाच

सोरठा

सुनहु सीप दै कान, भूलि न करहु पसारहट।
होअुग बहुत हिरान, अनगण चीजन गणत ही॥

कवित्त

दावत ढकत ही बिहात दिनराति, नित
    प्रात होते यामें, घर होतु है भिपारी की।
कौडी की 'गुपालजू' निकारी परति चीज,
    राजी करि, भेजनो परत नरनारी की।
भूलते उदासि होत, धासन ते पास बहु,
    सोंजन में हाथ काम परत सँभारी का।
देह परै हारी, बहु चहै यादिगारी, याते
    बडो दुपकारी, यह पेसो है पसारी को।

हलवाई पुरुष उवाच

हलवाई की हाट में, गिनते गुण नित आठ।
'कवि गुपाल' हमसौं अब, सुना सुण्य मन लाइ[५]॥

---

१ है मु पसारी
२ है उरधारी ३ मु हाग
४ मु सवारी
५ है मु यह दोहा है पसरहट्टे के करत म कहुशी मन माहिं।
    हलवाई की हाट के गुण्य सुनाऊँ तोहि॥

कवित्त

नाना पकवान, साग पाकन, तयार कर
स्वाद नित नयो लेत मेवा औ' मिठाई कौ।
सिरका मुरब्बा बहु सोजन बनाद, चाइ-
दूध-दही-पोवा, चोपो रबडी[१]मलाई कौ।
देसिन ते परो, सुप देत परदेसिन कौं,
रापत नहुल सोभा करिक कमाई कौं।
'सुकवि गुपाल' कर देह में मुटयाई, याते
बडो सुपदाई यह काम हलवाई कौ॥

स्त्री उवाच

दोहा

हलबाई की हाट में, घटत द्रगन की जोति।
छैरकान के बीच म बहु दुप यामें हाति॥

स्त्री उवाच

धातु होति छीन यामें रहै बलहीन नित
देपत मलीन, भस दीस तेलियाई कौ।
भीर धपले में, लन-दन की रहै न सुधि,
रैनिहू न चन, डर अगिनि धुआही[३]कौ।

१ मु दापगी
२ मु बरन
३ मु है मुआई

गरज परे पै हाल बिकनु न माल, पिय !
'सुकवि गुपाल' ऐसी करत कमाई कौ।
नैन हीनताई, बर बस्त्र चिकनाई, यात
बड़ो दुपदाई यह काम[1]हलवाई कौं।

कसेरे[2] पुरुष उवाच

हलवाई कौं छोडि कै, करहु कसेरट जाइ।
जामें जे सुप होत हैं, सुनि प्यारी चित लाइ॥

कवित्त

राषत अनेक चीज, चोषी सब धातन की
थारी, वेला, लोटा, भरे भौन बासनन के।
पूरो तौलि देत, मागि लेत दाम वाजिबी
गामन ते आवत परीदिये कौं तिनके।
बदलिहू लेत, बदलाई लेत वाजिबी ही,
'कहत गुपाल' याते भरे धाम धन के।
सपति समाज, बडे लौगन करत [illegible]
याते भले सबही ते, पैसे कसेरन के॥

स्त्री उवाच

सोरठा

जहा पान नहि पान, जाचक कौं यह [illegible]जियै।
याते 'सुकवि गुपाल,' [illegible] न [illegible] कसेरट॥

---

१ है मु रुजगार
१ मु॰ कसेरट का रुजगार
२ मु यान बडि दुकान

कवित्त

सहर अनेकन में आढ़ति की धाम परैं[1]
दाम बिन बात तामें रहति है अटकी।
मोल-तोल बीच, नीच चातुरी करत कोऊ,
टटकौ न जानैं, बात करत कपट की।
होइ जो झमाल, वेगि बिकै जो न माल, नफा
पाय जात हाल, खुसी मिलै नाँहि बटकी।
'सुकवि गुपाल' झटपट की न बात, यातें
भूलि कै न कीजियै दुकान कमेरट की।

इतिश्री दंपति वाक्य विलास नाम काव्ये स्थान प्रबंध वर्णन नाम विंशो विलास

---

१ मु बट्टू

एकविंशो विलास

अथ जाति प्रबध

कायस्थ : पुरुष उवाच

सवैया

अर्व रु वप के लेपन कौं, अुमरावन कौं समझावतो को तो ।
कौन छुटावतो वदिन कौं, पुनि दान दै दीनन को दुप पोतो ।
चित्रगुपित्र को बस बढाय' गुपाल,'यौं जातिको पोपतो योतो ।
धम्म की नीम जमावतो को, कहूँ जो जगमें नहि काइथ होतो ।

कवित्त

होफ कौं नरेस, अुतरथि को विधेस, प्रजा–
पाल नर भेस, पुनि ऋोध को अुमम सो ।
बिभो को सुरेस, रनभूमि में नगेस, भारी
बल कौं पगेस, सा पांनिप जलेस सो ।
'सुकवि गुपाल' राजै रिपु कौं फनेस, धमधारी
धरमेस, पुनि तेज को दिग्म सो ।
धनको धनेस, ग्द [illegible] कौं सेस, गाजै
कायथ हमेस, बुधि दैवे कौं गणेस सो ॥

---

१ मुद्रित प्रति मे यह प्रसग नहीं है।

कवित्त

लेत वुग्वाई वजै मलम मसाई मुष छाई
रहै स्याही जाको देपत दरस है।
जहा मर डारै व्हा करोरन को मारै टोटो
हाल ही निकारै नहि आवत तरस है।
वेश्वन सौं यारी मान मदरा अहारी नीच
सवही मैं भारी आखैं रापत परस है।
दया नहि राप मीठो ववही मैं भापे याते
कायथ की जाति पोटी सवते सरस है॥

सुनार पुरुष उवाच

सव रुजिगारन म भलो यह सुनार को काम[1]।
दाम रहै निज हाथ में जगर-मगर होइ धाम॥

कवित्त

काम परयो कर सदा जाको यागिमानर तें
रह्यो कर हाथ धन याके विवहार को।
नित नई नारिन सौं निबह्यो करत नेह
मिल गये दाम गढि गहनै मुढार को।
मुर्की गुपाल सानी सुमेर कहाइ व
अजगार है मान मार्यो कर नरनारि कौं।
रना समारि याने किम्मत अपार याने
सबमे अगार रुजिगारह सुनार को॥

---

१ है सुजन का यह २ है गाढ
३ है ग उजगार ४ मु जाग

स्त्री उवाच

दोहा

बनैं नहीं कछु कपट प जब सुनार को काम।
दामन में पामी परैं नाम होत बदनाम॥

कवित्त

जुरत न स्वास, हफ-हफी आइ जात औ'
कपोल बढि जात टटो रहै नरलार कौ।
कहावत चोर, जात आपित की त्यौर, जोर
करनो परत, डर रहै चोर-चार कौ।
'सुकवि गुपाल' गोप्यो रहति पराई, पर
धन के अधीन काम याके विवहार कौ।
देह परै हारि, रहै अगिनि अगार, याते
सबमें उतार, रुजिगारह सुनार कौ।

दरजी पुरुष उवाच

मरजी सबकी राखिहू, करि दरजी कौ काम।
गरजी अपनी मारि कै, लहरि उडाऊ धाम॥

कवित्त

[१]रहै निज धाम कछु जोर कौ परै न काम,
ताता आठो जाम काम प[२] सरहीन कौ।
भैस भला धा[३], माल ल्यौसत मे मारै, नाना
भाँतिन सँभार काम सूत पसमीन कौ।

---

१ है धने न मो कछु वपन म। २ है बैठ ३ मु है पट

'सुकवि गुपाल' कछु गाठि को न लगै, महूँ
मागै सोई लगै, हाथ करि अरजीन कौं।
रापै मरजौन, पट ब्यौंतत नवीन, याते
सबमें अमीन, यह कांम[1]दरजीन को[1]॥

स्त्री उवाच

दोहा

सीमत पोअत होत नित, सदा भोर ते सज।
दरजी के रजिगार में, देह होति है लुंज[2]।

कवित्त

'काम परयौ करै सिरकार की बिगारिन कौ,
सदां नरनारि कौ तगादौ रहै[3] जीको है।
कहै पट[4]चोर, जात आपिन की त्यौर, जोर
तोर के लगावत जंजार रहै जीकौ[5]है।
'सुकवि गुपाल' जब पटन न नाम, तब
परत न काम, कहू बिना मरजी को है।
सीमत में हीकौ, डर रहत सुई कौ, सदां
याते बडी भीकौ यह काम दरजी कौ है॥

छीपी[10] पुरुष उवाच

भजनानद सुद्दीन स. नामदेव के अंस।
याते यह छीपीन कौ जग मे बस प्रसंग।

---

१ है रुग्यार
२ मु है भांमित पावत जात न्नि सग आठहू नाम।
यातै यह दरजीन का बड़ो कठिन की काम॥
३-मु जाना ४ है मु कग्वन ५ है पर आफ़ि न प जोर ६ है ~
बीको ७ मु है हाथ परत ८ मु है जाप बन ९ है मति भी को
१० मु बडो भौरा

सवैया

अपने घर आठहू जाम रहे, सुप दीयो करै सो समीपन को।
हित साधि बढाय बजाजनते, सो करयौ करै काम महीपन कौ।
पठ नाना प्रकार के छाप्यो कर, ठगि सौदा मे नेत हरीफन को।
यह 'राय गुपालजू' या जग में रुजिगार भलौ यह छीपन को।

स्त्रीउवाच

दोहा

कूरो घर बाहर रहै करत वास मे वास।
याते यह छीपीन को सब ते काम अुदास॥

कवित्त

चूतर-हायन मे, छेक परि जाति पुनि,
देह दहि जाति, माम रहति न चाँम में।
रंगत रंगावन में, धोवत सुपावत मैं,
रहनौ परत ठाढौ, जाड़ सीत घाम मैं।
पहले 'गुपालजू' लगावत है जमा ताको,
दरक्यो करत जाको छाती देत दाम म।
रहनि विराम, वास आयो करै धाम दुप
होत आठौ जाँम, सदा छीपन पे काम मैं।

रँगरेज पुरुष उवाच

रंगरजन की जाइ कें, बनू भलो रंगरेज।
देपू रात बजार की, मन में साधि मजज॥

कवित्त

होति पहचानि जानि राय सिरदारन सों,
लेत दाम चौगुन, सुरँगि रँगरेज को[1] ।
बैठि कें बजार में, हजारन छिनारिन में,
करि-करि प्यारन को लेत सुप फँज[२]को ।
'सुकवि गुपाल' भाखि जगत विसाल हाल[६]
अजरो रहत बस वक्सत[७]फैज को ।
बढ तन तेज, सब कर्यो कर हज, याते
सब में अमेज रुजिगार रँगरेज को[८] ।।

स्त्री उवाच

दोहा

लगैं थाइ जब माहलग, अर आवत त्यौहार ।
भीर परैं, जब आइ कैं, रँगरेजन कें द्वार ।।

सवैया

बुरे लील में कारे रह्यौ कर हाथ,
सो[८]हारि परैं रँगिरेजन को ।
बिगरैं वह रेनी चटावत में, जब
ज्यौ बढि जाय करेजन को ।
बिनत दाम वे काज फिर्योई कर,
मुजरा नहि पायँ मजेजिन को ।
मह 'राय गुपालजू' याते सदा
रुजिगार बुरो रँगरेजन कौं ।

---

१ है न्पिय ओंढ रज का म रगरेजा का। आग की तुका म भी फजा का आदि ह। २ है म री है मु रीरि न।ि ४ ह मु ढेज ५ है भाल ६ है सहा ७ मु रस्सत
८ है मु रहत मजेज राख्यो कर सब हजत याते
सबम विशप रजगार रँगरना को ।।

मालिन पुरुष उवाच

अवुर नर[१]फल फूल दल, सब की लेत बहार।
यातं यह मद में भलो, मालिन को रुजिगार॥

कवित्त

देख्यो कर बाग फुलवारी की बहारन कों,
पायो कर फल-फूल मूल[२]जो वहाली[३]को।
चढ़ि देई-देवन के देहरे पै सदा, कथा
कीरतन सुन्यो करें बेनि फूल पाली को।
'सुकवि गुपाल' सिरदारन दिपाय माल,
लेत महें माग्यो फल फूलन की डाली को।
रापत[४]वहाली, राजी रहै घरवाली, यातें
सबमें पुस्याली को सु पेसो यह माली को।

स्त्री उवाच

दोहा

फूल फलन के बेचते, जोर होति छिनारि।
परयो रहत नित[५]बाग में, सदा छोडि घरवार॥

कवित्त

कलम करत पेड, लागत सराप-पाप,
जोर पर सदा,[६]रौसपट्टी की सँभारी को।
'सुकवि गुपाल' याको टटि न सकत माल,
वेंचनो परत हाल बिगरत पाली को।

१ मु जव २ है माला ३ है मु सना फल फूल ४ है मु रसानी का ५ मु देखत ६ है है ७ है बड़ो

फूल-फल फलैं, छाट पौधा के हर 'पनु-
पछी रनमन उर रै रसगानी री ।
बरहो न ठानी, हर पनि जानि पानी दार
बढोगे बिहानी 'गी गुनगी गर मानी भी ॥

मालन पुरुष उवाच

सजिर सिंगार, गाप नटक मग्न हरि-
मंदिर भवन रवार जठी अ घरी रहै ।
राजु-अुमराअु, सिरदार-वडी प्रीति पर
बिगई अनक बम जिनर धनी रह ।
'सुकवि गुपाल' फल-फूल-मूल बनि वरि
सैनन मा देप गदा मुप में गनी रहै ।
धारि फूलमालन को राजी राखि मालिन मा,
पाय तलमालन री मानिन बनी रहै ॥

स्त्री उवाच

दोहा

वठनों परतु है निलज्ज ह बजार बीच,
बेचै साग-पात, फूल-फल-मूल संग में ।
रहत 'गुपाल' संग छिनला-छिनालि, कुल-
धरम न सध, रह्यो आवै रोग भग में ।

---

१ है मु पौधा हर चर २ मु दानी ३ है टुखला
४ है मु सवम

रहत बिहाल, मो मुचाल न चलत, सदा
जापै सब बोली–ठोली डार्यो कर मग में।
पात बुरे मालन रटायो करे गालन,
मु याते धरबार, जन्म मालिन को जग में।

कुजर पुरुष उवाच

बिक्री को करि नै सदा, लेत चौगुने दाम।
याते यह सब मेंभलो, कूजरेन को काम ॥

कवित्त

बचन लगाय टाली, मानिन के पास जाइ,
बोलि क गलीन में, जगामें नगरे को ह।
कम तोलि देत, हाल राजी करि देत, पुनि[३]
करि अल–फल, मोल लन झगरे को है।
'सुकवि गुपाल' हाल नगद पटाइ दाम,
करि निज काम मजा मारत दरे को ह।
बेचत हरे कों, नहि जात मुजरे को, याते
सब में परे को,[४][१]जगार कुंजरे को है ॥

स्त्री उवाच

दोहा

साक–पात ल क सदा, बैठन नीच बजार।
याही ते कम तोल को, कुजरन को रजगार ॥

---

१ है मु न २ है उठन ३ है मु फिर ४ है घरे का
५ मु मरप्ट ६ है यात यह। मु यात रानहीं म बुरो कुजरन
को रजगार।

कवित्त

गली औ' गर याग्न कौं ,गाहत ग्हत नित,
बोझ अतर न जावे मिर ते धरेन कौ।
'सुकवि गुपाल हाल सरि-गरि जात माल
चादी लगे कौडी होति, बिक्री परेन कौ।
डाडी-झोला भारत में, पायौ कर मारि-गारि,
वडे डर रहै पेल बयार के करेन कौ।
रहु अुजरेन, आछी होइ गुजरेन, याते
बटौ दुप दुप दन, रजिगार बुजरेन कौ।

भटयारे पुरुष उवाच

आय मुसाफिर नित नअे अुतरत जाके दवार।
भनौ भट्यारन कौ सदा, याते यह रुजिगार॥

सवैया

नित रापत राजी मुसाफर वा घरवार मँभारि हजारन कौं।
दिनराति तँदूर चढ्यौई रहु, सुप लीयौ करै ह बजारा कौ।
वहुत हँडियान के स्वाद कौ लै मजा मार यजार निजारन कौ।
यह राय गुपाल' सराहि के वीच, भलौ रजिगार भट्यारन कौं।

स्त्री उवाच

दोहा

होइ मुसाफिर और कौ दूजी लेइ बुलाइ।
नवह भटयारन वीच मे, परह[५]लगाई आइ॥

---

१ है नन २ है मु भारी टप ३ है रग ४ है मु मारया गार ५ मु पर

कवित्त

भनिरि भिनिरि मापी कर्यौई करत, फैल्यौ
रहत भट्यारपानौं, साझ[1]लामवारे कौ ।
परोथन पीटैं, निव आपुस में हौट, कर्यौ–
करत तलासी, देत लेत घर भारे का ।
'सुकवि गुपाल' सिरकार में लिपाअे बिन,
लगै यलजाम मुसाफर के अुतारे कौ ।
त्रस्त्र रहैं कारे, लगै देपत डरारे, याते
सबही ते भारे दुप होतहू भट्यारे कौं ॥

कडेरे पुरुष उवाच

डेरे में बठे रहैं, लेत घनेरे दाम ।
याते भलो 'गुपाल कवि,' कडेरेन कौ काम ॥

कवित्त

जानौं न परत रुजिगार कौ पराअे द्वार,
मार्यो करै मजा, नित[3]साझ लौं सबेरे कौं ।
जायकैं 'गुपाल' मजा देप्यौ कर पैठन की,
दाम घने[4]लकैं, लिप्यौ पुल्यौ रापै डेरे कौं ।
धुनत रुई कौं, जाडे–पाले को रहत सुप,
छल कयो बठ्यौ रहै, दावि निज वेरे कौं ।
अुठत[6]सबेरे माल मारत वटेरे, बडे
होतहू कमेरे, काम[7]करत कडेरे कौ ॥

---

१ है रानि २ है नराई ३ है नारिन म मजा लेत ४ है मु क[illegible]
५ है सदा ६ है पेसो ७ है उटक

स्त्री उवाच

दोहा

ताय ताय करिवौ करें, कान दई न सुनाय[१]।
दुपी कडेरन कौ सदा, रुई धुनत दिन जाय ॥

सवैया

मुप स्वास रुकै, वढ़–पासीगई, सदा मारत जोर वडेरन की।
ढिग कान दईहू सुनी न परै, न वरक्चति होति कमेरन को।
सव देह पै रुम जमेई रह, लगै टूटत ताति अरेरन की।
यह 'राय गुपालजू' याते वुरो सव मे रुजिगार कडेरन की ॥

कोरियाकौ पुरुष उवाच

करत कमाई ग्राम की, करि कोरी कौ काम।
गाम गाम की पठ करि, लहरि अुगाऊ दाम ॥

कवित्त

दप्यौ करै सल गाँम गामन की पठन की,
लीयौ करै लहरि सुकत्तिन की ढौरी की।
विरहन गाइ क, मदगन वजाइ, नैंन
करि हाव चाव, गाव झूमरि द मोरी की।
सुकवि गुपाल कर देवी की भगति चाल
चलत मे मात करि देन थोरा धारी की[४]।
रहै यकठोरी, वहु हात[५]छोरा–छारी यात[६]
सवही में भोरी, यह जाति भली कोरी की ॥

---

१ क सुहाय २ मु हाव चाव ३ है राप ४ है कौन्नि नवीन चान चल्यो कर धारी की। ५ है हाय मु कर ६ मु भग्

स्त्री उवाच

दोहा

नफा नहा यामे कछू, भूप मरत दिनराति ।
याते यह सबमें निसक, कोरियान की जाति ॥

कवित्त

सत्र धमकायो कर, जानि के निसक जाति
पात है सराफ, औ' बजाज नफा जोरी को ।
'सुकवि गुपाल' बुरी[१]बठक रहति, सदा,
पूरत मे तानी, काम परे दौरा दौरी कौं ।
रहत कँगाल, इतराय चलै हाल, जाकी
रहत जँजाल दिन राति जोरा तोरी कौं ।
होत है अघोरी करि सूतन की चोरी, बुरो
सबही में ओरी को सुकाम यह कोरी कौं ॥

बढइया पुरुष उवाच

ताको[४]काठ–कवार मोकाम परत दिन[५]राति[६] ।
वढइन के रुजिगार की, यातें बडी सुबात ॥

कवित्त

बडी–बडी ठौरन बनामें नाना भाति काम,
[७]महल मवास औं' मकान मढई को है ।
'सुकवि गुपाल जौंम रहतिह बडी याते,
नित प्रति परे काम धना घडई को है ।

---

१ है बडी २ है दखत
३ है यात सबही म बुरो रुजगार यह कारी को ।
मु यात बडो निरजोरी का सुनाम यह कारी को ।
४ है जान म जाको ५ है कों ६ है नित आय ७ है यह यात
है मुखरुाय

रहै परवम्त, औ' मिगानेंर पै दत्त, वटे
मस्त है म यातन ते दाम गर्ई मी है।
रहै द्रवही मी, मान मारि गठई मी,
सवही में वढिही मी यह कामॅयवई मा है ॥

स्त्री उवाच

दोहा

घालत सवदिन छोपटी, रहत पराअे दवार।
याते यह वढईन मी, पराधीन रुजिगार ॥

कवित्त

पेडन के काटत में, लागत सराप–पाप,
दब–पिचें हाल, प्राण जानु है गढया मी।
रहै पर द्वार, चाहै'काठ' रुपक्वार, नित
रहै मार–मार कमजोर[६]के करैया मी।
'सुकवि गुपाल' यह करत में काम वडी[७]
भूप वढि जाति तोरि जातुहु अढैया मी।
दूपत करया, कहै लवर–कसैया, याते
वडो दुप दैया, यह करम वढया मी।

लुहार पुरुष उवाच

परे दाम लैकें सदा, रहत आपने द्वार।
याते वडी वहार मी, लुहार को रुजिगार ॥

---

१ मु याव २ है मु गढही ३ है मु रुजगार मु होत दु रो सवही म वढिही को याते सवम सुखारी रुजिगारी वन्ड को है। ४ है मु चय ५ है मु औ ६ मु काम जार ७ है बहु ८ है मु रजगार

सवैया

जिन हाथन होत हैं काज घने, सब विश्व के कारज सारन कौं।
कुस औ' खुरपा पितिहारन कौं, रिपु कारन देत हथ्यारन कौं।
निस-वासर ही स्रवते जिनको, सदा काम पर है उदारन को।
यह 'राय गुपालजू' याते भलो, सब में रुजिगार लुहारन कौं॥

स्त्री उवाच

दोहा

हाथ-पाँय कारो रहै, मुहँ कारो परि जात।
या लुहार के काम तैं, निस दिन हीजत जात॥

कवित्त

महनति भारी, देह कयेलाते कारी होत,
याको काम जारी, घेरा साझ लौं सवार कौ।
धौंकनी के धौंकत में, धूपत रहत औ'
भरसिबे को रहै डर, अगिन अगार कौ।
सुकवि गुपाल' सदा लोह ते परत काम,
रँग छूटि जाति है उठाजे बोझ भार को।
देह पर हारि, बुरो रहै घरबार, याते
बडो दुपकार, रुजिगार है लुहार को॥

सकतरास पुरुष उवाच

महल मकान तराम करि, नाम करहु परकास।
बनि क सकतरास बहु, धन लाऊँ तेरे पास॥

१ है मु कामधना २ है नप ३ है जिनाो मु जिन१ ४ है मुहडा लान रहाइ। ५ है मु म ६ है धूपन जाद। ७ है घेरो मु घर ८ मु कगा दरकाम

कवित्त

वहु मदिर और मवासन की, सो अुतार्यो करहै तरासन को।
खरे दामल 'राय गुपाल' सदा,सो कर्यो कर काम करासन को।
मजालै करि गल गार्याग्नको, सुगढयो करे लके अरासन को।
[1]यह 'राय गुपालजू' याते भलो रजिगार सा सक्तरासन को।

स्त्री उवाच
दोहा

मेलमिलापी आय क बैठि सक्त नहि पाम।
याते कबहुँ न जाइ के, हूज सक्तराम ॥

कवित्त

पत्थर ते पर[2] मारना मूड सदा[3]तन कत्तर ते लगि छीजै।
कान दईऊ सुनी न परै ढिग बठन-बारो नहो तहा धीजें।
जोरत जोर जँजार रहै, दबि जात मे प्राण अकारथ दीज।
राय गु ल' पवासी भली, परि भूलिक सक्तरासी न कीज।

राज पुरुष उवाच

सबही ते अूचे रह, मदिर महल मँभार।
याते भलौ गुपाल कवि,' राजन को रजिगार ॥

कवित्त

होत यडा नाम घनी मिनति यनाम, औ
अनामत में धाम, काम परै राज-काज कों।
रहत गुपाल' कारपाने प हुक्म, मदा
मुपिया कहावतु है, मददति के साज को'।

१ है नित यान भना रजगार मना मजम भनो मक्तरामन को।
२ है परो ३ है म मान ४ है म अना पावन

माल गड्यौ-दयौ हाथ जत्र परि जाय,[१]तब
होतु है निहाल सो बनाइ कै लिहाज कौं।
यह राज राज मिलें बहु भूप साज याते
सब में दराज, रुजिगार यह राज कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

चारि पहर बैठक रहति, छुट्टी पावत साझ।
रगरे-झगरे रहत बहु, या रजई वै माझ॥

कवित्त

फटि जात हाथ, धूरि धूसर रहात गात,
टूपें दिन राति, सहै टटन की भीरी को।
'सुकवि गुपाल' सदा रहनो हजूर, औ'
कहावत मजूर, पाय सक्त न बीरी कौ'।
काल-चक्र ताके सिर पर फिरयौ करै कोऊ
गिरै पर मरै पै धरया नहिं धीरी कौं।
देह पर पीरी, कोऊ जानत न पीरी याते
बडौ निमगीरी कौ मुकाम राजगीरी कौ॥

चित्रकार पुरुष उवाच

चित्रकार कौं चित्र कै, निपत सुप्य सरसात।
[१]सो मुनि लीजे चित्त दै, प्यारी गुण अवदात॥

---

१ है मजूर के समाज का मु मुददति मु समाज का २ है कहूँ जब मिल जाय ३ है म पिय्न मु परत बहु ४ फट रहे ५ है औ कहावत मजूर नित रहत हजूर पाय मक्त न बीरी ह। ६ है सबहा म बुरी रुजगार राजगीरी की ६ है मु त

भरभूजा[1] पुरुष उवाच

वहुत जमा चहियै न कछु, लनी परै न मोल ।
याते भर-भूजान कौ, सब में काम अमोल ।

कवित्त

आयत औ' पायत में नाज पर्यौ रहै, न
अकाल औ' दुकाल व्यापै या विपार तें
'मुकवि गुपाल' घनी लीयौ कर नफा, सदा
भूजिकें नबैनी करयन मपत्यार तें ।
जानौं न परत, पानपान कौ रहत सुप,
व्यौमें जीव-जतु, हित रहै जिमोदार तें ।
वठत वजार आय रहैं मव द्वार, सुप
होतह अपार, भरभूजन कौ भार त ।

स्त्रीवाच

दोहा

जीव करोरन कौ सदा, निमदिन हत्या लेइ ।
भरभूजा-भूजत, भुजत भार द्वार कौ सेइ ।

कवित्त

झोंकत रहत, दिनराति फूस-पात, भार
देखत रहत जानें भगति न पूजा कौं ।
घर अरु बाहर में, कूरो परयौ रहै, देह
भूजत भुज, ऐसौ दुप-नहिं दूजा कौ ।

---

१ यह प्रसग मु म नहीं है।

धूरि–धूमसे सों किचि पिचि रहै देह, वस्त्र–
हाथ रह कारे, सुप रहत न सूजा कौ।
'सुकवि गुपाल' कोऊ दुप कौ न वूझा, मदा
याते यह बुरौ रुजिगार भरभूजा कौं॥

कहार[1] पुरुष उवाच

निकट रहै सिरदार के, प्यार कर सिरदार।
दूनौ मिलत कहार कौ दरमाहयौ रु' अहार॥

कवित्त

जग में अभग, दस–पाचन कौ सग, कर्‌यौ
करैं रागरग, देप्यौ करत वहार कौ।
'सुकवि गुपाल' रहैं राजन के द्‌वार, कीयौ
करत जुहार, राजी रापि सिरदार कौ।
बठयौ घर रह, काम कबौ आय पर, सदा
जायौ करैं सब असवारिन की सार कौ।
रहै अपत्यार, दूनौ मिलत अहार याते
बडो सुपकार, रुजिगारह कहार कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

भोई सब कोई कहै, दुप वूझ नहिं कोइ।
ढोवत वोझ कहार कौ, राति दिना दुप होइ॥

---

१ यह प्रसग है मु म नही है।

कवित्त

वारी परै देह, नेह घटै सबही सों सदा,
राह चल्यौ करै, दुख देपत न नारि कौ ।
'सुकवि गुपाल' मग भजनौं परत, चन,
नौं परत अगार कौं अुठायबो झमार कौं ।
गोडू जमि जात, पग कटि–छिदि जात,
दिनराति पपकी कौ डर रहै सिरदार कौ ।
देह जाति हारि, दूनो चाहिय अहार, याते
वडो दुपदार रुजिगार है कहार कौ ।

तेली पुरुष उवाच

घर घर वेचू तेल कौं करा हवेली त्यार ।
तेली कौ रजिगार करि,४दौलति करैं अपार ॥

कवित्त

जिनकी रहति घर घर में प्रकास जोति
वेचि परि–तेल रुपा करत अधेली कौ ।
तालि तोलि गमिन, किसानन के पास, नफा
लीयौ करैं बहु,५वास बसि कैं गमेली कौ ।
सुकवि गुपाल,' नित चयी रहै लाल, अेक
रापत है आसरौ सदा हो पुदा–वेनी कौ ।
"परी रहै मेनी, ऊँची रहति हवली, जोनि
रहति नवेली, काम करसिह तेली कौ ।

१ है म २ है वजत म तन ३ ह याम ४ है म सुकी
५ है म यानं मवही म भलौ रुजगार यन् तनी कौ ।

धूरि–धूमसे सौं मिचि गिजि रहै देह, प्रन्त–
हाथ रहे कारे, मुप रहत न सूजा कौ।
'सुकवि गुपाल' कोऊ दुप कौ न बूझा, सदा
याते मह बुरौ रुजिगार भरभूजा कौ॥

कहार[1] पुरुष उवाच

निकट रहै सिरदार के, प्यार करै सिरदार।
दूनौ मिलत कहार कौं दरमाह्यौ र' अहार॥

कवित्त

अंग मैं उमंग, दस–पांचन कौ संग, करयौ
करै रागरंग, देष्यौ करत बहार कौ।
'सुकवि गुपाल' रहैं राजन के द्वार, कीयौ
करत जुहार, राजी रापि सिरदार कौ।
बठयौ घर रहै, काम कबौ आय परै, सदा
जायौ करै सब असवारिन कौ सार कौ।
रहै अपत्यार, दूनौ मिलत अहार याते
बड़ो सुपकार, रुजिगारह कहार कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

भोई सब कोई कहै, दुप बूझ नहि कोइ।
ढोवत बोझ कहार कौ, राति दिना दुप होइ॥

---

१ यह प्रसग है मु म नहीं है।

कवित्त

कारी पर देह, नेह घटै सबही सो सदा,
राह चल्यौ करै, दुख देखत न नारि को ।
'सुकवि गुपाल' मग भजनौं परत, चल,
सौं परत अगार कौ उठायबो झमार कौ ।
लोहू जमि जात, पग कटि-छिदि जात,
दिनराति पपकी कौ डर रहै सिरदार कौ ।
दह जाति हारि, दूनो चाहियै अहार, याते
बड़ौ दुषवार रुजिगार है कहार कौ ।

तेली पुरुष उवाच

घर घर बचू तेल मैं, करा हवेली त्यार ।
तेली कौ रुजिगार करि, दौलति करूँ अपार ।।

कवित्त

जिनकी रहति घर घर में प्रकास जोति,
बेचि करि-तेल रुपा करत अधेली कौ ।
तालि तोलि रासिन, किसानन के पास, नफा
नीयौ करैं बहु, वास बसि कैं गमेली कौ ।
'सुकवि गुपाल,' नित बन्यौ रहै लाल, अेक
राषत है आसरौ सदा ही पुदा-बेलो कौ ।
भरी रहै मेनी, ऊंची रहति हवेली, जोति
रहति नवेली, काम करतिहू तेली कौ ।

---

१ है म २ है बजन म तल ३ है याम ४ है मु मुगी
५ है मु याने सवकी म भनी रुजगार यह ननी की ।

स्त्रीउवाच

दोहा

मलो भेस रहै सदा रहत कुचील[1]गात ।
फिरत चक्र ला रातिदिन, काल–चक्र मँडरात ॥

सवैया

पट चीकने करे मलीन रह, बुरी रग रहै मु हवेनिन को ।
बहुआयतिआधि फिरयो कर जी, लगि काल्हूनकेचक फेलन को ।
डर लाठिके टूटिवेहू को रहै, मदा बेन्यो करें परि ठेलिन को ।
यह 'राय गुपालजू' याते सदा रुजिगार बुरो इन तेलिन को ।

सेक्का पुरुष उवाच

पक्का ह्वैकें पीठि को' लेइ नक्का सुष जाइ ।
याते यह सक्कान की, पेसो है सुपदाइ ॥

कवित्त

देष्यो करें सैल, पनघट पनिहारिन की,
गली औ गर यारन में, मार् यौ[4]करें मस्ती को ।
'सुकवि गुपाल' पितिहार[5]जिमनदारा क,
भरिकें पषाल, काम करत दुरस्ती को ।
घर–घर जायक, कमाय पाय पाय[6]माल
हस्ती मुष रहै, मौ चढाय करि अस्ती को ।
दबत गहस्ती, बस्ती कर परवस्ती, याते
सबमें दुरस्ती, को सुपेसो यह भिस्ती को[8] ॥

---

१ है मु होइ चीकन २ है मु याते सबही म बुरी तेलिन क यह जान यह बात । ३ है मु नित ४ है मु याही त रजगार यह सक्का को सुपदाय । ५ है मु झार या ६ ह मिरतार ८ म खाय मान हाल सबते भलो रुजगार यह भिस्ती को ।

स्त्री उवाच

दोहा

निमदिा ढोवत मुसक्को, पीठि पाव रहि जाय।
याते यह भिस्तीन को, पेमो है दुपदाय ॥

कवित्त

घटि जाति अुमरि[१]सम्हरि के न रह्यौ जात,
करिहाल नक्त जमें क्वूतर लक्का कौ।
ढोवत रहत वोय, पोवत रहत दिन,
गेवत रहत, जिमिदार के अरक्का कौ।
'सुकवि गुपालजू बिगारि करि आमिल कौ,
गिरे परे हाल कुआ ताल लगि ढक्का कौ।
पात ज्वारि मक्का, महलान देत ढक्का, याते
सबही में लुक्का, रुजिगार यह सक्का कौ॥

बारी कौं[४] पुरुष उवाच

बारी कौं बैठ नफा, घरवारी कौं होइ।
बाग्नि के रुजिगार सम, और न पसो कोइ॥

सवैया

सदा सादी–गमी औ' बधाइन में, बडौ काम परे पनवाग्न कौ।
हित राप्यौ कर मबही जिनसीं, भलो नेग मिलै नरनारिन कौ।
पनवारन दै, पनवारन कौ, सदा पायो करें पनवारन कौ।
सदा 'रायगुपालज' नगिन में रुजिगार भलौ यन बारिन कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

कूगो करकट रहत बहु, जावे घर अरु दवार।
याते यह बारीन कौ, महा नुरौ रुजिगार॥

---

१ मु है रहिजाल कमरि २ मु है चल्यो ३ है मु जामग्र
४ यह मु है म नहीं है।

कवित्त

दूप्यौ वर हूरे, दौंना पातरिन सीमन
बुनावत–चलावन मै पायौ वर गारी कौं।
सादी–गमी माष्य जब पर वछु हाथ तब
वनि क कमीन, काम परै नरनारी कौं।
'सुकवि गुपालजू त्रिरनि रहै हाय, जमा
गाठि की लगाइ, कर महनति भारी का।
फिर दवार–दवारी, रहै राति दिन प्वारी, यात
वडो दुपकारी, रुजिगार यह वारी कौ।

नाऊ पुरुष उवाच

दोहा

जिजमानन क मान नित भले मिलन ह दाम।
सब रुजिगारन में भलौ, यह नायन कौ काम।

कवित्त

सब जिजमानन कै मालिकी करतु रहै
करिकें टहल पुस राप सवकाई कौं।
बेटा–वेटी हाथ जाके वेच विचि जात, भले
भोजन न[२] पात मिल विरति मदाई कौ।
'सुकवि गुपालज सिरोमनि है नगिन म
लेत महुँ माग्यौ नेग[४] व्याह[३] रु बधाई कौ।
मिलै ठकुराई, होइ जीवका सवाई, यातें
वडौ सुपदाई रजिगार यह नाई कौ॥

---

१ है नाऊ का यह म यह नाऊन को काम २ है सना ३ ह म भत भल ४ है मौज

स्त्री उवाच

दाहा

अग्र पाञु बाहर रहै, अेक रहै घर माझ ।
[1]विददति ही में होति नित, सदा भोर ते माझ ॥

कवित्त

फूटत रहत सिर, टूटत रहत पाँञु,
राति–दिन जातु है गईजन में जाई कौं ।
गाफिल सो होतु है मसाल के लगावत म
आव वडी टहल ते माल हाय याई कौ ।
'सुकवि गुपाल' वढती जो नेग लाव,
जिजमान दुप पावै, [2]करवावत सगाई कौं ।
सिर बुरबाई रहै, मूतक मदाई यात
वटो दुपदाई रुजिगार यह नाई कौ ।

कुम्हार - पुरुष उवाच

नितप्रति सादी व्याह में, परत सवन कौ काम ।
याही ते जग में भलौ, यह कुम्हार कौ काम[6] ॥

कवित्त

तिवरी लगीही रहै, तारौ माम जाकी, [3]मोन
लैनौ न परत कछु याके कारबार कौ ।
'सुकवि गुपालजू' प्रजापति कहाव, घर–
घर मान पाव, [5]काज परे नरनारी कौं ।

१ है मु करत हजामति २ है छूतिया कहावत मु मूरख कहावत
३ मु धमराव ४ है मु खान पान लव घन नहरि उटावति
धाम । ५ है मत्र दिन मु रातिन्दिन ६ है मु पुनि निव प्रति
सातें । याम

जाके घर जाइ मत्र मूज चाक–त्रास, जाय
डर न रहाय, कछु यामें चोर–नार कौं।
सबते अगार, है किसानन की प्यार, याते
सबमें बहार कौ, य कामहू कुम्हार कौ[१] ॥

स्त्री उवाच

दोहा

भिष्ट रहतु ह राति दिन, गदहा बाधत दवार।
याते बुरौ कुम्हार कौ, पराधीन[४] रुजिगार ॥

सवैया

नमम टी में देह सनी ही रह, सदा मारत जीव हजारन कौं।
बहु पोदत माटी इँद जो कहूँ, नव कोऊ नही है निकारन कौ।
आपवित्र अवा कौं चढाय रहै, औ' रहै डर आगि–अँगारन कौ।
यह रायगुपालजू याते बुरौ, सबमे रुजिगार कुम्हारन कौ ॥

धोबी[६] पुरुष उवाच

आप रहत नित ऊजरे करत ऊजरौ भेस।
धोबिन कौ रुजिगार यह, सब में भला बिसेस[७] ॥

सवैया

सो क्यौ रहै ऊजरौ भेस सदा, सी कमीन कहै कहौ को जिन का।
परी पाय पुराकहि रापत पाक, बनाभे रह तन जोवन कौ।
जल माझ कलोन कर्योई करें, सियोराम कह अघ पोमन कौ।
[८]यह राय गुपालजू' यात भलौ सबमें रजिगार सुधोविन कौ ॥

---

१ मु बडा मुखकार रुजिगार है कुम्हार कौ २ मु गवसा मत्रा
ह मवन ४ है यान यह ५ है पुनि ६ मु रजा ७ मु जशम
८ आहेत जा यारे है मा उनको ६ है नित

स्त्री उवाच

दोहा

जीर्प्यो पानी परति है, तब इत मिलत छदाम ।
याते यह सबमें बुरो, यह धोबिन को काम ॥

सवैया

सदा सीत'ए[1]धाममें धोयो करै, दिन पोयो कर मदा देत'ए[2] लेते ।
सब जाति में नीच कहावतु है, घर लागै बुरी गदहान बँधेते ।
घर मॅन घुसैऔ' छुनैन कोऊ, जाके धानको लेन नही मन सेते ।
[4]यहते यह रायगुपाल' सदा नित धोबिन का दुप होत ह अते ।

मलाह पुरुष उवाच

वाहन में वल वढत पुनि,[1]साहन में बढै मापि ।
या मलाह के काम में, हित नर रापत नापि ॥

कवित्त

अुतरन देत जब, पैल दाम लेत, सब
  कोऊ रापै हेत, यामें वडो राप पाहको ।
'सुकवि गुपाल' पार आवत औ' जाव जिने,
  राजा अरु राना वात पूछत सलाह की ।
रजमें[5]तपेटे, जे नवारने मे बैठे, लीयो–
  करत लहरि गग–जमुन प्रवाह की ।
रह वेतप्रवाह, जाके रोके एक साह याते ,
  सबमें सवाय यह बातह मलाह की ॥

---

१ है गाट २ है ओ ३ है तार्क ४ है गाय गुपान विचरि कहै
मना । ५ म वह ६ म रज को

स्त्री उवाच

दोहा

जल जलचर'रभिजाउ उर, गिरत–परत हरि पात।
या मलाह के काम मैं, बहु दुप होन जुदोन ॥

कवित्त

प्राणन की सासौ, पच–खिच लग लाचौ, पुनि
डूबै–डटैं नाव, रिन बढि जात साह कौ।
देपत ही जात दिन थाह औ' अथाह, रहास
पचत ही जाका सीत पाजै जात माह का।
पेजे,'[४]की 'गुपालजू' लगावत मे पार जोर
मारि–मारि हारि जात चढत प्रवाह का।
आजे विन आह पाय, जाइ भोटि–गाह, मेरी
मानि क सलाह, काम कीजे न मलाह कौ।

गडरिया[५] पुरुष उवाच

दूध पिधवन में बसैं, जानत नहिं अरु बात।
भेड बकरियन ते गडरियन सुसुष्य सरसात ॥

कवित्त

व्यावरि लगीही रहैं, बारौ मास जाकी, सो
निरोगिल रहत दूध पी क भेड छिग्यिा कौ।
'सुकवि गुपाल' कर्यौ करैं राग–रग, लैं
बन की लहरि, झूल्यौ करैं गहि डरिया कौ।

---

१ मु गिरत परत की पात २ मु निराति नग लाचौ ३ मु बहे ४ म खेवा ५ यह प्रसग है मु म नही है।

मोल नैनौ परत न, क्वी दानौ–चारौ, घनी
लेत है घिगाई, वास बसि कें गमरिया कौ।
पाय छाछि–दरिया, चुन्यौ करत कमरिया,
सत्र ही में मब वरिया, भलौ करम गडरिया कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

मूपि पडुरिया जात वहु, स्याह हडरिया होति।
गडरियान की देह ज्यौ, स्याह लकरिया होति॥

कवित्त

मेंमें भयौ कर, धर माझ दिनराति सदा,
मोररि रहनि रापैं, भेड़ रु बकरिया कौ।
'मुकवि गुपाल' बन बेहड मैं बास देह
मारी परि जाति डर रहै सिंघ–लरिया कौ।
हाकिम दिमान तसकर जिमिदार जेते,
गोस्त के पत्रया कर्‌यौ कर गरि किरिया कौ।
ओढत कमरिया, मिल भोजन न विरिया,
मबही म मत्र विरिया, भलौ करम गडरिया कौ।

चमार[1] पुरुष उवाच

महतरि रहै नाटिलो गाम कौ, करिकैं वैठि बिगार।
गमई गामन में भलौ, महतरि कौ रजिगार॥

---

[1] ै मु मन्तर

सवैया

भलोपेतवियारमें नाज मिल, सिनो[1]रामिओ' परके झारन की।
परे दाम सो पावो[2]विसाननते, भलो प्यार रहै जिमीदारन को।
घरमें घुसिगारी जो देइ कोऊ सगरे[4]मिनि जात है मान की।
[5]यह 'राय गुपाल' गमारन में, सुभलो रुजिगार चमारन को॥

स्त्री उवाच

दोहा

टहल करत, पचिपचि मरत पिटत रहत दिनराति।
याते सबही में बुरी, यह चमार की जाति॥

कवित्त

सिरपरते कबही न अुतरत बोझ जाको
नित प्रति रहै ताको पेत वयार को।
'सुकवि गुपाल' जाकी टूट्यौ करै पासू बो
बजामनो परत है हुक्म जिमीदार को।
आऔ ओ गऔ की बडी विद्दति रहति सदा
जापै काम रहै बहु बेठ र विगारि को।
देह पर[11]हारि पायौ कर मारि गारि याते
सबमें अुतार रुजिगारह चमार को॥

---

१ है मदा २ है बहु ३ मु पाड ४ है सबरे ५ है मु सदा राय गुपालजू थाने भलो सबम भलो रजगार चमारन को। ६ ह चमारन की यह ७ है मूढप ८ है ताको कष्ट रहै सदा बडो पति प्यार को मु काम रहै सदा बड़ पत पान कयार को। ९ है ताको १० है मु राति दिन ११ है रहै मार मार

चूहरे[1] पुरुष उवाच

सोरठा

करिकै माल हलाल, लाल व यौ नित प्रति रहै ।
याते यह रुजिगार, चुरहेले को अतिभलो ॥

सवैया

डरप्यो कर जाते सदा सबही यकजाल गुजारत जगिन कौ ।
सो मिजाज के मारे विहू न गनै पनसामा कहाय फिरगिन को ।
धमकाय के लेत है माल घनो, नित सादी गमी की अुमगन को ।
यह[5] रायगुपालजू याते भलो, सबमे रुजिगार सो भगिन को

स्त्री उवाच

दोहा

भोगत चौरासी जहा,[8]घर घर झारि बुहार ।
याते यह भगीन को, महा बुरो रुजिगार ॥

कवित्त

करनी परति नीच टहल अनेक भाति,
बिद्दति में डोल देपि सकत न मेने को[6] ।
सबरे महुल्लन की सदा परिसल्ला, करनी
परति अदालति में, साझ औ सवेले को ।
झूठिन को पात, दिन झारत ही[7]जात, याते
कहत गुपाल, यह काम न अवेने को ।
रापत कमेले, तऊ परे रहे हैले,[8]याते
बडे पाप पेले, को सुपसो चुरहेले को ।

---

१ है मु भगी २ है है । ३ है नित ४ है अब ता ५ मु सदा
६ है डाल्यो कर साझ को सवेले को । ७ है औ कमान दिन
८ है परे रहै हुन लग रहन कमल
मु राखन के मले तऊ परे रहै हल

मन्यार[1] पुरुष उवाच

हाति नफा गहरी गदा, रोक नही बिहु ठौर।
याते यहै मन्यार को, काम बडो सरबोर॥

सवैया

निन को परे दनह दाम सज, बहु प्यार रहै नरनारिन को।
सोचुरी नय बोलिके द्वारनप, नफा लेत रिसें रिझवारन को।
सदा सादी–गमी' र तिहार' र वार, कुलामें सुहाग सँभारन कों।
रुजिगारन में 'सुगुपाल' भलो सबमें रुजिगार लुहारन को॥

स्त्री उवाच

दोहा

भानि भाति को मान नज, घरमें राखै त्यार।
राजी होइ मन्यार को, दत प्यार नरनारि॥

कवित्त

राखनो परत बडे जावते त माल, गज
परे पै बिकै न माल, होइ जो हजार को।
'सुकवि गुपाल' जिय कटू–फटू होत जब
सौरत म, चूरी पहरावत गमार कों।
मारनौ परत मन जाद क जनानन मैं,
नर को पर न काम, रहै काम नारि को।
चोरी टारि नारि फिरनो परें दवार द्वार, याते
बडो दुपकार रुजिगारह मन्यार को॥

---

१ बह और यहा स आगे क प्रसग मु म नही ह।

हीजरा पुरुष उवाच

तारी पटकामें, सब गातह दिपामें, नन
भौंह मटकामें, ओव तामें, गामें तान कौं।
'सुकवि गुपाल' कढी काहू सो न चप, होत
वडे ज्वावसानी, नाच नचामें जिहान कौं।
काहू सौं न दवै, रहैं अकड सौ सवै, लाग
लेत में न दवै, राजी रापि राअुरान कौ।
पावत है मान, आछौ पात पान पान, याते
सव मे निदान, यह काम हीजरान कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

मिलि सब जाति इकठौरी पान पान कर,
रहै पराधीन, रूप होत तारिका कौ है।
यौं ही दिन भर बेसरममई कौ धरें, गाम
गाम फिरया कर, नाम चलत न ताकौ है।
'सुकवि गुपाल' पीछ तारी पीट्यौ कहै लोग,
देषन सुनत बुरो जनम सु याकौ है।
फीट्यौ मुप ताकौ, औ' गुदावत गुदा कौ
सबही में हीजरा कौ, यह काम हीजरा कौ है॥

भाड पुरुष उवाच

कर्‌यौ कर ज्यौं की त्यौंनकल सब लोगन की,
अक्ली के पुतरा रहत राज धाम ह।
सुकवि गुपाल' सबही कौं जे हँसामें, राअु
राजन रिझामे, पामें गहरी यनाम ह।

सदा रहै मस्त, सब जातिन प दस्त, बडी
होति परवस्त, सो गहस्तन के सामहू ।
राज–सभा भाडन कौं गामन के डाडन कौ,
सूमन को टाडन कौ, भाडन कौ काम है ।।

स्त्रीवाच

सभान में छोटे बडे सब मिलि आपुस मे
जूती आ' पजार करयौ करें आठौ जाम है ।
'सुकवि गुपाल ढीठताइ अुरधारि बडे
बेसरम हैक लेत लागन सौ दाम हू ।
गुर–भल बोलि, सदा मड–गात पोलि जे
अगारी करि गोल ठाढ रहत विराम हू ।
पाय क हराम बदनामी महि गाम, याते
सब मे निकाम, यह भाडन कौ काम है ।

नटके पुरुष उवाच

करि डिठबद, जे दिपावत चरित्र घने
बाजन बजाइ, माल मारत लिहाजी को ।
करि क गुपाल' निज इष्टहि कौ ध्यान जे,
हजारन की लेत मौज जुरत समाजी का ।
देस–परदेसन कौं गाहत फिरत बडे
हात गुनमान मान पावत समाजी को ।
तन रहै ताजी, पट भूपन न साजी, करें
राजन की राजी, करि काम नटराजी को ।।

स्त्री उवाच

सोरठा

टक टूक तन होन, तऊ न उदत बखान को ।
दुष जिय हान अकोन नट राजी के करन मैं ।

कवित्त

बाँस पै चढाय क, नचामनी परति तिय,
इप्टी है कै रापनौं, परत वटौ पटकौ ।
पेलन कलाम, कान फूटिवौ करत, देर
गिरत न लागै, होत प्रानन कौ चटकौ ।
सुकवि गुपाल' ऊचे नीचे कौं चढत प्राण
मुठी में रहत डर रहै गटपट कौं ।
त्रस होत लटि तन, ठहरै न पट, याते
सब में निपट, कम कठिन है नट कौ ।।

कजर हवूडा पुरुष उवाच

श्रगी कौ लगाइ जानें ओपधि अनेक, वहु
तिलन रौं काढ, नाना मिक्तारन पात ह ।
छीके, रसीईं, ढई औ' सिरकी, महत, सूप,
वचि नाचे-गामें नहिं फूले गात मात ह ।
'सुकवि गुपाल' सौ जलावत अनेक चाहें,
तहा चले जाइ, नहि गन दिनराति है ।
अक रापें ग्रान माल मारें भाति भाति, याते
कजर हवूडन की भली यह जाति है ।।

स्त्रीउवाच

दोहा

कारे कृसगात, बहुभाति दुप भोगै तन,
कटिमें न पट, पेट भरत न मूडा कौं ।
चारी जारी करि, लूटि लेत बाटवारन कौ,
पात जोव-जत, पूल्यो राप सिर जूडा कौ

'सुकवि गुपाल' बन बेहट भ्रमत, घर
सिर पर रापें, रहटानि करि भूडा कौं।
परत न पूडा, जात जहा पात हूडा, यह
याते काम डूडा, बुरो कजर हबूडा को।

तुरक पुरुष उवाच

चढी रहत करमान कर, सब मिलि रहत समान।
मुसलमान की पान की, चार्यो दीन जबान॥

कवित्त

मुअे होत पीर, धन पाअ ते अमीर, पुदा
मिले ते फकीर, होत रापत यमान ह।
'सुकवि गुपाल' कर निमक-हलाल, क्यी-
ब्याज नहि पात, नहि पलटैं जवान ह।
पढन निवाज, राज ताजिये निकासि, सदा
अुज्जल रहत आछौ, पात पान पान ह।
मानन कुरान, सदा दियौ करै दान, नव
सबमें निदान, बडे होत मुसलमान ह।

स्त्री उवाच

दोहा

तुरक रहामें, सदा अुलटी चलामें चाल,
राति-दिन करयौ करें, जीवन को घान ह।
'सुकवि गुपाल' त्रिया करमे न जानें, गात-
नात नहि मानें ब्याहे कुल ही में जात है।

मिलि सेष-सैयद, औ' मुगल-पठान, ऊंच
नीच सब जाति, मिलि मदमास खात है।
तुन्नि कर गात, चोटी राखें नांहि माथ, याते
सबमें कुजाति, मुसलमानन की जाति है।

जाट पुरुष उवाच

बड परिवार, औ' कहामें फौजदार, राय
दवार पै वहार रीति जानें राज पाट की।
सबही गुपाल' जुरें जगन के जैतवार,
जोर, जदुबसी, जसी पूरें आस भाट की।
राष नही कबहूं मुकाहू सौ विरोध मन
सोधि न रहत, सील साधुता सुघाट की।
बडे दरबारी, सब रापत सवारी, सबही
में सुषकारी, भोरी भारी जाति जाट की॥

स्त्री उवाच

दोहा

कोर ह गमार, राषें घर में चमारिन, नैक
जानत न सार, चतुराई के सुघाट की।
रहै हर माल, औ' कहामें परमाल, पायौ
कर मालामाल, चाल चल गरि घाट की।

'सुकवि गुपाल' धरी बिन न रहत घरी,
　　परी छोड़ि देत, घेरि राखें राह बाट कीं।
चढ़ि गय-तुरी, राज पाय करै पुरी, याते
　　सबही मे बुरी, यह जानौ जाति जाट की ॥

इतिश्री दर्पनिवारण विलास नाम काव्ये जाति प्रबंध वर्णन नाम
एकविंशो विलास

द्वा विशो विलास

अधम प्रवन्ध

चुगली कौ पुरुष उवाच

दोहा

[1]कलूकाल में अति भलो, चुगली कौ रुजिगार ।
[2]मार माल हराम कौ, सदा रहत हुसियार[3] ॥

कवित्त

आय आय लोग, घर बैठ ही सिरामें हाथ
टटे औ' फिसाद के सुअुठन सुगल कौ ।
'सुकवि गुपाल यन–अुन में दिपाय भय,
करिके फरेबी काल मारत जुगल कौ ।
रातिदिन बूथ मिरवार में रहत, डर–
मायो कर नोग अैसो–जैसो न मुगल कौ ।[4] ।
आमें छिद्र छन, कवीं[5]परत न वल, याते,
सवही[6]में भन, यह कामह चुगन कौ ।

स्त्री उवाच

दोहा

चुगली को रुजिगार यह पोटो है जग माहिं ।
'राय गुपाल' बिचारि यह, याते कीज नाहिं ॥

---

१ मु कली २ मु लय ३ है ताम डरप लाग सय गहरी नफा तयार । ४ मुगूल ५ है मु कढु ६ है मु यह ७ है म रुजगार ८ है मु कीजत

कवित्त

सवहो की, यामें, पोटो, कहनो परति बात,
　　कहै बुरखार, बर बँध तन छीजियै
गारी-गरा देके, बहु कामत रहत लोग,
　　मामले में जाई को बिगारि काम दीजियै।

जाहर भअे पै, मुंह्ह विगरत हाल, याते
　　कहत गुपाल मेरी रानह पतीजियै।
[1]'कहत[2]गुपाल' कवि मेरे जान में तो याते
　　भूलि रजिगार चुगली को नहि कीजियै।

चोरी पुरुष उवाच

लावै गहरो वित्त, सेंतिमेंनि को जाइ के।
लहरि अडावे नित्त चोरो के रुजिग.र में॥

कवित्त

कम्यौई कमायो धन, घनों परै हाथ, यामें
　　सदा सुमिरन मन रहै भगवान को।
परचत धन याको, दरको न लागै नेंक,
　　अैस कर्यो करै लाला रहै न कमान को।
मान मिले गाछ, कंअू साल कों निहाल होत,[4]
　　होइ[4]पुन्य दान, देई-देव सनमान को।
कहत 'गुपाल कवि' मेरे जान में तो आन
　　दूसरो न पेसो कोयू चोरी के समान को।

---

१ है मूकवि २ है म मूप रहि जीजियै कि विस लायपीजिय।
३ मु केई ४ मु होइ

स्त्री उवाच

सोरठा

पियौ हलाहल घोरि, सिला बाधि गर डूबियै ।
मिलहुदरबि किनि कोरि, तऊन करौ चोरी कबहुँ[1] ॥

सवैया

जाग परे घरमें घिरि जाय तौ, मार घनी मिलि क तहा दीजै ।
जाहर हूँ क न रोइ सकै तिय, ओहडे पै कहुँ मारि जो लीजै ।
[3]चीजहि बेचि सके बिलसै नहि, पास परोस कोभू न पतीजै ।
[4]राय गुपाल कौ मानि कह्यौ कहुँजायकै काहू के चोरीन कीजै ।

ठग[4] पुरुष उवाच

सबते भलौ 'गुपाल कवि,' ठगई कौ रुजिगार ।
लाल बन्यौ नितप्रति रहै, बडे मारि क माल[5] ॥

कवित्त

मेला[6]औ तमामन की देख्यौ कर सैन सदा
भलौ बन्यौ रहै, भेम जामे झबमक्का कौ ।
'सुकवि गुपाल' बडी लहरि उडावै, जब
हाथ पर माल, सेठ माहूकार पकषा का[7] ।
करि हराथक्का, देपि मीर चवाचक्का, तब
दकै ढवामुक्का, मजा लीयौ कर मक्का कौ[8] ।
रहै छकछक्का, मारे[9]मालन के थक्का, याते
सबही में पक्का, रुजिगार यह[10]उचक्का कौ ॥

---

१ है मु चारी कौ उद्यम करत नाम धरत ससार ।
याने हिये बिचारि कै दीजै याहि निवार ॥
२ मु हट ३ है म वेच सक नहि चारी की चीजह पारम परोस कोभू न पतीजै । ४ है० म० में 'उचक्क है । ५ है० म लवे माल हराम का पावत नि॰ १र्ज ६ मु० मल ७ मु० बप्पा कौ ८ है मु० नक्का कौ ९ है० मार १० है० मु है ।

स्त्री उवाच

घगधग जीवन जास, है ठगिया ठगई कर ।
यह न रहै धन पास, आवत दीसै, जात नहिं ॥

कवित्त

भरनी परति सिरकार में सदाई चौथि,
रहै डर यामैं, चपरासिन के ढक्का कौं ।
'सुकवि गुपाल'[1] याकौ ठहरै न माल, निंद्य
करम बिसाल, यह राम बडे तक्का कौ ।

मारम भये पै मार परे जेल-पानौ होत,
बेरी पर पायन मे, पोदत सरक्का कौं ।
होइ थुक्थुक्का, नित डोलै भयौ फक्का, यातै
सबही में लुक्का, यह कामहू उचक्का कौ ।

लबार पुरुष उवाच

वार न लगत लवार के करत लवरई काम ।
मान मारि लावै घनौं, लहरि उडावै धाम ॥

सवैया

चाहै तहा ही ते लाव उधार, बनाय कै बात अतारि तरासो[3] ।
मारि कै बैठि रहै घरमे, गुलछर्रे उडायो करे पुनि तासों[4] ।
'राय गुपालजू' लारौ लगौ कहूँ नीलौ दिपायो करै पुनि पासों[5] ।
जानों परे न कमानो परै सबमें रुजिगार लवार को पासो ॥

०है० पु० में इस छंद की तीसरी पंक्ति दूसरी है और दूसरी पंक्ति तीसरी है। १ है० पाठ २ है० में रुजगार ३ है० में तिरासो ४ है० में नासो ५ में पासो है वासो ६ है० में आसो

स्त्री उवाच

दोहा

दरि जिगरति सब गाम में, बात न मानैं कोइ
पकरे पर सु लबार की, बडी परावी होइ ॥

कवित्त

दिन के सम में न बजार मे निकरि सकै
बेरि बेरि देख्यौ करै मुह दरवाग कौं ।
'सुकवि गुपाल' कजदारन के डर, निन
दबक्यो रहत सदा, साझ लौं सवार कौं ।

कहि बुरबार लोग, घेरे रह दवार, हित्
यारन में जब लाज लागै परिवार को ।
लावत अुधार, जाकी पात मार गार याते
सबम अुतार, रुजिगारहू लबार कौं ।

"मसखरा" पुरुष उवाच

राज-सभा दरवार में, कहूँ मसखरो जाय ।
सब सौ जानि पिछानि करि, लाभू धनहू[1] कमाइ ॥

कवित्त

होइ सिरदारन म सबते पहल कब्ब
पास जाय बैठ करि बातन का करावै ।
देस-परदसन में जाहर-जहर होत,
मानत न बुरो काहू जाकी गारी-मरा कौं ।

---

१ मु मानर २ है ते ३ है बडत

गपत चहुल, याते गजी रहे लोग सब
कहत 'गुपाल' इह काम पुसकरा को ।
गजन के घरा मिलै मोती माल परा, याते–
सदही मे परा, रुजिगार मसपरा को ।

स्त्री उवाच

दोहा

है मसपरा सु मसपरी कबहू कीज नाहिं ।
असे काम सु होत ह, भाट–भगतियन माहिं ॥

कवित्त

दरि न रहति, औ' अुपाधि है परति, यामें
नकल करत जाकी सोई ज्ञात पोजियै ।
ठठ्ठा करवाय, येक येकको सिपाय देत,
मा[1] कों छिताय कै बकाय प्रान लीजियै ।

सुकवि गपालजू सदा को परिजानि चिर
नितप्रति यामें गारी पाय गारी दीजिय ।
जानियै न ररी, मेरी बात मानि परी, यात
ई क मसपरा मसपरो नहीं कीजिय ॥

हरामजादे पुरुष उवाच

देह रहति आराम में, सरत सकल मन काम ।
याते बडा अराम को, है हराम को काम ॥

---

१ हैं वाम २ ॰ गुगन ३ मु चिढ

कवित्त

लगै न छदाम, औ' कमात घने दाम, भारी
पुष्ट होति चाम, सुप रहै आठों जाम कों।
'सुकवि गुपालजू' निकारत है नाम, सदा
बैठ्यौ निज धाम, भोग भोग्यौ करै भाम को।
दौलति हरति, काम सबरे सरत, भली
बरी के करत, डर रहै नहिं रामकौ।
करौ बिसराम, देह पावति अराम, तातें
याते यह काम कौ सुकामहु हराम कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

फलदायक नहिं होत है, याके कबहों दाम।
याते भूलि न कीजियै, यह हराम का काम॥

कवित्त

धरम कौ हारि, अधरम उर धारि-धारि
टारि नीचो नारि, बात तजत सचाई की।
मूतत कौ तातो, करै मन कौ सुहातो, मारि
हातो तक दौलति जे भाई औ' जमाई कौ।
भूषन भरत, कछु काम न सरत, नऊ
डरत न करनी करत अधमाई की।
कहत गुपाल' कोऊ केतिक उपाय करौ
ठहरति कौडी नीस नहूँ की कमाई की।

होतहू निलज्ज सो, बनाय झूठी सज्ज, झूठी
करिकै तबज्ज, सो कठोर होत जो को है।
रहै मुष फीको, कोऊ कहतु न नीको, याते
जीवो धरकार बेसरम आदिमी को है।

सेषीषोरा पुरुष उवाच

कौडी लगै न गाठि की, मन के लाड्डू होत।
सेषीषोरन को सदा, महूँ ही वैरी होत ॥

सवैया

स्वर्गहु में हूर जाके चल, अनजान ते आगे सो सेपि न मारै।
सो गुनों झूठ बनाइ कहे, तऊ साची सी बात बनाइ अुतारै।
गाठि को यामें न लागै कछू, महुँ वैरी रहो चाह सो कहि डारै।
याते 'गुपालजू' या जगमें सदा गाल को जीतै औ दामकों हारै ॥

स्त्री उवाच

दोहा

औरन की निंदा करत, सेखी मारत आप।
याते सेखीखोर की, बुरी जगत में दाप ॥

कवित्त

नीचो कर लोग, जाय हक्क न सोग, व्याह–
तौ न करि सकै कोऊ जाके छोरी-छोरा को।
जायकें 'गुपाल वहु मारै जब सेपी तब
जूती सी दै मुष कों विगारत ढिंगोरा को।
सुजस की करी, एक बात न बनति कोऊ
जाति कों न गनें, काज करनी को जोरा कों।
सदा रहै कोरा, सब लोग कहै रोरा, याते
बडो कुलबोरा है करम सेपीपोरा को ॥

हरामजादे पुरुष उवाच

सब रुजिगारा में भलो, हरमजदो को काम ।
घर-घर पावें, लोग सब, करत कमाई दाम ॥

कवित्त

टेढी धरि पाग, डोल्यौ करत बजार बाग,
मांगत में स्वाल, खाली परे न करादे[1] कौ ।
ऐंस करि दाम, पाय खरचैं पचावै जो'
डिमाक व[2]यौ रहत है जैसे मलजादे को ।
'सुकवि गुपाल,' चाहै ताहि घमकाद[3] नेह,
जाऊ[4]ते न डरै सो कुमर सहजादे[5] कौ ।
कदिक अवादे, मास मारत दवादे, याते
सबही में जादे, रुजिगार हरामजादे[6] कौ[7] ॥

स्त्री उवाच
दोहा

याते यह सबमें बुरो, हरमजदी को काम ।
भलमुनसायत के करें, हाथ परत नहि दाम ॥

कवित्त

लोक बुबडाई,[8] परलोक दुखदाई दाग
लागत सदाई, बापदादन की गददी कौं ।
'सुकवि गुपाल,' सुनि पाव जो [illegible] लोग
देखिकें जुमर्दी,[9] हाल झा[illegible] मद्नी की ।

---

१ है मु इरादे २ है मु रहतु ३ है ज[illegible] गाद ४ मु बाऊ ५ मु रका ६ है हरामजादा मु हरमजादे ७ है नव रुजगारनमें । म प्रति मे दोहा है— सब रुजगारन मे बुरा जा[illegible] है ज हराम । परलोकहु निकरत जनन लोकहु में बदनाम ॥

८ मु लार मे बुराई ९ मु जुमर्दी

राजा के अगारी छाय जाति है गरद्दी लोग,
कबहू पत्यारो न करतु है नहद्दी को।
होत बेदरद्दी, लोग कर्यो करें वद्दी,
सबही मे बेपरद्दी यह काम हमजद्दी को॥

पाषडी पुरुष उवाच

डिम्मदारी

धरिकैं[1]बडे पपड कौं, डिम्म धरै जो कोइ।
आजकालि के नरन में, वडो जीवका होइ॥

कवित्त

राजा अरु[2]राना सवही कौं परमोधि लेत,
कथा कौ प्रसग[3]कहि कहि कें अगारी कौ।
'सुकवि गुपाल' बडो[4]जागति है जोति, वडो[5]
महिमा अधिक होति, टग धनधारी कौं।
पार नही पामें, सब सिद्धई बतामें, देस-
दुनी चली आव ताग टूटत न जारी कौ।
नत्र नरनारी सदा पूजा होति भारी, जे
कहावत अुतारी, काम करें टिमधारी कौ।

स्त्री उवाच

दोहा

मेरो सिप कौं मानि अुर डिम्म धरौ मति कोइ।
विगरगो परलोक अरु नाम धराई होइ॥

---

१ है मु नृप २ है मु रुजगार ३ म है न्गिके। ४ मु और ५ है मु प्रवध ६ है जाम ७ है जग ८ टगिवो अनारी को ९ है मु याते बडो सुपकारी रुजगार डिम्मधारी को।

कवित्त

मान[1]होइ जब देख्यो चाहै करामात, अहि जात
करामाति दिनराति पर जागी की।
बडी जानि बात, जब कहत पपडी, ताको[2]
फैनि जाति भड़ी, पोलि निकरै थगारी की।
'सुकवि गुपाल' और दीसत न ओर,[3] बिगरत
परलोक, यह बात बडी न्यारी की।
देह परै हारी, कष्ट करत[4] में भारी, याते
बडी दुपकारी, जीवका है डिम्भधारी की।

नगा पुरुष उवाच

कबहुँ न कोऊ करि सक, तासों दगा आय।
याते यह नगान कौ, काम बडो गुपदाय॥

कवित्त

चोरे में मवासों, पातसाह डरें जासो, तरि
नेइ कहा तासों, कोई जोरि करि जगा कौं।
सुकवि गुपाल' सो अडगा देतु सब औ'
लगावत पतिगा हाल बीच दकें गगा को।
भलो-बुरो कोऊ कहि सकतु न जाय, सदा
निडर कमाय, मेल सबही के बगा कौं।
होइ बहु रगा, रापै जिय में अडगा, याते
[illegible] में चगा रुबिगार यह नगा को।

---

१ है मान २ है जागी ३ मु ओक ४ है सदा सहै कष्ट भारी।

स्त्री उवाच

दोहा

लाय उधार वजार कौं जब नगा ह्वै जाइ।
तबै सकल नगान के, अे हवाल होइ आइ ॥

कवित्त

जाति के न पाति के, न कोअू भली वान के, न
मात के, न तात के, न दीनन की भीर के।
सील के सहूर के, सरम के, न सरधा के,
भाव के भगति के, भलाई के न नीर के।
मित्र के मिलाई के न, साधु हरि गायी के न,
पापी के प्रसगी नित पोपक सरीर के।
कहत 'गुपाल' वाजे दाजे लोग नग देपे
गग के न रग के, न गुर के न पीर के ॥

ज्वारी पुरुष उवाच

या जूवा के पेल कौ, चसको जब परि जाय[1]।
दाय सुहात न और कछू, याही में दिन जाय[2] ॥

कवित्त

आवति फिरग, यच पेचन की वात घना,
पुसी मन रहै, जैसे मिल गह न्वा को।
'मुन्वि गुपाल जेक दाव प[4] निहाल होन[5]
मार्यो करै मान, गटि नवकी अग टूथा को।

१ है जात २ है की रहै दान ३ है रहै [illegible] ४ ५ म है हैर

दौलति लहत, भूप प्यास न रहति, याकी
बात के पहत, बाधि देत गढ़ धूआ को ।
जागि परैं मूआ,[1]आमें केते मनमूआ, याते
सबही मैं[2]भला रुजगार यह जूवा को ॥

स्त्री उवाच

दोहा

झुलके लाग दाव प, धरि आवै मति माहि[3] ।
राति दिना डरप्यो मर नित ज्वारी की जाइ[4] ॥

कवित्त

आवत औ' जात में न दीसत ह दाम, याके
बडौई निकाम काम पाछ बडी ख्वारी की ।
'सुकवि भपाल' मूल लागनि है जब तब
हारे अडि देन घरबार, मुत नारी कौ ।
काहू के जुटाओ, फेरि छूटि न सकत, यहु
आवतु है लपक, झपक चोरी–चारी को ।
मीठी लग हारी, झूठ बोलतु है भारी, याते
बडौ दुपकारा यह पल बुरी जवारी को[5] ।

ग्वाल पुरुष उवाच

मारत मान हराम के जाइ होत मपत्वार ।
भूर पानि गौदान मे, ग्वाला गारी पान ॥

१ है मूआ २ है त ३ है माइ ४ है जाहि ५ मु है रुजगार यह जैवारा को ६ है याते भलो गोपाल कवि ग्वालन का रुजगार ।
मु यान भनो सु जगत म ग्वालन का रुजगार ॥

कवित्त

बनत बराती, मह् बनत धराती, मांनि
भातईते सरस, बनावत बहाला कौं।
'सुकवि गुपाल' सल कर देस–देसन की,[1]
गाम–गाम व्याह के गुजार पचवाला कौं।
कैंऊ घेर लेत, दाम बटत–बटावत मैं,
रिनि–मिनि पातिन में मार्यौ कर माला कौं।
बने रहें लाला, ओढि साल औ दुसाला याते
सबही में बाला, यह नाम भलौ गवाला कौं।

स्त्री उवाच

दोहा

द्वार अरें भूपन मरें, मार पर बहु ताइ[4]।
याते कबहुँ ग्वालपन, कीज कबहुँ न जाइ[5]॥

सवैया

आब रहै न हियामें कछू, सुनि गारी गरा धरकारह जीजें।
दूसरे लेत में मार पर औ,' काल दुकाल जमा सब छीजें[6]।
ऊचे चढेते गिरें जो कहूँ, तब नाहक प्राण अकारथ दीजें।
'राय गुपाल'का मानि कह्यौ कहूँजायक ग्वालपन्यौं नहि कीज।

---

१ मु है सुकवि गुपान ठौर ठौरन की सल ... म हिलमिल
३ है मु रजगार ... ४ मुं ताहि ५ मु जानि
६ है औ दकाल्की दन परो तन छीज।
मु दवि जान म प्राण अकारथ दीज।

सगाई के बिचौलिया पुरुष उवाच

परिकै जे अप बीच कर–ब्याय सगाई देत ।
जाति बिरादरी बीच में, जग में जे जस लेत[१] ॥

कवित्त

बडो होइ नाम, औ,' कहै सो बनें काम, भले
माल मिल गहरे, न काम बनें इतने ।
मानत यसान होत आदर गुमान, पुनि
सदा मनभाई मिजमानी मिल नितनें ।
जाति औ बिरादरी, कुटुंब हितू यार, हाथ
जोरि क पुसामदि करत जितनें जितनें ।
'सुकवि गुपालजू' कहे न परें जितने सगाई
के बिचौलिया कौं होत सुप नितने ॥

स्त्री उवाच

दोहा

ब्याह सगाई बीच है करकरावत जो कोइ ।
पामी लावत परच की परी'पराधी हाइ ॥'

कवित्त

आछी बनें बात बटा–बटी को बताम भागि
बिगरत बात बुरराई देत घनि ये ।
सुकवि गुपाल दाऊ आर कौ रहत बुरो,
भँडुआ कहाद गारी–गरा कान सुनिये ।

---

१ व ग म नही है ।
मु दूसरी पवित स प्रवा है पचपन्चायत व चम जगम तें यजा रेत ।
२ मु गमान ३ है मु बितन । ४ म वडी ।

छोड़ै घर काम, दाम पचन परत, होत
नाम बदनाम, काम भअे पै न गनियें ।
पायनु तुरावै, कछु हाथहू न आवै, याते
भूलि कें सगाई कौ बचौलिया न बनिय[१] ॥

गमारके · पुरुष उवाच

नित पासति जाकी सुलठ्ठ दई सुकही निठि जाति लवारन कौ।
जिदि कोअू सवै न रुकै सो कहू, वदि बाद में जीनै हजारन कौं।
न भलीऔ' वुरीसो लगै तिहिक, सुख सोकन गारिआ भारन कौ।
यह 'राय गुपालजू' याते भलौ सब में यह काम गमारन कौ ॥

स्त्री उवाच

कवित्त

केतौ समझावौ, अेक आवै न अक्लि, सो
अुज्जइडई की कह सिख दीअे हू हजार ते ।
भूषन बसन तन पहरि न जानें, आछौ
लगत न नेक गयौ रहत चमार ने ।
बनि करि बुज्जा, वारै मनकौ कहावै अक्लि
चादि पिटै आवै काम परै जौमदार त ।
मानत न हारि, जिदि मरै करि रारि, पालो
पारै अेक बारहू न भूतियें गमार ते ॥

---

१ है प्रति म इसकी दूसरी पक्ति तीसरो है और
तीसरी दूसरी ।

रसिया पुरुष उवाच

चौपई बनाइ, छैल बनेई रहत, ढफ
ढोलक बजाइ, सग नाचैं तिरियान के।
मेला औ तमासे, फूल डोल औ' बरातन मैं
करि रंग-रंग दल जोर दुनियान के।
जिनप 'गुपाल' रीझि सुदरी अनेक देखि
चटक-मटक हँसि बोल सुध भानि कैं।
सुदर सुजान नैन होत जैसे बान, सदा
रस की खान, हाय परे रसियान कैं।

स्त्री उवाच

दोहा

बपता हीरे राँझ अरु, अल्हा ढोला गाय।
करि अनेक स्वागन नचैं, रसिया ढफहि बजाय॥

कवित्त

गारी पायौ घर, मेला-ठेला फूल-डोलन मैं
बावरे से डोलैं, मन फसि होत आन कौ।
आवत न हाथ, छाती कूटिबौ करत, बेस-
रमई कौ घर हाल होत घसियान कौ।
'सुकवि गुपाल' नित बुरा बकयौ राग, पर-
नारी तक्यौ कर, काम कर घसियान कौ।
होन जसियान, नेक रहै न सयान, पसियान
के ते बुरौ, यह काम रसियान कौ।

अल्हैया ढुलैया पुरुष उवाच

कवित्त

रूचि मिलै बैठक, औ' तोरयौ करै मन, राजी
राषै नरनारि, मजा मारत तगया कौ।
'सुकवि गुपाल' बूझ होति गामगामन मैं,
निकरत नाम कोऊ छांडै न पनया कौ।
रसिया कहाय, नसे पानी मैं गरक हैं,
पात नित पीरि-पाड, दूध औ मलैया कौं।
कहिकै जुलैया, लागे रहत बुलैया पाते
सबमे भलया, कम अल्हैया-[illegible]या कौ॥

स्त्री उवाच

कवित्त

सरै न गरजि, गानौ परत गगनि, [illegible]
स्वान कौ मगज, झूठ बोलनौं [illegible] कौ।
पांसू चढि जात, दूपै कटि, गात हाय [illegible]
[illegible] धरै दिन राति, सुप जानें न [illegible] कौ।
आवै नहि ठोक, बिगरत परलोक-नार,
जोटिया बिगरि मजा आवै न [illegible] कौ।
तोरत अढैया, पेट फूलि कै तलया [illegible]
देह को दलैया, कम अल्हैया [illegible]या कौ।

इतिश्री दपतिवाक्य विलास नाम काव्ये अधम [illegible] वर्णन नाम द्वाविंशो विलास

त्रयोविंशो विलास

अधमाधम रुजगार प्रबन्ध

गडिया पुरुष उवाच

गडे पट्टे, चाव करि, बने रहत महबूब ।
रापत राजी सवन को, माल मारि कैं पूब ॥

कवित्त

रापत मिजाज, सग लैकें बच्चे बाज, जपि
करत न लाज, बांधि देत झडियान पै
भोर अरु साझ, डोलै गलियान माझ, करि
गरदनि मोटी, हाथ लीयें छडियान[1] क ।
'सुकवि गुपाल,' तन सजि सजि साज, मिसो
अँजत वों आजि, माल मार बढियान कौं ।
बैठि दडियान, राजी रापें जडियान याते
बडो सुपदानि रुजिगार गडियान कौ ॥

स्त्री उवाच

दोहा

रहे न काहू काम को, झोकें जाकू नारि ।
गयौ होइ गनिका न ते गडिया कौ रजगार ॥

---

१ हे छडियान २ है राजा

कवित्त

जीवन नरक, देति गनिका धरक, करयो
  करत तरक, लोग देषि कें १जवान कौं ।
आंषि न जुरति, औ' वनामर्दो रहत, पर
  लाप मन पानी यामें देषत अचान कौं ।
कहत 'गुपाल' कछु स्वाद न सवाद औ'
  कुराह को चलन गुदा फाटिवे कौं ग्यान कौं ।
रहै जीय ज्यान, लोग गाडू कहे आनि, याते
  बडो दुषदानि रुजिगार गडियान कौं ।

भडवाई पुरुष उवाच

भडवाई क करत में, गहरो होत मिजाज ।
बड लोग आदर करत, बहुत मिलत सुष साज ।।

कवित्त

भामिन अभोगि, तन भागत रहत सदा,२
  पीयो कर दूध, भरि भरि गडुवान कौं ।
आदर ते बडी बडी ठौरन पहुँच, कहू
  कबहूँ पर न कछ काम कढुवान कौं ।
'सुकवि गुपाल' सेला—समरा झुकामैं, बडी
  षातिर बनामैं, परि षाजू पडुआन कौं ।
षाय लडुआन, राजी राष रँडुआन, याते
  बडो सुषदान, रुजिगार भडुआन कौं ।।

---

१ ह बुरे वालिक (यह प्रसग म म नन्‍ी है।)
२ है रहत ३ है मु भल

स्त्री उवाच

दोहा

[१]वडे वडे जे आदिमी, आमन देत न धाम ।
याते बुरौ 'गुपाल कवि,' भडवाई को काम ॥

कवित्त

लोक विगरत, परलोक विगरत, नित
लाजन मरत, याकी करत कमाई कौं ।
'सुकवि गुपाल' मति देपि लेई कोऊ कहू,
राति दिन यामें डर रहयौ कर याई कौं ।
रहत न पाक, होत गरमी सुजाक, नाम
भअ प इराक, दाम पर तन ताई कौ[२] ॥
[३]आवै बुरबाई, औ' अजाअ जानि जाई, याते
बडौ दुपदाई, रुजिगार भडवाई कौ ॥

कसवी पुरुष उवाच

बिसय माझ छाके रहत,[४]सब सुष रहत तयार ।
[५]यार पयार कर घनौ रापे द्वार बहार ॥

कवित्त

परम प्रबीन-चीन बातन लगाय, हिय
कामहि जगाइ, करि लेत बस जीन कौ ।
'सुकवि गुपाल' करि चटक-मटक तन,
लटक दिपाय राजी रापत[६]धनीन कौ ।

---

१ है मु भले भले २ है मु याई को ३ है मु होइ ४ मु है रहै ५ मु है यान यह सबम भलो कसबिन को रजगार ।
६ मु है माल मारन

मुरि मुसिकाय, हाव भावन बताय, नाचि
तानन कौं गाय, राजी रापैं बिसईन कौ[1] ।
ओढि पसमीन, बने रहत अमीन,[2] याते
सबमें नवीन, यह काम कसबीन कौ ॥

स्त्री उवाच

दोहा

बिसय करत सबसो सदा, है करि धन आधीन ।
कसबी कौ रुजिगार करि, होत पाप में लीन[4] ॥

कवित्त

बेचि तन-मन, जन-जन कौ हरत धन,
रापनौ परत यामें राजी सबही कौ हैं ।
'सुकवि गुपाल' झूठी पातरि कहावै, परलोक
दुप पावै, कोऊ कहतु न नीको है ।
टवि चलि जात, भग रग छिलि जाति,[5] देह
दलि मलि जात, न सवाद आवै ती कौ है ।[6] ।
रोग रहै जी कौं, काम बेसरमई कौ सदा
याते यह फीकौ रुजिगार कसबी कौ है ॥

भभैया पुरुष उवाच

पान पान आछे मिलत,[7] बडे होत गुनमान ।
जात भभयन कौ सदा, मिलत दान सनमान ॥

---

१ है नाज का न्खाइ मुमिकाय नान गाय गाय भावन बताय राजी राप विसयोन कौ । २ है- मु नवीन ३ है मु अमीन ४ है सोरठा के रूप म है । ५ है देह मलि जाति आवे टावे चलि जाति भगरग छिन ज नि न सवाद आव तीकौ है । ६ मु दुप्ट रोग भरि जात । ७ मु करत

कवित्त

मावा बनया, गा भौंह मटाया गर
    मटि सराया, नाभु र घुमया को ।
गा ठमकया, विमुराया अुनाया, झाको
    दव गहि वया, लूटि लेत हरि अया को ।
गुरचि गुपाल' माहै मन मुनिराया, नर
    दव मुरवया फिरि नेर फिरवया को
तना गनया, वह गान नरारया, याते
    सुप रया भलो राम यह अभंगा को ॥

स्त्री उवाच

दोहा

गाय, वताय, रिझायक मुरि–मुरि तार तान ।
तवे भगयन को कछू, मिलन दान, औ' मान ॥

कवित्त

मरद है महरी व करन परन काम,
    होत वदनाम जानि करत चवैया को ।
वसनी वहामें, निरलज्ज होद जामें,[1]रातिदिन
    दुप पामें, मुप जान न लुगैया को ।
सदा ही 'गुपाल परदसन मे रह कछू
    काम को न रहै हित् यार जाति भया को ।
छूटे जात पैया, दूषि परनि करया, याते
    वडो दुपदया, यह करम भभया को ॥

---

१ व गुदा भग जो कराय

जनानिया पुरुष उवाच

कवित्त

नेह नित निबह, लगी ही नव नरिन सौं
तियन में बैठे, न कलक लगै आने मैं।
सूरत सिकिलि, औ' सिगारन सिगारि बडो,
जुलम करत नैंन भौंह मटकाने मैं
'सुकवि गुपाल' राग–रग में गरक रह,
जाकौ दिन जात सदा गाने औ' गवाने मे।
भाव के जनानें, राजी रापत जनानें, सो
जनानिन–कौ होत भलौ आदर जनाने में॥

स्त्री उवाच

आवे न सरम, होत बडौ बेसरम, धोवती
मे हाथ डार सौंप आवत मराने कौ।
'सुकवि गुपाल' सदा रहत नियारे चीत,
नीच मन रहै, रहै काहू न ठिकाने कौ।
बोलनि, चलनि, चितमनि, और होंति ग्रो'
जनानिया कहाव बल जात मरदाने कौ।
निंदत सयाने, न तिया कौ सुप जान, याते
सबमे निदाने धृक जनम जनाने कौ॥

छिनरा कौ पुरुष उवाच

आछी तिय कौ देषि कें, जाय लगामें लाग।
भोग भोगि नित नइन सौं, गरक रहत अनुराग॥

---

१ मु लगावत

कवित्त

है[1]परि सराम, वो ठने रह आठो जाम,
परचत दाम, यामें भले पान-पान मों ।
आपिन पै आइ, मिगी नैनन पै वाढ धरि[3]
मोहि लेत मन-तन मरि रे सयान मों ।
'सुकवि गुपालजू' यसवही में डूबि कें,
अभागि तन सग भोग भोगन दिदान मों ।
होत गुनमान, वडी रापै सोप सानि, याते
वडो गुपन्नान, यह काम[5]छिनरान को ॥

स्त्री उवाच

दोहा

गाम नाम धरिवौ कर, काम रहे रिस नित्त ।
याते नहिं कीजें कबहुँ, जाइ छिनरयौ मित्त ॥

कवित्त

होत वदनाम, घने चाहियत दाम, नक
भोगत निकाम, काम याके मन दओ में ।
राजा लेत डंड मारि बैठ वर बड जत्र
आव न रहति, कछू याके देरि लअे में ।
'सुकवि गुपाल' ठौंढ[6]ढढनी परत,[7]रहै
धकर-पकर मन, लगतु न कहे में ।
विरह सों[9]दहै जीव[10]जात रोग भयें, दुप
होत नित्त[11]नअे, छिनराकौं छिनरअे में ॥

---

१ मु ह्वै २ है मु भले खाय ४ है अजन को आज क लगाय किलि आन मु थोहन पै आइ मिरी ननन प वाढ धरि ४ है मु इसक ५ है मु रुजगार ६ मु ठौर ७ है ढूढत फिरत ८ मु है रहतु ६ है ते १० है मु प्राण ११ मु नये ।

छिनारि पुरुष उवाच

राजी रायति मीत को, नरिवे भलो सिंगार ।
याते नारि छिनारि को, भलो यहै रुजिगार ।।

कवित्त

सोना सो सरुप, पाति सिंत्रिन के दोंना, भोग
भोगि कैं यसोंना सजै रहित सिंगार है ।
'सुकवि गुपाल' ग्रामें चातुरी अनेक, अेक–
अेक ते अनेकन रिझाय रिझवार है ।
भोजन–वसन पहुँचामें लगवार द्वार,
कैऊन अुतारे पार, मानति न हारकों ।
राजी रहै यार, लोग कर्यौ कर प्यार, याते
वडो सुपकार, रुजिगारहू छिनारि को ।।

स्त्री उवाच

दोहा

सदा जाति को डर रहत, सब कोअू कहत छिनारि
याते नारि छिनारि कौं जग जीवन धरवार ।।

कवित्त

देत धरवार, हितू यार नरनारि, डर
रह्यौ करै यामें जिमीदार सिरकार को ।
पावत न वार, ढूंढ्यौं करें ठौर–ठार, होत
आतस अपार, भोय नरक के द्वार को ।

घर के गुपान' दियो घर मार-गार, हर
रह्यो घर यामें जिमीदार जमादार को ।
लजें परिवार, ओ' जमानों हात हार याते
सबमें अुतार, दजिगारद् छिनारि को ॥

परनारि : पुरुष उवाच

याते नहिं कोअू बच्यो, काम प्रबल जग माहिं ।
याते तिय की प्रबलता, जग में सदा सिवाइ ॥

कवित्त

इन्द्र-चन्द्र मद, मुनि पतिनी के फद परे,
मोहे चतुरानन, स प देषि जाया में ।
अैसे हरि जिंदा, हैकें विदा ते रमन कियो
लक्षमी सी नारि अुर धारत हे छाया में ।
देषत ही मोहनी की मोंहनी ते मारे, परे
सिव पारवती अरधागो घर काया में ।
'सुकवि गुपाल' नर-जाया की कहा है बात,
विधि-हरि-हर से भुलाने तिय माया में ॥

स्त्री उवाच

दोहा

इन्द्र-चन्द्र की चकवली, रामन बालि समेत ।
बड़े बडे मारे परे, पर नारी के हेत ॥

कवित्त

गोतम की तिय ते कलानिधि कलंकी भयो,
इंद्र कें सहस छिद्र सुने हैं अगारी ते ।
तारा काज हाल भयो बालि को सुकाल, भीम
कीचक कौं द्रोपती ते मार्‌यौ क्रोध भारी ते ।

रावन अपड ब्रह्मड डड जाको चड
राम पड-पड कीनों सीता सुखमारी ते ।
'सुकवि गुपाल' नर तुच्छ की कहा है बडे
बडे जौम-दार मारे परे परनारी ते ॥

कामप्रलय पुरुष उवाच

कवित्त

सुर औ' असुर नर निसचर पच्छी पसु
कीटरु पिसाच जच्छ बस सब ती के हैं ।
याते आछो लग भगतन को भगति भाव
याके बिन पगत जगत सुख फीके है ।

'सुकवि गुपाल जैसो विधि के प्रपच में को
जाके न हिया में मन भाजे होत जी के हैं ।
और ह निकाम, काम साचो यह काम, काम
अपति भओ पै सब काम लगें नीके हैं ॥

स्त्री उवाच

दोहा

वाहू जुग जलज सनाल, मुष कज फूल्यौ
सोभा जल पूरन गभीर सरसायौ है।
कटि भाग पछिम, नितव परवत नैन
सुफरी सिवार केस स्याम दरसायौ है।

भनत 'गुपाल' जुग कुच चक्बाक जोडा
त्रवली तरग नाभि कूप सो मुहायो है।
काम सर ज्वाल तै तपत जग जीवन कौ
नारि रुप विधना सरोवरि बनायो ह ॥

विसैसुष' पुरुष उवाच

कवित्त

डारि गलवाही मीठी वतिया सुनी न वान
करि चतुराई हाव, भावन कौ चोर्यो ना।
सन के समे मैं कुच गहि क अलिगन द
स्वाद अधरामृत आनंद म लीनो ना।

'सुकवि गुपान' सजि सज औ' सिगार, तरनायन
के माथ यारं हँसि रग भी यों ना।
वृथा पछिताय, यो ही जनम विहाय,
अमी नर देही पाय, जिनि तिया सग कीनों ना।

स्त्री उवाच

दोहा

जेई सिद्ध साधक महत मत जेई बडे,
जेई परम हमरु, प्रसस जग लेखौ है।
'सुकवि गुपाल' जेई मायक विकारन ते
भजे निरलेप काम-क्रोध-लोभ रेपौ है।

जप-तप-नेम-व्रत तिनही कौ साचौ सदा
तिनही कौ स्वग-सुप जग में विसेप्यौ ह।
नरक का छेवयौ, पुन्य वढत अलेप्यौ, जिन
धरनी में आय क तिया कौ मुप देप्यौ है ॥

लगनि कै · पुरुष उवाच

कवित्त

दुहुन के दुहुन में लागे रहं मन, तन, प्रफुलत
होत करि दरसन आगे ते ।
भोगत गुपाल' ब्रह्मानद कौ सौं भोग हिय
होंम लागी रहै अुर वामहि के जागे ते।

यही प्रथी-तल, देह धारे कौ सुफल, हरि
याही ते मिनत पूरे प्रेमहि के पागे ते।
सदा सर जाग, तागं आछे राग-रग
मेंहुमागे सुप मिल, नअे नेहहि के लागे ते ॥

सखी उवाच

दोहा

तपत रहत काम निता बिरहागिनि मैं
भागिन त भेंटैं क्यों लागत चसक मे ।
रहै गुरजन, दुरजनन को भय लाग
लाज धम त्याग होत दरम रसक के ।

रापक 'गुपाल' दूती सखिन के मन-वन
गाहने परत मान मारि क ठसर के ।
सुनहु घसके हात हिय मैं कसक, जेती
रहति समक सदा लागत असक के ॥

विरह कौ पुरुष उवाच

कवित्त

सुमिरन रहै दिनरनि रूप माधुरी कौ,
ध्यानहि मैं सदा लाग्यौ रहै प्रिय भोग मैं ।
होतह 'गुपाल दोऊ प्रीतम के रूप प्रम
पूरन रहत हिन वढत सभोग मैं ।

दुहुन को दुहुन क प्रम की परीक्षा होइ,
जोति जग जगै मन लाग हरि जोग मे ।
मिट सब सोग, दोऊ व्यापत न रोग, यों
सँजोग ते सरस सुष होतह वियोग मैं ॥

स्त्री उवाच

कवित्त

स्वाम निसा चिता पीर बाढै नित नई, अुर
बिरह परेपे बात होत है गिरह में ।
कारे-पीरे ताते-सीरे, क्रम होत गात अति
मुपद-दुपद है जरावत जिरह में ।
भूप-प्याम सुधि-बुधि निन्दा-दुति अगन की
सुप घटि जात मन रहै न थिरह में ।
मुकवि गुपाल' वह गथन में देपि देपि
दपति के होत अंते लछन विरह में ॥

लौंडेबाज पुरुष उवाच

रहै अजरे-बाजरे, पेलत पल अनेक ।
रडीबाजी की यसक, याते जग मे अेक ॥

कवित्त

देख्यौ करै रग, महबूबन के सग, हाइ
हिय में अुमग डर रहत न काजी को ।
'मुकवि गुपाल' सदा आसिक कहाइ, सौक
सायनि बनाय पेल-पेल दगाबाजी को ।
अक के लगावत, कलक न लगत, नित
लीयो कर मजा रास भजन ममाजी को ।
आव इस्कबाजी, निन रह्यौ कर राजी याते
बढेई मिजाजी की यसक लौंडबाजी को ॥

म्त्री उवाच

दोहा

धातु-हीन, मन-हीन तन, भागी जाय न जाइ ।
लौंडवाजी को यमक, याते कछू न होइ ॥

कवित्त

मारी जाय नस जोऊ पर परवस, होइ
गरमी मुजाक, बढ छीनता कुकाजी को ।
'सुकवि गुपाल' वहु आसिक के साथ, ताल-
मोल न रहति मन बिगरै मिजाजी को ।
आवति गिलान, धन चय अप्रमान, मन
रापनी परत महबूबन को राजी को ।
रहत न ताजी, रूप प्रानन ते वाजी, सदा
याते यह पाजी है यमक लौंडवाजी को ॥

रंडीवाज पुरुष उवाच

रहै नही डर राज को, भोग राउ रु रंक ।
रंडीवाजी करत नित, रहत सदा निरसंक ॥

कवित्त

राउ अरु रंक भोगयौ करत निसंक औ
वलक लगन दिल रहै राजी राजी मैं ।
सुकवि गुपाल' रहै काहू को न डर सो
अजगर है राग रंग दपत समाजी मैं ।
रहै सुप पाइ कै, वजार की मिठाई पाय,
पाइ कै सिवाइ, मजा डूव इस्कवाजी मैं ।
तन रहै ताजी, आप होति है निलाजी,
रंडीवाजन को, सुप ऐते रहै रंडीवाजी मैं ॥

सवैया

नप नाल रहै छिगुनी मे छला, नित सग रहै नसे बाजन का ।
बहु पान मिठादन पाते रहै, नहु राखे मिजाज निहाजन का ।
मोगुपालजू' पातुरी मे करि भोग सुन्यौ कर राग समाजिन का ।
मब सौघन में यह मौप भलौ यहते यह रडीबाजन का ॥

स्त्री उवाच

दोहा

रहि मिजाज में नहि बन, करनी काज लिहाज ।
करि अवाज दुहुँ लोक होइ, रडीबाज निलाज ॥

कवित्त

धन रहै जौलौं, तौलौ आदर करति फेरि
मुपहू न बोल बहु मानन कौं पाइ क ।
'सुकवि गुपालजू' पुवाय परतीति-प्रीति
निरधन करै छिन सुपह दिपाइ क ।
भोगन भुग्याइ, जग जूठिन पवाइ, निंदा
लोक में कराइ, देति नरक अघाइ क ।
गनति न ताय कर आतस सिवाइ, याते
कवहुँ न कीजै रडीबाजी कहुँ जाइ क ॥

कुटनी पुरुष उवाच

दिन अरु राति भर्यौ रहै, नरनारिन सौ धाम ।
याही तैं सबमें मलौ, यह कुटनी को काम ॥

दोहा

ह्यौ रंग धरराग मन नाहिं आठहू जाम ।
याते भूलि न कीजिय यह कुटनी को काम ॥

कवित्त

बिगरत जात है टहू नाक परलोक लोक-
टोक ने करत दिन राति तन नीज ना ।
'सुकवि गुपाल जोरावरी ह मिलाय मनी--
सीता के दुपाय पुनि याको बचै बीर ना ।
होत बेसरम जात धरम-करम, हया
दुरमति-वारे जे, परोग मान धीज ना ।
वद लोग पीजे, मार बाध तन छीजे याते
भूलि रुजिगार कहू कुटनी को कीज ना ॥

धरुका के पुरुष उवाच

ब्याह न गौने चाले कौं, परचन परत न दाम ।
याते भलो गुपाल कवि' धारुकान को काम ॥

कवित्त

सदा ही निकार यौ कर सबमें कसरि–कोर,
जाति तें डर न कानि रहति न भूका की ।
आजे कौन नातो, पातो परत न पालो जाय
छाज सब बात, घात आवति बिझूका की ।
'सुकवि गुपाल' हान बस बढ़ि जात, जिन
दामन ही मिल तिय मुघर सलूका की ।
रहत न भूका, मार्‌यो करत सफूका, सदा
याते यह सिर बात सबमें धरूका की ॥

स्त्री उवाच

दोहा

धरूकान को धन परत, कुन कौं लगत कलक ।
जाति–पाति के बीच में, बठि न सकत निसक ॥

कवित्त

बैठि न सकत कहूँ जाति पाति बीच, सादी
गमी औ वधाइन में दीया कर टका कौं ।
'सुकवि गुपाल' पूस पायो करे लोग बेटा
बेटी की न कर काऊ सादी सुनि भूका कौं ।

चतुर्विशो विलास

प्रकृत प्रबन्ध

बाल अवस्था पुरुष उवाच

सोरठा

नृप पन्वी मे जोइ, कनहुँ, न मो सुप पाइयै[1] ।
वालपने ते होइ, मब वैमन ते[2] अधिक सुप ॥

कवित्त

कहुँ अेकटु वात की लालो रहैन, पुमी न्लि माझ फिर अपने में ।
कितमें न्नि आयव, अूग किर्तें, नहि जानि परै कवहूँ सपने में ।
नित भोजन भूपन आछे मिलैं, मिठ बोलत और सम्पपने में[3] ।
कवि रायगुपाल' विचारि कहै यतने मुप होतहु[4] वाल-पने में ॥

स्त्री उवाच

दोहा

तुममु कहत दुप नाहि, कवि गुपाल या वैस मैं ।
त मुनिय मा पाहि वालपने ते जे अनत[5] ॥

---

१ है प्राप्य २ है मु म ३ मु भनी लागन वातन के थपने म
४ है मबने मुप है वानपन म ५ है मैं म नेह के रूपम है ।

कवित्त

जाकू मचलत ताइ[1]करिक रहत होइ
    चचन मुभाइ तन घूरि में मने ग्ह ।
सिष की लहै न, भूप प्यास को रहै न, औ'
    गहै न गुण, पेल ग्रौटपाद के ठने रह ।
'मुकवि गुपाल' जो लराइ लेत मोल वौ'
    उराहने न लाइ जयान करत घने रह ।
मार–धार गारि–रारि और फोर–फार मदा
    यतने निकार बालपन में बने रह ।

तरुनापन पुरुष उवाच

बालपने मे होति ज तरण पणे नहि हात ।
जोवन के सुप सुनहु जन, तिनने वुद्धि उदोन ॥

कवित्त

काहू रोग सरीर सताय सकै न सदा बडो जोम रह तन में ।
तरुणीन सों भोग विलास कर, पुनि भारी भँडार भरे धन में ।
बहु बस बढाय कमाय घनो रुपि रारि कर रिपु सा रन में ।
'कवि रायगुपाल' विचारि कहै यतने सुप ह[4]तरनापन में ॥

स्त्री उवाच

दोहा

तरुण अवस्था पाय, यतने औगुण हात ह ।
तिनहिं सुनहुँ चित लाय, कवि प्रवीन निज कान दै ॥

---

१ है म् ताहि २ मु गन्न गुण खल औग्पाद क ठन रह ।
३ मु जिनन ४ ह सुप हान इन

कवित्त

भर गरवाई, निंदा करत पराई, लगत
न चित जाई कहूँ भजन भलाई मे ।
मद रहै छाई, सिप सिप न सिपाई, बस्यौ
करत सदाई तन तरुनी पराई मैं[1] ।
करन लराई, मार देत जाई-ताई फिर
अडयौ डोलै भारी जिहि जौम अधिकाई में ।
करत वुगई, निस दिवस विहाई, जेती
अवगुनताई, सदा होति तरनाई में ॥

वृद्धावस्था पुरुष उवाच

तरुनापन के गअे जब, वृद्धावस्था[2] होइ ।
जग के जीवन कौं तहा, तब यतने[3] सुप होइ ॥

कवित्त

वडो करि जाने, पुरिपतन[4] कौं मान, मिलै
वठे पान-पाने, ताकी मवही सहत ह ।
करत महाय, दड देत नही ताइ, मन
हरि में लगाइ, सुकरम कौ गहत[5] है ।
'सुकवि गुपालजू' कुटव सुप देपे सदा
कारे महूँढ ते सुप अजरौ लहत है ।
साचकौ गह्त, काम क्रोध कौं दह्त, याते
यते[6] सुप सदा वृद्धताई में रहत है ॥

---

१ मु वमिना करन सग तरणि पराद म २ मु वृद्धावस्था ३ मु
नितनो ४ पुरपानकरि ५ चहत ६ मु ग्तो

स्त्री उवाच

दोहा

हाथ पाँव रहि जाइ, कुटम न रहयौ मानत नहीं।
वृद्धावस्था पाइ, वहा भला नहिं जीवनो ॥

कवित्त

गात गरे जात, सब दाँत झरे जात, सग–
साथी टरे जात, रात मुहति न थाप में।
हात है निबल, जान रहै बुधि बल, तन–
अचलहि हात बहु भोजन के धापे में।
भाग के करे प राग दाबत है आय औ
सुपदी छाय जाय, मन रहतु न आप म।
सब सुख ढाप रूप रहतु न तापै, घर–
थ देह काप्यौ करै आवत बुढ़ाप म ॥

दुरमति पुरुष उवाच

दुमति जिय की जाति पुनि, दुरमति हान अदोत।
कुरवति जाही की वढी, दुरमति ताकी होत ॥

कवित्त

बढै बडी सापि, जाहि जाने लोग लाप, औ
लजीली होइ आपि, बचि जाइ दुरमति ते।
'सुकवि गुपालजू' कलक न लगाइ, जस
जग मैं बढाइ क, बढाय दुरमति ते।

---

१ है यनि मु यनिजाइ

अधिक कमाय चाहै, ताके पास जाइ, पाइ
दरजा मिवाइ, जाइ बैठे कुरमति ते।
बरी इुरमत, काज होत फुरमत, नित
नई मुरवति, लोग राज हुरमति ते॥

स्त्री उवाच

दोहा

मागत हुरमति जाइ के, सदा आठहू जाम।
हुरमतिवारे की जरै, हुरमति राखै राम॥

कवित्त

आपनो मरम जाइ, कहि न सकत, होइ
हिय ही में दहम, सो साझ लौस वारे ते।
मरम की मेवा, गोडो घिरतु रहत जब,
आइ क सताब लोग घेरि करि द्वार को।
सुकवि गुपाल' नाही करि न सकत तव
हरि ही सरम सदा रापत विचारे कौ।
मन जात मारे पाजे जात घरवारे, याते
होत दुषभारे, सदा हुरमतिवारे कौ॥

जसी पुरुष उवाच

दोऊ लोक में सुप मिलत, होत सजन में मन्य।
जिन के जस है जगत में, जीवन जिनके धन्य॥

सवैया

घर मे धनि–धन्य कह् सबही, कबही न तिन दुप दीवत ह ।
सुर देह धर, सुर लोकहि म सुपही सो सुधा नित पीवत ह ।
भरि आनँद म या 'गुपाल' कहै हरि के पद पकज छीवत ह ।
जिनके जस फैलि रह जग में सो मरेअू सदा नर जीवत ह ॥

स्त्री उवाच

दोहा

सहस कष्ट करिकै सदा, लहस रह जो कोइ ।
रह सब हमत जगत में, महजहि जस नहि होइ ॥

सवैया

करते इहि लोक ही में निघट, परलोक मिल नहिं लोवन को ।
परचे धन, कष्ट कर तेई होइ, सो पूरबलेई नसीबन को ।
महज यह हात नहीं कबही पचिके तो मरो क्यों नकीवन का ।
पुरियान के पुयत 'राय गुपाल,' मिल जग में जस जोवन को ॥

कुजसी पुरुष उवाच

ढीठ बडो हाइ पचन में, रुरि वाद कर मो दब न किमी त ।
बोअू र जाचिक आइ सब ढिग, चीजन मागि सब मो लिमी र ।
होइ थोरे बियह्न बडाई वडी, बिगर प काअू क मब र किसीन ।
मुनि हामीन मानों 'गुपाल कवी' जगमह सुपी कुजमी मुजमी न ॥

स्त्री उवाच

दोहा

जिनकों अूक्यो करत सब घरघर म नर नारि ।
याते कुजमी नरन को, जग जीवन धरकार ॥

कवित्त

ऊकयो करे जिनकी सबही, कोऊ जाने नही कँह कौन परे है।
भोगत नक न जाइ अहा, सु यहा दुप में दिन रैनि भरे है।
काहू के काम में आमे नही, जे व्रथा जग में विधना ने घरे है।
राय गुपालजू' जे कुजमी नर, जीवत हो जग माझ मरे है॥

सपूत पुरुष उवाच

पितर त्रपति पाव सबल, बढत धरम धन मूत।
सुजस होत सब जगत मैं, जहँ घर होत सपूत॥

कवित्त

*कुल मरजादो, भारी कर सदा सादी,
परमारथ कौ वादी, पास बैठे न सपूत के।
नोकहि सँभार, परलोकन सँभारे पूरो
पज-पन पार बात बोलें मनो कूत के।
मातपितु सब, नित सेब हरि देव, जाकी
जग जस जैवे, दीनी जाचिक बहुत के।
अति हितकारी, अपकारी कविरायन कौ
भनत 'गुपाल' अेते लक्षन सपूत के॥

स्त्री उवाच

कवित्त

बड पुरिषान की सो निंदा करवावे अेक,
कौडी नहिं छोडे धन परच विभूती में।
चलत न राह, आगे पाछे न निगाह कर,
रिन करि जाय, काज करि मजबूती में।

---

* हि० म यह कविता मुत सति के अतिम कविता है।

'सुकवि गुपाल' उजो नाम नहिं नाम, सब
थोरौ ही कहाव, जम करत बहुती में।
करत कपूती, कुलके कौं करे जूती, यात
यत दुख हातह मपूतहि सपूतो भ ॥

भडवाई पुरुष उवाच

सवैया

नहि काहु सो नेंक घमड कर नमनाई मा ग्रौस विनावतु है।
नित प्यारौ रहै घरबारह कौं पितु-मातहिं मोद बढावतु है।
कोऊ नाम वर नहि कारज में करे थोर ही में जस पावतु ह।
सदामरुजाम अे पोटे दोऊ उडे, काम में काम सुआवतु है॥

स्त्री उवाच

दोहा

नाम वरत सगरा जगत कुजम हात हरि पोत।
कुल कपूत के ऊपजे कुटुम अँधेरौ होत॥

कवित्त

वढिक हथ्यार रन भूमि मे चलाअ नाहि
दीयौ नाहि पन, दुपी दीन की कसक प।
भनत 'गुपाल' कजी ऊचौ कर कीयौ नाहि
जाचक को दीयौ नाहि जस की चमक प।
कविनके मुप कविता कौ स्वाद नीयौ नाहि
रीझे नाहि कहूँ राग रग के असक प।
बूझौं यने कोऊ अवदिनतु दसेक त ये
छन बन डोल कहो काहु की ठसक पै।

दानी पुरुष उवाच

जेते नृप दानीन कौं, होत देन में दान ।
देस दस में जाय जस गावत कवि गुनमान ॥

कवित्त

बडो धन-धाम, जौ' अमर होइ नाम, भोग
भाग स्वर धाम, पुनि पाव राजधानी कौं ।
भोरहिं 'गुपाल' उठि लेत जाको नाम, आठौ
जाम गुनमान, जस गावत समानी कौ ।
बढ बडो धन, लागे सुकृत में मन, करि
दया उपकार उपदेसन अग्यानी कौं ।
दर राजा रानी जग कीरति रमाती हाति
ऐते नृप आनी, सदा दान देत दानी कौ ॥

कवित्त

जाचिक कौ देखि कै, कै हँसि मृदु बोलें बैन
वचन सुनाइ देइ आनँद महान है ।
श्रद्धा करि देइ, सीस माझ मन भद, पुनि
कवि के कवित्त की कहनि कर कान है ।
भनत 'गुपाल' रीति दानी ऐ दयालय की
थारोई सा देनौं औ बहुत मनमान है ।
प्रीति बिन दयो अनगण धन धाम कौ न
प्रीति करि देयो कन मन के समान है ।

स्त्री उवाच

दोहा

दा। गग्ग गतून प भग्गो गग्ग मजूर।
गा देत दानीन का दानी दुख क दूर।।

कवित्त

धरम क गबद गों गतो पग्ग पर–
आए राजी हाट नहीं याता की जितन।
सुकवि गुपाल कछ पाछ जा धन न गहे
धुदुर पपून पग्यो पर लाग तिन।
पुप जोर पाप द्विज–दीन की गगप आप
वडा परताप ताप महयो पर तिन त।
प्रभु गग्य मत बडी सुगम है गति तामा
दान देत दानिन को होत दुख दलन।

स्त्री उवाच

दोहा

दपत स्पो ही रहै, पुनि बोल मन मारि।
अस दानिन के दान को, देवो है धरकार।।

कवित्त

आखिन मे सरम न धरम करम जानें,
श्रुअत सुजस नाँहि राखत है लाज कौं।
'सुकवि गुपाल प्रतिपाल करै दीन को न
कौन गहि रहै, न सँभार परकाज को।

करनी कर न दिा नर मरें कौडो–
 काज, जारि धन धर न कमालो करै नाज कौं ।
कुजसी कुपूत कुकरम के करया कूर
 कायर कुबुद्धी कहा देहै करि राज कौं ।

सूम पुरुष उवाच

धर सूमता गुप मदा, कमू मन की होत ।
दाम लगै नहि् गाठि ती, जग में होत अदोत ॥

कवित्त

मांगि न मरत, रोजू जाके दरवाजे जाइ
 दवजर दमरा दाढी गमी की रसूम कौं ।
काढत 'गुपाल' नाम दाता ते मरस अेक
 नाही सब सुप करि गाये छाम छूम कौं ।

जुर्‌यौ धर्‌यौ रहत कपूत औ सपूतन की
 परच न हान धन गेरो कर भूमि कौं ।
जग में मलूम कर, नाचिक न धूम, अेते
 होत गेम–गाम सुप एत सदा सूम कौं ॥

स्री उवाच

दोहा

मया मो मरि जाति, कब दमरी के नाम ।
यात भूनि न ना.जिय, सूम मट को नाम ॥

कवित्त

नाहक बुजरा परखावा जगत माझ,
नाम धरखावत कुटम पितु माता कौ।
गारी पाय लेत, गोली देत प्राण दान, ताकूं
नाम नहीं लेत, उठे जावी परभाता कौं।
कहत गुपाल भयौ नूग को मनूज कहो-
परधं-पपावं रहौ, मारि गोत नाता कौं।
करत रहै गाता, पर आदर पाता, तनू
अंध परिजाता जयौ मूम अर नाना कौं॥

मजूच पुरुष उवाच

सवैया

बठिकैं पचपचायति में रारा बातन ही की करयौ धर रन।
घाट के घाट म ाम नही गदा ागगुपान नफाहू में पनैं।
कामके काजें अघीन रह भअ कात प परि रह नहि भल।
औपनें जान न देत है सात, न और म जादक मूगर मन॥

स्री उवाच

कवित्त

आछे कर पैं बुरी ममच भलो प्यार करे प निगार नरीन।
जा नुपकार का माने नही कुपी टीन कौ दपि दया म न नीनैं।
झूठा छनी निरद कपटी मननार ादम क ताहु न धीन।
आपनौ चाहै भलौ जौ 'गुनार तौ भूभिरे तस कौ मग न कीजै॥

भाजीगारा पुरुष उवाच

काट के घाट में आमें नहीं नित सेपिन कीं बहु मारत रीते।
भानिजी, बेटी, फफू, भगिनी नहि यार सनाअु सों रापत रीते।
दैनो नही, सदा लेनो ही जानत, पात कमातहि में दिन बीते।
आपसो औरह जानें गुपाल सो अैमेन ते कहो क्यो हम जीते ॥

स्त्री उवाच

सवैया

पाय पवाय सकेगे कहा, जे सदा निकरे तिन के मुप ना जो।
हूवरे भूमरे ते जे अुदास, दया अुपकार के जात न घाजी।
भक्ति औ' भावनहीं चिनक इक कौडी के काज करें नहिं हा जी।
'रायगुपालजू' देह कहा रूपु और के देत जे मारत भाजी ॥

सत्यवादी पुरुष उवाच

कवित्त

होर हरि रत्ति क्वो पाव न अगत्ति आवी
जिगरें न पति नय मानत अराच त।
सुकवि गुपाल' जाकी बढ परमत्ति मन
तत्व मैं न्मात सदा रहै जत मत्त त।
दीयो न दत्त जासो मव टरपत्त निज
धम रहै हरा वग करे सुभ गनि त।
नउ जस नति, अन्गति रह सुमित मुज
मिनति मुक्ति सय थादिन कौं मय ते।

स्त्री उवाच

दोहा

मत्य काज नीच घर नीर भर्यौ हरिचंद
सत्य काज भेजे वन राम छोडि गद्दी को ।।
मत्य काज करन ने कुडल कवच दजे,
सत्य काज धमसूत सहे ~ष्ट जादी को ।
मत्य काजै वलि दै त्रलोकी कौं पताल गजे
सत्य काजै जगदेव दीयौ सिर आदी को ।
कहत गपाल' जेत सबही जुगादी बडे,
उट कष्ट होत सत्य साध सत्यवादी को ।।

झूठा पुरुष उवाच

कवित्त

जहा जाइ बैठ तहा ,ादर अनेक कर
पूछ घने आय माल मारयौ कर भोले त ।
सुकवि गुपालजू विस्वास कर ताको लोग
भोग भोगयौ करै मतलब काढि ओले ते ।
मानौ बनि जात ताइ आमें क.ू घात, कावू
किय पाछ हाथ, कहा करै कोजू पोले त ।
मत्य वालिवे त जेते कढत न काम अव
जेत काम कढत असत्यहि के वोले ते ।।

स्त्री उवाच

सोरठा

मिथयावा‌र्‌ता घूत, कहत लोग जासौ सर्व ।
जोरन झूठ अवूत ते नर नरकहि पावही ।।

कवित्त

-घम यस हानि, औ सतानि होत यामें, भोगं
दुप आनि प्राण जात वात वात बोले ते ।
जहाँ जहाँ जाय तहाँ तहा जाय झूठो होत,
होत बडो पाप, परताप ताप तोले ते ।
मित्र नक जात, औं अवासो बैठि जात, सत–
सगति करैया हाल मारयो जात भोले ते ।
कहत गुपाल कवि' पचन के बीच बहु,
झूठन को होत दुप ऐते झूठ बोले ते ॥

सुतसतति पुरुष उवाच

जागत पारि कुटुव का, जग जस हान विख्यात ।
गृहस्थाश्रम मुत भय, यतने सुप सरसात ॥

कवित्त

चलत है नाम याते पितर त्रपति होत
बसह बढावें करवावें जस भूजी है ।
जाके काजे केते राज रिपिन तपस्या करी,
है करि अधीन देई देव तन पूजो ह ।
जगत में या बिन अनेक सुप हॉइ, तऊ
फीको लगे धाम–गाम–नाम–चाम हू जो है ।
भनत गुपाल याही मनिषा जनम में
पदारथ रतन धन सुत सो न दूजो ह ॥

---

१ है मे नही ह । २ है चम

स्त्री उवाच

दोहा

सुनि कुबडाई¹ जगत में लक्षन देषि सपूत ॥
मात-पिता रु कुटब के तब दुष होत अभूत ॥

कवित्त

रहत विरान नही पावत कमान, होत
पच्छ अप्रमान, पान पान पुन्य दान मे ।
सुकवि गुपाल' दुष पावत ह प्राण तब
करत कपूती कहुँ सुनें निज कान मे ।
होत जब ज्वान बस परत विरान जाके
पालत मै आनि नक भागत अठयान में ।
घट बल ज्वान, तिग बिगरे निदान, आनि
होति अती आन, सदा सुत की सँतान में ।

कवित्त

पितर अभूत-भूत पूजने परत केते
देई दव ध्यावत में, ससें रहें आण क ।
वद-स्यान-जोतिसी ही पाये जात घर
बहु परच रहत जावे सदा पुन्य दान के ।
जीवन जनम जाको पारनो कठिन सब
छोडन परत स्वाद आछ पान पान के ।
'सुकवि गुपाल' कहु होत नहिं जान तिय
बिगर निदान होत सुत की सँतान के ॥

---

१ है ह ति बनाइ
२ है प्रति मे यह नही है ।
ग्मक बन्ते 'सपूत का दाहा ह । 'कुल मरजानी (कवित्त) ।

बेटी की सतानि   पुरुष उवाच

कुल कलक छिपि जात सब, नाते घर घर होत।
पाप कटत सब देह के, सुता जास घर होत॥

कवित्त

जान घर वार, औ' सजन आमै द्वार नर
नारिन के पापनि की होइ जाति हत्या है।
बिचारति नाम, औ' पवित्र कर धाम, करवावे
पुन्य काम, धमहेत अनगन्या है।
'सुकवि गुपाल' कैई ठौर होत नाते, बडे
भागि होत जाते, ताते दूजी ना धरन्या है।
मानिवे को मन्या, कुल तारन तरन्या, भागि
करन को धन्या, सो बनाई विधि कन्या है।

स्त्री उवाच

दोहा

जावे जीवत जनम लौ, परत न कल दिन राति।
दपत बेटी को सुगित, चिता में दिन जात॥

कवित्त

जनमत सोग, जन्म जीवत लौं राग, घर
वर चाहै जोग, मता दैनो परै मेटी कौं।
चलत में रुवाव, पर पूपो करि जावै, धन
परायो कहाव, चित चिंता रहै टेंठी को।

कवित्त

देह धन छीन, हित कुटम ते हीन, सैनी
पर सवही की पूरी परत घमाजे ते ।
जाइ न सकत, पाय काठ में लगत, यरझेरो
होन जीवत लों वस मे बढाजे ते ।
नौन-तेल-चुरी-पुभी आजे औ' गजे की लाली
रहै दिन गनि अग लगत न पाजे ते ।
'सुकवि गुपाल' हात परच सवाअ सदा
ये ते दुष होत ह तिया की व्याहि लाजे ते ।।

सुहाग पुरुप उवाच

बाढ़त हित नित कुटम सौं, वृद्ध होति पिव-सार ।
पिय के सग सुहाग ते, सुष हाइ अपरपार ।।

कवित्त

होत रहै सदा सुत--सुता के जनम जामें,
भूपन वसन भोग अवगाहियत ह ।
'सुकवि गुपाल' पिव-सार ससुरे में नित
जाके पीछे सवही के मन भाइयत ह ।
लाड-चाअु हुक्मरु आदर अुकर मन
मान मे गुमान मे न काहू लाइयतु है ।
प्रीतम के संग, अनुराग वस भये वडे
भागिन ते जग में सुहाग पाइयतु है ।।

स्त्री उवाच

दोहा

दव विवाह करि क कहू, तनक करै जी भेद ।
अे हवाल होइ जास के, पावै अनगन पेद ॥

कवित्त

अेक जच पाअु, अेक चुटिया को अचै, निस
चारि जाम राति जे हवाल रहै जाई तैं ।
जाके नहि जाइ, सोई जूती लय ठाढी रहै
फजियत चारे अैमे भयो कर ताई तें ।
'सुकवि गुपाल' बनि दुबिज को बेकरातो
कनहु को मारयो करि सकत न काई ते ।
दै करि दुहाई, हत्या देनि रहै ताई, पालो
पार नाहि काइ, राम भूलि ऱ्वै नुगाई त ।

रँडुआ पुरुष उवाच

जायवे को सब कौं दिपायौ कर भय जासौं
नित नई नारि हित रापति निहारे ते।
लालें मेटै सारे रोमें लरकान वारे, याते
होत सुपभारे रँडुआ कौं घरवारे ते॥

स्त्री उवाच

दोहा

रोटी-पाटी त्रास दुप, अर कलंक लगि जात।
रा बिना रँडुआन कौं, रहत दुष्य दिन राति॥

कवित्त

हाथ नियें लिगि नित तोता सौ पढायौ करै,
नित प्रति याम घर होत भडुआन कौ।
'सुकवि गुपाल' घरवारी न पत्यारी कर,
मर्यौ परै मान, जावे देपि घरवान कौ।

त्रास वस न्यारौ, कहै क्वारौ हत्यारो टोना पाय
क हजारौ पात को द भडुआन कौ।
नगत न नाम, औ चिढायौ दर गार भेते
रह दुप धाम तिय बिन रँडुआन कौ।

राँड के सुप पुरुष उवाच

वन्दावनि करि क रहै जा नी नर कोर।
वाही त या राड कौं, पना सुवेरा हाड॥

कवित्त

मायके औ' सासुर के लीयें रह मन निन,
वह साई तोर्ग ग्रोझ रहै घर थाप को।
उपज भगति, ज्ञान-ध्यान मे लगति मति,
जप-तप-तीरथ कर सो लगै आप को।
'सुकवि गुपाल' होइ मरद समान सब
राखें ग्नि-कानि मिटि जाव दुप जाप को।
घर ताप धन रह्यो वरै, ताप,
निरदुद हानि भापै, सुख पाइव रँडापे को।

स्त्री उवाच

दोहा

घर घर में ररक्ति फिरत कोउ न वझत ज्ञान।
दव आँखिन बिन राड क सकल सुष्य मिटि जान॥

कवित्त

विस्वास न आव जा' अुपाधि न उठावै, सवै
नीचौ ही दिपाव दिनराति जात डरिय।
'सुकवि गुपाल' जासो जीतत न कोऊ कहूँ,
मानति न नैंक ताको केतो पचिमरिय।
चढत रडापो, जब वदति न काहूँ, विनारे
पै डाटि सकै कौन ताको अेक धरिय।
माडिबे को भांड रहै भिरिबे को साड, याते
भूलि काहू राड को भरोसो नहि करिय॥

कवित्त

होइ जो पै लाप की वहाव तऊ पाप ही को
मानत न सापि डर रहत सगापे को ।
भोजन न भाव दिन कुढत ही जावै सुप
सेज न सुहावै, न सँभारि सकै आपे को ।
'सुकवि गुपाल' मन रापनो कठिन, जाकी
रापैं लाज हरि हँसि बोल लगै पापे को ।
पायौ कर टापैं, पच्यौ जाइ नहिं तापैं, कहयौ
जात कहु काप, दुप अधिक रँडापे कौ ।।

मतेई पुरुष उवाच

दोहा

सब सौं निडर रहत सदा, कुल को करत सुघात ।
सब में सिरें रहै सदा मतेईन की वात ।।

कवित्त

माला रहै हाथ, जाकी सेर रहै वात, छोटि
अुमरि ते जात ही में देपै सुप चोगुनो ।
जाकी झूठी वात, साची माननी परत निज,
साचीहू कौं झूठी सुनि करनों न घोपनो ।
'सुकवि गुपाल' जाको मोधनो रहत पुनि
करनो परत जाको अदब सु नौ गुनो ।
माननो परत, औगुनो ही गुनो सो गुनो, सो
तेहा होत याही ते मतेइन कौ सौ गुनो ।।

स्त्री उवाच

दोहा

बुरो करति पिवसारियन, बुरवाई है बौत।
मतेईन को अत में, यात दुप वहु होत॥

कवित्त

हितहू करे पै जाको अनहित माने सब,
वर–भाव ठानें, दात धरें रहै तेई कों।
'सुकवि गुपाल' रहै सबते अलग, नाग
अडामनि जसे तासों सूत नहिं केई कों।
पाछे की न आस, अघ काटे ज्यों फरास, नहिं
जाको विसवास, सुप रहत न देही कों।
बूझ न वतही, ताकों डारत हत ही याते
सबके मतेही, बुरो जनम मतेई कों॥

सौतेला : पुरुष उवाच

कवित्त

सुत ते सरस सुप दीयो करै सदा, बहु,
दवत रहत सो सँभारै भली मौत को।
मान औ' गुमान, ताप ठस्सा बडो रहै, बडी
ठसक सों रापै हित करि करि बौत कों।
'सुकवि गुपाल' जाकी मनपति मानें घनो
कहै सोई होइ सब देख्यो कर कौतिको।
मानें जो परौत, धन जोरत अकौत, याते
केते सुप होत, ह सौतेलन ते सौत कों॥

स्त्री उवाच

दोहा

दूसरे को घर में न क्वी देषि सकै, सुप–
आवै सोई बस सुप चाहत अकेला कौं।
होतु है गुपाल' सव माल को अधत, हाथ
परे पाठै दाम, द न सक्त अधेला कौं।
करि कै क्लेस, जर जमन न देइ, वौ
अुडायो कर धूरि, कुनैं काढै करि भेला कौं।
पारत पटेला, औ' मचाय रहै हेला, याते
सौति ते सरस साल सालत सुतेला कौं ॥

सौतिके पुरुष उवाच

सवैया

दुप औ' सुप मैं दोअू अेक रह, अति सुप्प लहै तन ताप गयो है।
बहु बस बढै अपने पति कौं, उर मे अुपजै अनुराग नयो है।
'रायगुपालजू आनंद में अुर में अुपजै अनुराग नयो है।
सुम्मति सो जो रहै घर तो सुप, सौतिन को नहि जात कह्यो है।

स्त्री उवाच

सेज बटावति आधी सदा, नित देषत ही हिय जाति जरी है।
राषै न हेत सुता सुत सौं, सुप वाय कछू ताको चाहै मरी है।
प्रीतम के संग काम–कलोल की ताकौं सुहाति न नेंक ररी
'राय गुपालजू' या जग में नित चूनहु की होइ सौति बुरी है ॥

कातनहारी पुरुष उवाच

कट कटाक्ष कटि ग्रीव नवि, छवि सी गतिसो लेति ।
चातुर कातन-हारि की सबही सौं रहैं हेत ॥

कवित

दिन कटिजात मन ऊद्यम में लग्यो रहै
मौसर मरें न पास पैसा रहै धूर कै ।
'सुकवि गुपाल' पीढ़ी पलिका पै पौढ़ि, घर
परच चलाव काम करत सपूत कै ।
आठऔं दिना की सदा पठ करि करि ताते
अलन चलन कर्यो करै धिय पूत कै ।
देह मजबूत, वस्त्र वनत बहुत सदा
सबही सौं सूत रहै कातन में सूत कै ॥

स्त्री उवाच

दोहा

जोरत तोरत तार कौ, त्यौर मद परि जात ।
कातन कातनहार कै, टूटत हू कटि हाथ ॥

कवित्त

मावस औ' पून्यौ, ठिक ब्याह औ तिहार वार
अक्तो रहत पूजै दवी औ' अमूत के ।
'सुकवि गुपाल' पैठ करनी परति त्रिय
पुरिया के पुयन ते दीय ब्रै धून के ।

पाय जात कोरिया पडेरे औ' मराफ नफा
पटै जब दाम हाथ मेजै मजबूत के ।
रोमे धिय पूत, देह दूपति नहूत, दुप हातह
अकूत बहु कातत में मूत के ॥

पनिहारी पुरुष उवाच

कवित्त

सादी गमी व्याह औ बधाई ठिक टेहुले में
जीवका रहति सब दिनन तिहारी को ।
घर में 'गुपाल सानो जिगिस आइ रहै बड-
सौरी लीयौ कर भली स्यारी-अनहारी की ।
पनघट घाट प निजारे मारयौ करै बोली,
ठोली मार्यौ करै देह रापति तयारी की ।
क्यारी मधे प्यारी, देह रहति सुपारी, बडी
होति मनुहारी, पानी देत पनिहारी की ॥

स्त्री उवाच

कवित्त

कर कटि जात औ कमरि रहि जाति ठेक
परति गुपाल सिर, धर घट भारी है ।
लगति चपेट, आद जाति चोट फट,' डर
ठेपर रपटिबे को कीचर अँध्यारी है ।
बोली-ठाली सहैं, नित पर-घर वह, वस्त्र
सज को रहै न रहै राति दिन प्वारी है ।
होति विभचारी, देर लग पाति गारी, तीयौ
पनन की हारी, सोई होति पनिहारी है ॥

पुरुष उवाच

कवित्त

झुकि के भग्न की वरनि नहि जाति छवि
दवि जात रति सोभा देपि सुकमारी की।
अंचत रसी के उरवसी के से भाव कर
भुज की डुलनि आप चलनि अयारी की।
'सुकवि गुपाल' नाभि त्रिवली ललित जाकी,
कचुकी में कुच अग ओढ नील सारी की।
उस करि वारी, फुलवारी में निहारी मन
गयौ पनहारी, अदा देपि पनिहारी की॥

कवित्त

लाबी सटकारी सुकमारी वारी वस जाकी
ताके कुच पीन कटि छीन व्रजनारी की।
नैन सफरी से, बैन मधुर सुधा से, उर
कामहि जगावै, सारी ओढि कें किनारी की।
'सुकवि गुपाल' माल मोती मनि मानिक की
वानिक की सोभा, हिय हरन हमारी की।
वैस दरि वारी, फुलवारी में निहारी मन
गयौ पनहारी, अदा देपि पनिहारी की।

इतिश्री दपनि वाक्य विलास नाम काव्ये प्रकृति प्रबध वणन नाम
चतुर्विशा विलास

पचविंशो विलास

अथ परमारथ प्रबन्ध वर्णन

दोहा

चारि वरनआश्रमन के जे पाऐ रुजिगार।
प्यारी के आगे सवै वरने[1] 'मुकवि गुपाल'॥

सुनिकैं तियपरवीन ने वुधि वल दीनी डाट।
सबमें औगुन काढि कें ते[2] मव दीने काटि॥

असो या मसार में मिल्यो न अुद्यम कोइ।
जामें दुप्य न अूपजे, सुप्य सदा ही होइ॥

तव हिय हारि 'गुपाल कवि', कही सु ती सौं[3] वात।
अपनी वुधि वल ते तुही, करि[4] अव कुछ विप्यात॥

तव गुपाल कवि की तिया, करि विचार मन माहि।
वरनन कीनो सुकवि सौं तामें दुप कछु नाहि॥

स्त्री उवाच

दोहा

कृत्य कुटम के काज कौं, करत मदा सव कोइ।
जो जाकौं नीकौ लगे, सोई नीकौ होइ॥

---

१ मु सकन वर्ण २ मू सुउमे ते सुख काढिक ने।
३ है नारि मो ४ है कहो करि

पुरुष उवाच

कवित्त

झुकि के भग्न की वरनि नहिं जाति छवि
दवि जात रति सोभा देषि सुकमारी की।
अचत रसी के अुरवसी के से भाव कर
भुज की डुलनि आप चलनि अयारी की ।
सुकवि गुपाल' नाभि त्रिवली ललित जाकी,
कचुकी में कुच अग ओढ नील सारी की।
वस करि वारी, फुलवारी में निहारी मन
गयौ पनहारी, अदा देषि पनिहारी की ।।

कवित्त

लाँवी सटकारी सुकमारी बारी बैस जाकी
ताके कुच पीन कटि छीन व्रजनारी की।
नैन सफरी से, बन मधुर सुधा से, अुर
कामहि जगावैं, सारी ओढि कें किनारी की।
'सुकवि गुपाल' माल मोती मनि मानिक की
वानिक की सोभा, हिय हरन हमारी की ।
बैस दरि बारी, फुलवारी में निहारी मन
गयौ पनहारी, अदा देषि पनिहारी की ।

दतिश्री दपनि वाक्य विलास नाम काव्य प्रकृति प्रबध वणन नाम
चतुर्विंशा विलास

पचविंशो विलास

अथ परमारथ प्रबन्ध वर्णन

दोहा

चारि वरनआश्रमन के जे पाजे रुजिगार।
प्यारी के आगे सवै वरने[1] 'सुकवि गुपाल'॥

सुनिकें तियपरवीन ने वुधि वल दीनी डाट।
सबमें औगुन काढि कें ते[2] सव दीने काटि॥

असो या ससार में मिल्यो न उद्यम कोइ।
जामें दुष्य न ऊपजै, सुष्य सदा ही होइ॥

तव हिय हारि 'गुपाल कवि', कही मु ती सौं[3] वात।
अपनी वुधि वल ते तुही, करि[4] अव कुछ विष्यात॥

तव गुपाल कवि की तिया, करि विचार मन माहि।
वरनन कीनौं सुकवि सौं, तामें दुप कछु नाहि॥

स्त्री उवाच

दोहा

कृरय कुटम के काज कौं, करत मना सव कोइ।
जो जाकौं नीको लगै, साई नीको होइ॥

---

१ मु मकत वर्णे २ म सुग्रम ते मुख काढिके ने।
३ है नारि सौ ४ है नही करि

सव अुत्तम मध्यम सु वै सव निकृष्ट रुजिगार।
'कवि गुपाल' परवीन नर जानत मन को सार॥

यक स्वारथ रुजिगार यक परमारथ को जानि।
इक धन प्रापति दूसरो, हरि मिलिबे को मानि॥

जिनमें करिबे के जिते[2] तुम न कह्यो न[3] अेक।
व्रथा करयो वकवाद तुम, वांधि आपनी टेक॥

जे लौकिक रुजिगार ते[6], तुमन करे विख्यात।
परमारथ के हू जिते तिन सों रहि अग्यात॥

पुरुष उवाच

परमारथ रुजिगार जो, वरनि सुनाओ मोहि[1]।
तव तेरी सिष मानि कै, करु जाय मैं सोइ॥

स्त्री उवाच

जिय जोख्या को ज्ञान नहिं, जामें नफा अनक।
प्यारे सो सुनि लीजिय, हम सा सहृत विवेक॥

परमारथ पुरुष उवाच

कवित्त

पूजा, पु य पाठ परि पूरन प्रगट प्रेम
पजपन पारि कै प्रभू के पद परनो।
ज्ञान, ध्यान, दया, दान,[4]दीन-सनमान कथा
कीरतन-व्रत-नेम तिया[5] सग ढरनो।

—[1] है यह दोहा है परमारथ रुजगार जा वरनि सुनाओ माहि।
तव तरी सिप मानि के करू जाय म सोहि॥
२ है म ने ३ मु न ४ मु है ५ म से ६ मु मोइ ७ मु मरि
८ मु करिहै ९ है मु नही है

नामदृढता

मम भक्ति नाम तीनि काढ के सरुप सदा
नाम ही को थाप्यो तिन कहि निमि काम के।
तिन के विधान तीनि बार कहने में भिन्न,
गति कहने में कही कोऊ नहि काम के।
जप-तप-व्रत-नेम-दया-दान-सौच-सील
सरधादि साच सुभ कम जे अराम के।
वेद औ' पुरान, सिमिरत माझ कह्यो सब,
जतर विरथ बिन लीयें हरि नाम के॥

कवित्त

करत करत जग्य करत में चूक जाक
सुमिरन कीयें सब पूरे होत काम है।
जप-तप-जगय-क्रिया आदि कौं मे घटती जो,
पूरन तूरत होत सुमिरत नाम है।
'सुकवि गुपाल' ताको पावन न पार-वार
नेति नेति करि वेद गाव गुन-ग्राम है।
सदा सुप-धाम, सब व्यापी निसकाम, अ०
अैसे हरि अच्युत को करत प्रनाम है॥

दोहा

सब बातन को सुमिरि कें जाते जपियें नाम।
भगति मुकति पाव सुनर, लत नाम निसकाम॥

कवित्त

होइ न विराग जउ लग नर मग, तथा
यथा श्रवनादि भद्दा जब नौं न गत है।
देवता सरव भूत नर-रिषि-पित्र पचजग्य
के जे पूज्य जग माझ जेत जन मैं।

तिनको रिनर औ रिनिया न होत कर्बौ
राज तजे मेर मुनि मानि ल वचन ह।
सव परकार लपि, सरन की जागि सव
कमन को छाँडि मैं मुकुद की सरन ह।।

सवैया

त्यागि के आपने कमन को, हरि के पद पक्ज को भज जा है।
भक्ति मे जो परपक्व न होइ, मर कहुँ ज म ल जाइ के सोह।
हनुमान विभीपन आदिक जेत, कह्यो तिनकोंका बुरो कछु ओहै।
आपने कमा को कर जे, हरि को न भज तिनको कहा होहै।।

गीतक

गीताहि की सुनि वचन मम या जग्यको जगयासिजो।
कम काडरु वेद की उल्लघि करि बर्ते है सो।
वतमान जु त्रगुण में नर कम-काँडह करत वो।
यह ज्ञान काडरु कम ते अजुन तू त्रगुणातीत हो।।

कवित्त

बिरक्त भक्ति नाा जोग अधिकारीन
आदि मास्त्र वन मुनि ममन करामनों ।
ममन के त्यागे रति भई हरि माझ, ब्रह्म
ज्ञान उपदेसि तिने ब्रह्म दरसामनो ।

नही ज दुजाती स पै विरकत है कै नगे,
कम नान माग तिन भक्ति में लागमना ।
समें समें माय नित गुर को प्रनाम करि,
नाम कीरतन हरि गुनन को गामनों ॥

अरिल्ल

मेरी भगति ते विमुप है व मास्त्र कों जो पढत है ।
न्याय माग्यादिकन में सो डूबिकें क्या करतु है ॥
तिन कों न नानर मुकति होहै महम जन्म प्रजत में ।
जे राम हृदय के राम मन्त्रन ममझि त्रै जिय अन में ॥

सवैया

करि पूरब घूमिका में जो अुपासना, अूपर घूमिका पामनीं ह ।
यत्यादिक बैनन भक्ति-हीं नहिं, भक्तिर जानन आमनो ।
यह,भक्ति महात्मयें ज्ञानहिकी कही घूमिकायो जो वढामनो है ।
गुरकी, हरि की, करि भक्ति 'गुपाल' समेप हरीगुन गामना है ।।

ब्रह्मविचार

जाकी साक्षात बुद्धि बरतति तत्व छूटै,
पापन तें जीव दृष्टि परै तह ठार मै ।
कीनो है सनान सब तीरथन माझ, औ'
महस दस कीनें मानौ जगय तहवार मैं ।

पूजे देव सकल प्रथी का दान दीना सब
जानैं निज पितर उधारे है सँसार में ।
पूजिवे के जोगि जोई जाकौ थिर व्है क अेक
छिनहूँ लगत मन ब्रह्म के विचार में ।।

कवित्त

स्वपच प्रजत याही बात ते बडो तेरो नाम
बरनत अग जिह्वा के ठिकाने में ।
करे ह गुपाल जिनहीं न तप होम सब
तीरथ सनान जते प्रथी में बपाने ह ।।

तृतिया कद सिरी भागवत माझ्यौ कपिल-
देव प्रति कही देवहूति मानें है ।
मरही स वर्ण जिन पढि तीन मत्र बेद
तरो नाम जग में गहन कर्यौ जाने ह ।।

कवित्त

पाप करि भारी ध्यान अच्युत को धरें, अेक
छिनही में तुरत तपस्वि होत पीन हैं।
पापिन की पगति को करत पवित्र पुनि
गंगादिक तीरथ पवित्र करें जीन है।

कुलहू पवित्र जाको जननी कृतार्थ औ'
वसुधरा हू भागवती भई जगजीन है।
ज्ञान जाको पूरन औ' सुधको समुद्र सोई
ताको चित भयो परब्रह्म माझ लीन है।।

कवित्त

कुलहू पवित्र जाकी जननी कृतार्थ यह
प्रथी पुन्यवत भई जाके अनुराग ते।
सुरग में सुस्थित पित्त भअे जाके ध्रय
जा कुल में वइष्णव भयो सुत भाग ते।

यज्ञ आदि सकल श्रुती के बैन सुनि कवी
कीजिरे न ससय गुपाल यह जाग ते।
ज्ञान जोग भक्ति जोग मे है प्रीति जाकी दढ
दोष होत काहू भाति कम के न त्याग ते।।

कवित्त

दयिवे कै जोगि यह आतम सवा यो
कीजियै वेदांत की श्रवण दिनराति है।
भक्ति ज्ञान जोग का कही जो नेम विधि जाग-
वलक मईनेई सौ कही यह बात है।

पक्ष म जा प्राप्ति भापादिक करिवोध जे
छुटावत है तिन त न आव कछु हाथ है।
सुकवि गुपाल' ज कहत जस लोग सदा
जिनकी कहनि जानि लीज पक्षपात है।

सवैया

सब को नहिं वेदर तत्रन को अधिकार कह यो सुकहू जिय है।
तिहिते सबके उपकारथ को नाम मनहि भाषा म कूजिय है।
मुनि समत को रहता त कवी यर भाषाते सिद्धि न हूजियै है।
निसकटक मारग है गा नहीं सु सदा हरिको तहा पूजिय है॥

नामभाव

रिसके तहि को करिके जा कहै, अथवा परिहास कै जोवत है।
पद पूरन अर्थ के काज कहै रि, कहै कहुँ जागत सोवत है।
अथवा करि त्वन रि कहै कि कहै रिस में जब भोवतु है।
यह जगहू तेगें लिय हरि नाम, सु पापन ते सदा पावतु है॥

कवित्त

चक्रायुध हरि जो है ताके त्रित नाम को
सदा सरवेत्र कहै दिन औ रयनि को ।
कीत्तन जिनके में होति न असुचि आप,
होतुह पवित्र कर्णवालो सबयत को ।

हैव अपवित्र, वा पवित्र सवत्र सदा, हातु है
अवस्य औ गी प्राप्ति सा कथन कौं ।
बाहर औ भीतर मों हातुह पवित्र सोई
सुमिरन करे हरि कमल-नयन को ।।

कवित्त

मरती वपत अजामेल अधमी जो नाम
पुत्र मिस नैर्कें गयो भगवत धाम है।
रहनो कहा है ताको श्रद्धा करि कहै याते
भागवत मांझ कह्यो निज मुप स्यांम है ।

कोऊ कमलेछ काहू सूकर के मारें कडी
मरतो वपत माहि नार्यो या हराम है।
चढि कें विमान पर वैकुंठ धामहि को ह्–
व चत्रभुज चल्यो गयो हरि साम है ।।

कवित्त

दक्षन दिसा मे सब लोकन के मान्न, यह
　　है रही है विदित कथा सो सरवत्र है।
नाम के महातमें भादादिक करि कुछ, होत
　　नहिं घाटी यह सुनतहिं चरित्र है।

कानह र कन्हैया काह् कान्हुआ कन्हरहु
　　आदि नाम लीयें पोइ देत अपवित्र है।
भाषा माझ बिगर्यो हुआै भी 'श्रीगुपाल' नाम
　　सब जग जीवन कौ करत पवित्र है॥

कवित्त

जोप देववानी कौ बनाइ करि कहै तोपे
　　भाषा करि कहनौ परम पुन पुन है।
अरथ करत सब जनन कौ बोध यान
　　दूहनौ परस्रम सुरोन जाके सुनहु।

वेद कौ अरथ जो प भाषा करि कहै तारे
　　या वार सुनै हान श्रवन सबन है।
कहत गुपाल अथ समुक्त हाल सदा यान
　　यह भाषा मान बडो हाम गुन है॥

सवैया

भाषा की न ही प्रमा ता है, मसक्रत्तिहि कौ जो पै सारक है।
अैसे होइ तौ जोनो औ धोधेके सासत, प्रमानो कहया विचारक है।
याते वेद ही अुत्तम सच्चाह सास्त्र, सुताहो कौ अय सुधारक है।
सो 'गुपाल कवी' करिमाषा कहूयँ। सगरे जगकोमोई तारक है ॥

कवित्त

साक्षात निज मुप कही श्रीगुपालजू नै
मास्त्रन के माझ निज सहित समाज है ।
सदा प्रीति करि सालिगाम द्वजि साधन कौ,
वेद विधिवत पूजौ त्यागि लोक लाज है ।

रामनाम जप करै तुलसी की माला धारि,
जपौ दिन रैनि मब पूर हात काज ह ।
समुद स सारहि के पार करिवे कौ, और
आसरो नहि है राम नाम ही जिहाज है ॥

शिक्षा

मब जीवन पै गु मया करनी तहँते ल प्रभू कौ रिझामनो है।
करते यह दे२ कौ पानन जा यह ऊमर कौ वरमामनो है।
यह मे वृथा जन्म वितावत क्या, कवहूँ कछु काम न आमनो है।
गिरती भई काचिय भीतिहि वा, गु न्रया यह चूनो लगामनो है।

चतुश्लोकीभागवत

सवैया

चतुश्लोकी श्रीभागौतिमैं सो कही, भगवाननैं ब्रह्मासौं निजरानें।
मेरो यहै परम गुह्यजुग्यान, विरागहि वे मु गम वना त।
रहस्य जो भक्तिनहु तावे सुसजुत, ताही तें तू मनद सुनि यातें।
ताही के अग जे साधन ह, सब मेरो कह्यो सुनि कै गहि यानें।

सरवाग में व्यापक हो जित तो, तित सच्चिदानन्द हो निगह तें।
स्याम सुंदर रूप औ सचिदानन्दहि, ह गुन रूप सम गह तें।
तू यकागहु ते मन द यह म, सुनि व्है ह कल्यान सु मिगृह तें
सदा तैसोई तो को य तत्व विज्ञान, सुहोइगो मेर जनुगृहतें ।

अुतपत्तिहि के पहले ते सदा, सब आगे ते मा ी की सत्य कह ही।
कछु मेरे ते अन्य सथूल औ' सूक्षम, कारणहात भअे सव जेही।
जग नासह वाद भअे पर में, जग में जोहै सत्य सो ओरन केही।
सब के सुनि सुद्ध के कारनको, अधिष्टान सदा यक सत्यहौंमैंही ॥

जो नही है तिहुँ कालहु में, जग होत प्रतीती सबी को सही।
प्रगट मेरो सत्य सरूप सदा, नहि दीसत माया सुजानि यहो।
अनहोते द्व चन्द्रमा आदि अभासतें, भासत जस किसी को कही।
मेघ में ढाक्यो भयो जस सूरज, तसें सुभान मे होत नही ॥

महा भूतोरु भूत सबौन में मैं, जल औ थल आदि प्रवष्टि महीं।
तिसको तिनके कछु भिन्न न हौं, नेते होत नहोहै प्रविष्ट जहीं।
तिसको कछु मेरे ते भिन्न न हौने ते, हौत प्रविष्ट क्वौ सो नहीं।
सदा तैमें तिनो महा भूतान में, सत्ता रूप होते हो प्रवृष्ट महीं।

कवित्त

आतम तत्व ज्ञान की अपेक्षा है जिने करि,
अन्वै वितरेक सब जगो मा यो चहियै।
सवदा जु सब ठौर सच्चित सरूप घट-
पटादिन व्यापक सु असो ठायो कहिय।

मोई 'श्रीगुपाल' म ई सब अवस्था माझ
जाग्रत औ सुपन सुसुप्त आयो चहियै।
साक्षी रूप हो करि कै व्यापक है जाको सदा
अन्व वितरेक करि मायौ ताहि कहियै॥

कवित्त

नाम रूप घटपटादिकन मे सब ठौर सब
सत्त मान ब्रह्म को सरूप लषि लैहै तू।
सोई श्री 'गुपाल' मझही मे सदा व्यापक
अवस्था अेक अेक मे न व्यापी सदा पैहै तू।

आत्मा ही ग्रह्ग जेय अेव मे नही सो चूठ,
अैसे मेरे मतै जग्र मन में मू दैहै तू।
सब परकार करि जगत री अुत्पत्ति के
विविधि प्रकारन मे मोहित न ह्वैहै तू ॥

सवैया

श्री भगौति सब विदात का मार सुताहू को मार प्रकासक है।
'श्री गुपाल' सोई परकास करया तलि रूप निसाम निभासक है।
ज्ञान रूप जा चद अद विय चादनी, अमृत रूप प्रकासक है।
जग पाप के रूप जे तापति औ अग्यान अँधरे को नासक है ॥

सातरस

कवित्त

भूलिय न हरि नर देही को सरूप पाय,
इह नर देही भव सागर को सेतु है।
करि लै सुकृति कृति यामें जो बनति तोपै,
मोपै मुनि करि तू गुपालजू सो हैतु है।

साच मुप भापि तनि माप सीलताइ रापि
हरि जस चापि सापि वेद कहि देतु है।
भले को भलाई अरु वरे की वुराई जग
जैसे कौ सु तैसोई विधाता फल देतु है ॥

कवित्त

देह धर 'सुकवि गुपालजू' बडाई यही
आप बुरो कीजे सो विचारै बुरो जाहू को।
सबही के दण्ड दैन-हारे समरथ हरि
जानत भरम केई चोर ओर साहू को।

कुवचन सुनिके उदास जिनि होइइ तू
तो तकै रहि आसरो सु ओर-निरवाहू को।
जोई ऊची चहिहै, सो आवह गिरगो यात
आपने तो जान बुरो करियै न काहू को॥

सवैया

कित्ति वही जो कहै सगरो जग, वित्त वही रिपि कौं जो घटावै।
दित्त वही मुखते न कहै, अपु भत्य वही नहि नेक हटाव।
चित्त वही जो लगे 'श्रीगुपाल' मौ वित्त वही नहि धम हटाव।
हित्त वही हियते न टरे, अरु मित्त वही मो विपत्ति बटाव॥

कवित्त

आपनो कहावै तासों हित हो जनावै कहा
मीठो बोल बोलि ऊनो वचन सुनाइयै।
मित्र मन मोती को न पानिप उतारि डारे
कुपथ निवारि नित सुपथ चलाइयै।

भनत 'गुपाल' निज हित सदा अेक बात
प्रीति-रीति यही नित सुप सरमाइय ।
औगुन दुराइयै, औ गुन प्रगटाइ,सु
जाको अपनाइय न ताकौं छिटकाइयै ।।

दोहा

यतनौं करि कछु कीजिय, कुटुम के काज ।
कीरति कलि में कवि कहूँ कबहु न होइ अकाज ।।

कवि गपाल या लोक में हाथ रह नव निद्धि ।
सुप पावै परलोक मे होइ जगत परसिद्धि ।।

यह सुनि कवि तिय के वचन मगन भओ मन माहि ।
तो भी या ससार म दूजी त्रिय भाअ नाहि ।

माता पिता भ्राता सुहृद यद्यपि बहु परिवार ।
तिय समान त्राता नही कोअू या ससार[1] ।।

इस्त्रीसुप

कवित्त

घर कौं रचाव, सुप सपति बढाव काम-
तरनि उपाय किन तिना कौं समार जे ।
भाजन बिसाय नित सुपमें गमाव दिन,
हित उपजाव हिय हुगन मनाचे जो ।

१ स त्रियसम सुखदाता नहीं, कीऊ या ससार ।

उद्यम लगाव, जग जस बरवावें,
सब दूषन नसावें, भली टहल बनावें जो ।
'सुकवि गुपाल' घर ऐसी नारि आवें जो पै
जीवत ही जग में मुकति नर पावें जो ॥

पतीवरता

पतिवरता पन साधि के पतितहु पीयहु सेय ।
सूरज मडल वेधिहै, सती होद जस लेय ॥

कवित्त

पति देव जानें पति बन्धुन की सेठ ठानें
रहै अनकूल पतिवरन ह्यिान के ।
रति सों अराधिक टहल निज हाथ करैं
छोट बडे पूर मनोरथ हियान के ।
सुचि सावधान व्हैके इन्द्रिन का जीतें लोभ
आलस न करें करी परिजें सयान वे ।
'सुकवि गुपाल' जान दूसरों पिया न, वह
लक्षन समान न पतीव्रत तियान के ॥

कवित्त

उत्तिम तिया के नित ऐसे मन बस्यो कर
सपने हू आन पुरुष न जग जानहीं ।
मध्यम जु नारी परपतिन कौ देखे ऐसें
निज सुत पनि भ्रात बधु के समान ही ।

१ मु जा घर माय गुपालकवि, पतिव्रता तिय हाद ।
_थाबु तर मार पतिहि कुटम_ कुलारव साइ ।

अधम जु धन गुन मनसि न रहै औ
    गनिका अधम दिन राति भजन न हीं ।
वेद औ पुरान सुनात ते सुनी नारि
    भानि को गुपाल पतिबरता बतावहीं ॥

दोहा

परमारथ समझे नहीं स्वारथ में लोलीन ।
ऐसी या संसार में रहति नारि मति-हीन ॥

कवित्त

व्रथा ठान ठाने, दया धरम न जाने, गुरु
    दीन को न माने, साधु संग न पिछाने है ।
भरी अभिमाने, समझे न नाम हाने, पाप
    पुन्य को न छाने, हिय अधिक अजाने है ।
गहवि के सुकवि गुपाल गुन गावे नाहि
    डाले नित धन की उमंग ताने ताने है ॥
हरि को न मन माहि माया ही में आने, तिय
    स्वारथ ही जाने परमारथ न जाने है ॥

दोहा

या कलजुग में बहुत है घर-घर ऐसी नारि ।
तिन को कछु बरनन करो, सुनि प्यारी सुकुमारि ॥

इतिश्री दंपतिवाक्य विलास नाम ग्रन्थ परमार प्रथम अधर्म पत्निका विलास

षटविंशोविलास

शान्तरस प्रबन्ध

पुरुष उवाच

अब कलि माहि गुपाल बहु जैसो जग माहि।
परि तोसी तरुनी कोऊ निरली दखि जाहि॥

सुनि कैं तेरी ग्यान को उपज्यौ हिय म ज्ञान।
भजन भावना भगनि बिन व्यथा गये दिन जानि॥

कवित्त

योंही जन्म खोयो मायावाद में बितायो कब
हीं न सुख पायो, भयो रिसैं ही के ठाट कौ।
दया-धर्म कीनो नाहिं, हरि रंग भीन्यो नाहिं,
साधन कौ चीन्यो नाहिं करि पुन्य-पाटको।
लोक में न जस, परलोक में न रस सुकृत
न उरधार्यो, न पवैया भयो काहू कौ।
कहत 'गुपाल' नर देही कौ जनम पाइ
धोबी कौ सो कुत्ता भयो घर कौ न घाट कौ॥

कवित्त

गाल कौ भयो रे, मनुमाल को भयो रे, कई
ख्याल को भयो रे क कुटंब प्रतिपाल कौ।
जालरौ भयोर मायाजाल को भयो रे याही
हाल को भयोरे क भया रे भागि भाल कौ।

---

१ है और २ है प्रति म इसमे पहले यह पंक्ति है
कहत गुपाल राना भयो रुआई परि
भनि न सीज नाम अभी भी लुगाई

आये पाछे काल पुनि ह्वै है न सम्हाल नेक,
छिनको भरोसो नाहिं, पानी भरी खाल को ।
रे नर गवार, मति कर तू अवार, मत
छोड़ि कै जंजाल, भजि मदन गुपाल को ॥

करुणाष्टक

सवैया

दुख औ सुख को भुगत यह ही सो कछू न मन मन्सूबा करै ।
जब काम परै, कोऊ काम न आवै पर बिन कामता हूहा करै ।
कविराय गुपाल विचारि कियाते, भजो हरिको भला हूआ करै ।
अपनी–अपनी गरजी जग है यह कौन री गौरि करा मूआ करै ।

जो जलमें गज को गह्यो ग्राह, भयो जिनपौरिष व्याकुल भारी ।
जरा भरि मूडि दिखाति रही, तब दीन ह्वै के सुमिर श्रीमुरारी ।
सो सुनिके करुनानिधि आय, उबारि लियो बिपदा निरवारी ।
आरति ह्वै प्रवीन कहै प्रभु ऐसे ही कीजै सहाइ हमारी ॥

द्रौपदी अंग उघारन को दुरजोधन दुष्ट अनीति बिचारी
मध्य सभा पट खैंचि दुसासन दीन ह्वै माधवहि कृष्ण पुकारी ।
चीर बढ़्यो जब कूर जबै खैंचत पायो न अंत परयो तनहारी ।
आरति ह्वै कै प्रवीन कहै प्रभु ऐसे ही कीजै सहाइ हमारी ॥

यों प्रहलाद पिता अति दुष्ट दया हरि को तपि कै निरवारी ।
लै असि मारन कोपि कै सठ नसिंघ की देह नव प्रभुधारी ।
खंभ कौं फारि उठे ललकारि कै भवन उबारि लयो उर भारी ।
आरति ह्वै कै प्रवीन कहै, प्रभु ऐसे ही कीजे सहाइ हमारी ॥

सवैया

ज्यों तिय भामा सुदमा तिने दई दारिद ने विपदा अतिभारी।
जे पठओ हठि के हरि पै, अुठि आदर सों मिले कृष्ण मुरारी।
जो विसुधा जकमी दुज दीनहि, इद्र कुवेरहु के न निहारी।
आरति व्है के प्रवीन कह प्रभु असे ही कीज सहाइ हमारी ॥

ज्यों अजामेल महा अधमी, अजसी कुकृती निज धर्म प्रहारी।
अतस में सुत नाम नरायन, टेरत ही जम फांस जुतारी।
नाम प्रताप ते पाप गओ सब मुक्त भयो हरि रूप मँझारी।
आरति ह्वै के प्रवीन कह प्रभु असेही कीजे महाइ हमारी ॥

भीलिनी गीध गऊतम नारि, भरी अघ की गनिका तुम तारी।
दत्ता पुजारी पनी कमधरजज मुवन्न की पज कही जब पारी।
कूबा, कुम्हार जुलाहा कबीर धना पुनि जाट की बाट निवारी।
आरति ह्वै के प्रवीन कह प्रभु अैस ही कीज महाइ हमारी[६] ॥

छीपियो नामा, चिमार रिदास करी सदन सों बडी हितयारी।
ज्यों नरसी, महता, चद्रहास सदा सब दासन की रुचि सारी।
जे मुनि मना, तिलोक सुनार को रूप धरयो विपदा निरवारी
आरति ह्वै के प्रवीन कहै प्रभु अैस ही कीज सहाइ हमारी[७] ॥

मै अति दीन मलीन अपी अति, कर्म को हीन ऋपी विभचारी।
दान दियो नहि कीयो कछू व्रत याते हियें यह बात विचारी।
रावरी मैंन लई सरने क्यो सदा तुम दासन को रुचिकारी।
आरति ह्वै के प्रवीन कहै प्रभु अैस ही कीजे सहाइ हमारी[१] ॥

'गाय गुपात' अधीनह्वै कै हरि अस्तुति मानलि कीनो अवाम है।
आठ मत्र यल म वरुणारस, याते धर्यो वम्न एटव नाम है।
नीप मुनै रु पढ़ै नित नेम कै, ताके पढ मुप मानि धाम हैं।
पापमिटै अुपजे अुर भक्ति, औ होन सहाय निरन्तर राम है ॥

कवित्त

थर थर कापी दुमामन की गहत चीर
द्रुपद दुलारी भागी दह दुप दगी है।
जाधा भीममेन म न छोडयो पुरमारथ औ
पाग्थ म उलीह री बुधि बल भगी है।
नाम की रपया और दीमत गुपाल भो न
हिय की लगनि अब तोमौ आइ लगी है।
पीजै न अवार प्रभु केवट ह पार करौ
अज हरि लाज की जिहाज डगमगी है ॥

* इथा स्पति विमाम नाम काव्य गानि रम्नारम
यचनन नर्वितना वित म

पाइबे को स्वाद न पातरि को स्वाद, जा
याद–जगवाद गिरि विवाद अहिआई को।
रखहोंव' कोई कछू जिन की कहत, जाके
चढ़ि बैठ ऊपर उतारे पगियाई को।
लोग र करत काम करत अन्त मानु
ननँदते लरत झूरत जात जाइ का।
कहत 'गुपाल' याते भली रँडुआई परि
भूलिके न लीजे नाम असी तौ लुगाई को॥ ॥

मायति रहनि सदा रावति कहति बान
धोवत न देख्यो मुख भोजन की नाई को।
हारनि तन कडहारति' रहति' सो
पुकारत में बाल दस पास सुन जाई को।
बड़ी अर ठान करतूति को न मान पान
पीवत हू झीकन ही जात दिन प्रानी को।
कहत गुपाल याते भली रँडुआई परि
भूलिके न लीजै नाम असी तौ लुगाई को॥२॥

सब तें चुराइ क मगायो करे चीज नित
पायो कर आप मूडो कर लरिकाई को।
दातन निपोरैं गोड होडन मु बोर सेर
तीनिहूँ ते, पेट न भरत है अघाई का।
आहि करि काम क कराहिके उठति निर
दाह्यो बोल कई बर–बर करै जाई को।
कहत 'गुपाल' याते भली रँडुआई परि
भूलिके न लीजै नाम असी तौ लुगाई को॥३॥

---

१ है नवहुँक २ है जुरत लरत ३ है हारत
४ है कड़हारत
५ है ओ मारन

वठी रहै राति दिन हाथ हौ पै हाथ धरै
घर-घर झाँव ताहि लालौ न कमाई कौ।
हाइवे को पानी ताहि'सदुही सौं राप पै
अधैन सौ औटाय क समोवति न ताई कौ।
जोर रह नन, नाव मौहन मरोर रहै,
मागे रहै मुप सिप मीपै न सिपाई कौ।
कहत 'गुपाल याते भलो रँडुआई परि
भूलिक न लीजै नाम ऐसी तौ लुगाई कौ ॥८॥

माँगत में पानी आनाकानी करि जाति, अरु
भोजन के सम नित ठानति लराई कौ।
कहुत कुठेहर से थोपि धरै रोट, कवी[४]
थोरौई करति मो भरै न पेट काई कौ।
धमपट पीटै, सबही सौं जाय हीट, बैन
कहनि न मीठे सिर बाँधि बुरवाई कौ।
कहत 'गुपाल' याते भलो रँडुआई परि
भूलिक न लीजै नाम ऐसी तौ लुगाई कौ ॥६॥

भानिजि औ भानिज भतीजिन न देखू नद
बेटी औ' जमाई देपि सकत न वाई कौ।
ब्याह-भात-छाछिव-बधाई पच देपि जिय
आऐ औं गऐ को टूक-टूक होत जाई कौ।
पाइ न पवाइ सक याते विधना नें इक
छोडि कें भलाई दीन सबै गुन ताई कौ।
कहत गुपाल' याते भलो रँडआई परि
भूलि के न लीज नाम ऐसी तौ लुगाई कौ ॥१०॥

---

१ है कडहार २ है औ मारग ३ है नैनन
४ है ताय ५ है कर व

जुठत ही प्रात नान न की भिगाय भुत,
घर घर जाय न्रनि नगाई ना।
नाज नरा आय गागा न्ड भी दिसान मरा
आय नुगरागो नर भाई ओ जमाई ना।
हारनि न नर ननारन ो मारन
पुकारत म दीयो बर नम म नुगाद ना।
रहत गुपान यान भगो न्डुआई परि
भूनिक न लाज नाम अगा नो लुगाई नीं ॥१॥

चल्योई करनि है कतरनी सी जीभ नो भी
रानिदिन रहू मुप दूसत न राई का।
नाथि हो क जाइ अरु नाधि ही र आयो नर
परी रहै चीज प अुठावनि न वाई का।
न्ठ का मनावनि न फान का न मीम कद्धी
जाय तोनी फाक चनि जानु क्यो न वाई का।
कहत गुपान यात भनो रडुआई परि
भूलिक न लीज नाम असी नी लुगाई की ॥२॥

पीमिबी न कूटिबौ न न्ठिबौ रहत सदा
हीठिबो करतु है कुटन मदा जाई का।
तीसरे हू पहर जगाज त न जाग, जागा
दिनहू मे साइबौ है पहर अगाई की।
आपनौ सदाई पायौ हाया देपि मक
आर नरक कौ नरनि सनक नहिं वाई का।
कहत गुपाल यात भनो रडुआई, परि
भूनिक न नीज नाम असो तौ नुगाई कौ ॥३॥

---

१ ह पाठ २ ह पावाक है जान ४ है राम

सानन न्यान, गूथ-हथन चलावै, तन
    झाडू सी छहाद करि नैननि है लराई की।
तहूँ न लपूरे, भागी रिस करि फरै, दांत
    काटि करि धूर, डारै माननि न काई की।
करि अपिहाई, देति देस में दुहाई, नेक
    टारति न आलन, मो कोसत म काई की।
कहत गुपाल याते भलो रँडुआई परि
    भूलिक न लीज नाम जैसो तो लुगाई की।। १४।।

जैमन के समै नहि ते मन जलाय जनै
    मैमन मिनाइ स्वाद पोवति मिठाई को।
टेढ़ी-मेढ़ी छोटी-मोटी-रोटी करि डारै कि तौ
    राखी कचकची कि जेराइ देत जाई को।
गाढ़ो करि भात को निकासति न माट, राड
    पीरि-पाड डारै न अुतरत[1]मलाई को।
कहत 'गुपाल' याते भलो रँडुआई परि
    भूलिक न लीजै नाम अैसी तो लुगाई का ।।१५।।

न्हाड नहीं धोव कबी अूजरो न राख घर
    कूरो करकट न बुहारै अँगनाइ को।
करै करति रार, पुले गारनु न निबेरियति
    न हरति न हँसि मुख फेरि कहि[5]काई को।
मारति-रहति बेटाबेटी पुचकारति न
    कबी[4]न्तकारति न स्वान औ बिलाई को।
कहत गुपाल' याते भलो रँडुआई, परि
    भूलिक न लीजै नाम जैसी तो लुगाई की ।।१६।।

---

१ है उतरनि २ है को ३ है नाज ४ है नगी
१ है कर है क
३ म गाढ़ी मूद दीन्यो कर जाद को। ४ है प ता

इड भरि पानी जामें टारति मटीग दरि
मरदु बदू जो दूटि गाव बीन जई को।
छोकि तरकारी, जारि कारी करि देइ मो
अुसजन न देइ सें अुवारि घर वाई कों।
पांनी अरु नाज आप आपनू रहत जाके,
दरिया औ साग म सवाद गुठिनाई को।
कहत 'गुपाल' याते भलो रँडुआई, परि
भूलिकें न लीज नाम असी तो लुगाई को ॥१७॥

सोवत के सम में सरीर को न रहै सुधि
बेसुध है तरो सिरो दीस्यो करें ताई क ।
अगिवार सोवें तो लुढकि पिछवारें जाइ,
ठोरत है असें सुनें कोसत में वाई कों[१]।
चढि चढि बैठें चिललाय नरराय[२] जन
औदकि परत सब गार सुनि वाई को[३]।
कहत 'गुपाल याते भलो रँडुआई, परि
भूलिकें न लीज नाम असी तो लुगाई को ॥१८॥

पवत में पाति, अरु पीसति चवाति, झारें
जाति बतराति, रहै दुप कुनवाई को।
अुठत ही प्रात जुआ मारति रहति सो,
घुवावति न कहू लहेंगा और डाडियाई को।
मवरे सरीर प बहूयो ही करें ओघ तअू
परभी परे हू न अन्हैवो होत जाई को।
कहत 'गुपाल याते भलो रडुआई परि
भूलिकें न लीजें नाम असी तो लुगाई को ॥१९॥

---

१ है बरराय २ है याई को

खद से ह जघ वडी बव से नितव, कुच–
एक एक जाको यह सेरक अढाई को।
कहुनी लौं हाथ पाभु टाग लौं अुघारे रहं
ढकत न अुर मिर पुल्यौ रहै जाई को।
होठन चवाइ कं, चुरल के से डारं पाय,
चलत हलत पेट भसि को सो धाई को[1]।
कहत गुपाल याते भलौ रंडुआई, परि
भूलिक न लीज नाम असी तो लुगाई को ॥२०॥

छरत में नाज, झारि सेरक बहारे डारि,
पीमत में आधौ करे गाड गलुआई को।
छानत में चून कछू भुसी में मिलावं, इतअुत
में अुडावं, जव माडति है ताई कौं।
पानी में वहावं औ पठौनी में लगावं, वह
सर में दिपावें, काम सेरक अढाई को।
कहत 'गुपाल' याते भलौ रंडुआई, परि
भूलिकं न लीजं नाम असी तौ लुगाई कौ॥२१॥

वच्चा गोद नकें अप जच्चा बनि बैठे जव,
होत हाल असो[1]घर नाहरि ज्यौं व्याइ को।
साजी पाय जाय भेली चारिक गसाई करि
पीवति हरि रावडी, भरिक कराही को।
मूड से वनाय लाडू, पाय दस बीस तअू
चाहति है अंसे पाय जैहं मनु काई को।
कहत गुपाल' याते पडो[2]रडुआई परि
भूलिकं न लीजं नाम असी तो लुगाई को ॥२२॥

---

१ है जाई
२ है ऐसे

तमन परासि आपज मत यों वह जत
लहम त नागें पात गहत अ०ाई तो।
धात पटहू प सो सटाके मारि जाय औ
सपोटि जाय हृद वरि चारिक गगाई वो।
नवरि डकार को उचारति है ठाडी द्वार
फूलि परि पट सा नगारो हान याई वो।
कहत गुपाल' यात भना रड.ाई परि
भूलि कें न लीज नाम अैसी ता नगाई वा ।० ॥

हाठन्लौ पोर्वहि बहावति है वीरो पाय
गालन के नीचे नौं बगाव रजगर्ई रा।
महक सरीर कौ मिगारति विगार न
तेल कौं बहाइ करि पार पग्यिाई कौ।
पहरि न जान, नेक भूषन वसन रहै
अधपुली आगी न सँभारें अचराई रौ।
कहत गुपाल याते भलौ रडुआई परि
भूलिक न लीजै नाम अ सी तौ लगाई वो ॥२८॥

होठ अ टिनी क्से र, रिठिनी केसे ह वार
लगूरिन की सी भौह श्रुति सूपजाई वो।
मुसक सौ पेट जाके पाय हाथ थूटरि से
चीयरासी चुचा टुट चपटा मा वाई रा।
अचा–तानी आधि, मुप ठीकरा सौ फूटयौ मेडकी
सी है नाक भाकसी सौ भग जाई की।
कहत गुपाल' याते भलौ रँडुआई वरि
भूलिक न लीज नाम अँसी तौ नगाई रौ ॥२५॥

ग रा रपतिवाक्य विनाम नाम काय पहर प्रग्रध नणन सप्तविंशा विनार

१ कजराई

अष्टविंशो विलास

अथ शिक्षा प्रबंध

दोहा

गुनदायक घायक विघन, गण नायक गुरवेस ।
सिवसुत ममिजुत बुद्धि भुअ जै जै देव गणेस ॥

कवित्त

ईसुर की भक्ति में सदैव मन राखै भेद
काहू कौं न दीजे निज मनहि कौं जाइ कै ।
बालक तिया की कही की न परतीति कीजे,
यन सौं न कहै भेद मनहि को चाइ कै ।
बिना अुपदेस भली चरचा के बिन सुप–
–ते न कबी कढिये बचन कहुँ धाइ कै ।
वडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई
अंते उन मानें जो 'गुपाल कविराय कै ॥१॥

तियन सौ हित बहु राखियै न कहूँ, कीजै
राजा के न हित की प्रतीति हित पाइकैं ।
टहल औ' चाकरी में बैठि इन सग रहै
पहले दिना की मरज ही सौं जाइकैं ।
विपति परे प औग क्रोध के वपत नफा
टाटे में परखिये सुमित्रन का भाय कै ।
वडाई चतुर होड चल यनि चाल जोई
अंते बा माने जो गुपाल कविराय' कै ॥२॥

मूरिव व सग मवी वटिय न जाय,
  ग नि-पडित-चतुर सतसग वरौ चाय कै ।
भले ा म वरत में ढील नहिं कीजै वडो
  पदारथ पाइय, तउन तन पाइन ।
यामें दोऊ लोकन के काम को मँभार रापै
  मिशन को हित त सुमन नचवाइ कै ।
वडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई
  अौ बन माने जो गुपाल कविराय कै ।।३।।

माता औ पिता कौं वडे आदर तें रापै, पुनि
  तथा योगि सेवा करै, मन वच-काइ के ।
मानिये अधिक गुरुदेव को पिता ते सब,
  काम में समान राप, अद्यमी सुभाइ क ।
निज तन काज, कछु दान देत रहौ, तरनाई
  तन पाइ कछु भलो करौ जाइ कै।
वडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई,
  अंते वन मानें जो 'गुपाल' कविराय के ।।४।।

नीति ही में चल, पन करि नहिं हल, काहू
  देपिक न जल, निरछलहि सुभाइ कै ।
आमदि कौ देपि करि वग्त परच पच,
  करनौं अधिक मूपताई है अघाइ के ।
आमदि परच सम रापिय मधिम रीति,
  चतुराई यह कछु रापनो बचाइ कै ।
वटोई चतुर होइ चल यनि चाल जाई,
  अंते वन मानें जो गुपाल' कविराय के ।।५।।

यथा योगि पाहुने की टहल बनाइ कर,
कहै नहिं निज दुप तिह कौं सुनाइ क।
देखत मैं वाके आगें काहू पर क्रोध मन–
सूम वतरामनि ना कर कहूँ जाइ के।
नेत्र रसना कौ पर–घर रोकि रापै, तन
बसनन राप नित अुज्जल बनाइ कै।
बडोई चतुर होइ चलै यनि चाल जोई
अेत बैन मानें जो 'गुपाल' कविराय के ॥६॥

सवन सौं रिनि रहियै सभा न बहु राजनीति
विद्या मास्त्र, नीति सत्र सुत कौं पढाइ क।
यथा योग वरनिय जैमौं जहा देप, सव
काम में समान रापै अुद्यमी सुभाइ के।
निहूं में चारयौ ओर दवि बात करै कम
राप अभ्यास नीद भूप बैन चाइ के।
बडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई
अेते बैन मानें जो गुपाल कविराय के ॥७॥

िना ही विचार कछू करिय न काम, वस्तु
काहू की मैं मन न लईय कहूं जाइ के।
दुष्टन तें राप न भलाई को भरोसो, विन
काम के परेहू वानि जानिय सुभाय कै।
कारज जो कोई आज होइ सकै जारो, ताको
कलि को भरोसो नहिं कीजै अलसाइ कै।
बडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई
अेते बन मानें जो गुपाल कविराय क ॥८॥

सतपुरसन सौं न कहियै कठोर बन
माय न चढ़यै छाड़े मानुस कौं नाइ क ।
काहू कौं न कीजै मुपत्यार घर आपने, न
कीजै मुपत्यारी पर घर कहूँ जाइ क ।
झगरे पुराणे को अुचार नहि कीज, पर
वस्तु में न वस्तु निज धरियै मिलाय क ।
बडोई चतुर होइ चलयनि चाल जोई
अत बन माने जो 'गुपाल' कविराय क ॥६॥

निज धन वस्तु को जु भद काहू को न दीज,
भाई--चारे सौ बिगारियै न रिसियाय क ।
धीरज ते कर काम काहू को न पाटी कहै
काहू के बिगार कौ न साम हूज जाय कें ।
झगरौ बिगार काहू ते न करी कीज औ' रु
परमै परपिवै न वल जोम पाइ कै ।
बडोई चतुर होइ चत यनि चाल जोई
अते बन माने जो गुपाल कविराय के ॥१०॥

काहू सौ न निज पान--पान साझें राप पुनि
सूय त पहल नीद तजियै सुभाइ क ।
क्रोध क वपत मुप मौन ह्वै रहै ताक
परबस ह्व अनीति होइ न दुपाइ के ।
घोटुन में सीस कवि रापि क न बठ उठ
दरजा सथान पहचानि सभा पाइ क ।
बडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई
अंत बन माने जो 'गपाल कविराय के ॥११॥

चान धरिय न वकवी काहू की मुतन में
राति कों नगन अुठिय न कहू जाइ के ।
बडे पुरसनते न चलो वटि आग वान
काहू की में आप अुठि वालियै न धाइ के ।
नगन पीठि पसू प सवार नहिं हूज, पीछे
कीजियै वडाई मुप प न कीज आइ के ।
वडोई चतुर होइ चल यनि चाल जोई,
अेते वन माने जो 'गुपाल' कविराय के ॥१२॥

मस्न अरु वावरे ते व्रात नही करै, तोभ
काजे टूरमति नहिं पोवै कहुं जाइ कै ।
आपनों किहू कौ लवै वैरी न वनामें, रहै
झगरा लराई ते अलग मुप नाइ के ।
अँगूठी, रुपैया, छला विना कहुं रहियै न
कहियै जो वेंन मुप कहिय मुभाइ के ।
वडोई चतुर होइ चलै यनि चाल जोई
अेतें वेंन माने जो गुपाल कविराय के ॥१३॥

मिथ्या वोलिय न औ' सहज सोंह पाइयै न,
भूनियै न अुपकार काहू को कराइ के ।
निकमा न रहि सव आदरते रापै ताते
आपनो भी आदर अधिक होइ जाइ कै ।
गई वस्तु कौन कीजे सोच मन माहि, वैरी
कौ न निरवल कवी जानिय दुपाय कै ।
वडोई चतुर होइ चलै यनि चाल जोई
येतै वन माने जौ गुपाल कविराय के ।॥१४॥

हूजै न जमान, नहि खैंचियै कमान, कूआ
फांदियै न, पेलियै न जूआ धन पाई के ।
चलियै न साझ, बहू रहियै न माझ, औ'
अहार-विवहार मे लाज कीजै जाइ के ।
मरें कौं न गारि दीजै, बोल ना परे कौं औ'
अघटियै न कबू कुछु काहू कौं पवाइ के ।
बहोई चतुर होइ चलै यनि चाल जोई
ग्रेते बन मानें जो 'गुपाल' कविराय के ॥१८॥

इतिश्री दंपति वाक्य विलास नाम काव्ये निति अपदेस वर्णन
अष्टविंगा विलास

अथ ज्ञान उपदेस

यातें स्वारथ मेटनि करि परमारथ को काम ।
हावन र अन्नम करो सुमत सुमिरो राम ॥

यह गुपाल तजि मोह सुनि, कीनो अधम जाय ।
स्वारथ ही ते कष्ट में परमारथ जिमि होइ ॥

यातिजि सुष गमुन सदा श्रीवृन्दावन धाम ।
दानि बावय विलास में मगन आठहू जाम ॥

कवि गुपाल यह जगत हित, कीनो वाक्य विनोद ।
अब अपने हजिगार सुनि सब काअू पावन मोद ॥

सबमें लोभ निकारि निय अपजायो दृढ़ ग्यान ।
तृष्णा को निरवृत्त करि भजवायो भगवान ॥

विधि कथा परपंच में मिश्रित गुण अरु दोस ।
तिनके गुण औगुनन को जानत जिनको होस ॥

जिनजानें मन दोस के होइ न मगह त्याग ।
त्याग किये बिन होत नहीं हरि चरनन अनुराग ॥

बिन अनुराग मिलै नहीं चारि नरकी मुक्ति ।
त्यागें मुक्ति मिलै नहीं, प्रभु की पूरन भक्ति ।

सो सुभगति भगवान की गावत बेद पुराण ।
ता निय को निज पनिहि में सुलभ करि दई आनि ॥

कवि गपाल की नाथ मन हरि में दियो लगाय ।
मनारिन हजिगार को सुष-दुष दियो दिषाय ॥

घटक छुटामन जगत को उपजावन हिय भवित।
दंपति वाक्य विलास कवि किये गुपाल निहारि॥
रस सागर द आदि बहु, किये ग्रंथ अभिराम।
कठिन अर्थ रु श्लेषयुत, कीने तिनमें वाम॥

कवित्त

दंपति विलास रस सगार अभय पच
घ्याई वान्य प्रश्णोत्तर पटरितु भीन है।
चीर हरण लीला, दानलीला माननीन, वन–
भोजन की लीला, बमी वेनु–गीत, चीने है।
दसम कवित, अलिकनामा, नखसिख, गुरुकोमदी
जमुनगग अष्टक नवीने है।
ब्रज जात्रा ग्रंथ औ' वन्दावन विलास, आदि
अष्टादस गृन्थ ऐ गुपाल कवि कीनेज है॥१॥

दोहा

सब कोऊ समझ न जिह, समझें ताहि प्रवीन।
याते लौकिक गन्थ यह कीनो सुगम नवीन॥
समझें मूजिम देखि कें, कियो गृन्थ परगास।
आजु कालि के नरन कों, सुनि मन होइ हुलास॥

सामयिक रुचि

आल्हखड ढोलादि द, ऐसी ऐसी ख्यात।
मन के रिझवैया बहुत, या जग में विख्यात।

कवित्त

आल्हखण्ड, ढोला, हीर–रांझ नाग पूतरी की
गोरे वारे बादल में, मति गड़–गड़ी है।
हसन भल मजनू का गावन निहान दे
छबीलिया भटियारी मन बुद्धि कड़ि गई है।

मनि भई भिष्ट, पाप छाय गयौ सिष्टि, मांझ
घर तिय छोडि, परतिय धरनें लगे।
धनवारो देपि गुरु, चेला कौ करन लागे,
थगरि-थगरि बाप-बेटा लरने लगे।
धनरुजिगार की घटाई भई मांझ,
बिना अन्न नर सब भूषे मरनें लगे।
'कहत गुपाल" बरसें न मेघ माल, याते
कलि की कुचाल ते अकाल परनें लागे ॥५॥

धरमते हीन, औ' मलीन पर तिय लीन,
बिन रुजिगार, मन दुप भरने लगे।
कीरति, प्रताप धन, धाम, परसपति कौं
आपुस में देपि-देपि नर जरनें लगे।
ताप सौं तपत, बेटा बाप ते कंपत नाहि
पाप न सपत झूठी, पाप करने लगे।
कहत 'गुपाल' बरसैं न मेघमाल याते
कलि की कुचाल ते अकाल परनें लगे ॥६॥

हिमक, हरामजादे, हिजरा, हरीफन, को
चाह रही मोठी मुष आगें कहै तिनकी।
कपटी, कुकर्मी, डिम्भधारी, औ डिफानिन, की
अनिपुष्ट म्यानन को, लीयें रहै मन की।
कहत 'गुपाल' चतुराई की न बूझ रही
रह गई चाह भारी चोर चुगलन की ॥
घुस मसपरी, औ पुसामदी बरामदी की,
अब कलिकाल में कमाई रही इन की ॥७॥

क्षीन वपत जी, माधानल की कथा यहु
    किस्सा औ' फरोसिन में, मति महि गई है ।
कहत गुन अ गुननि ते जमाने बीच
    असी–असी बातन की चाह रहि गई है ।।२।।

दोहा

जौ तर्क वि कविता करें रही न तिन की बूझ ।
याते मन कौं मारि कवि, सब सौ रहे अबूझ ।।

ज प यो जातिन, पुराण, पंडिताई न्याय
    नीति, धम सास्त्र की न बात कान दई है ।
ब न रचा की नहिं, ज्ञान परचा की नहिं,
    हरि अरचा की, चरचा की बात गई है ।
वटू पुय पाट की न मुकरम बाट की न,
    घरच व काट की न, काहू मति लई है ।
क न गुनन आजकाल के जमाने बीच
    अमी अमी बातन की चाह उड़ि गई है ।।३।।

स त सूरताई सील साहस, सहूर, सुध,
    मरम सबव सरधा की सरसाति रही ।
भजन कृपाल नाम भगति भलाई भम
    मारग, भरामौ भीग भाइप की पाति रही ।
दान सनमान पान-पान राग-रग, जस
    का । चरचा की चतुराई रीति भाति रही ।
म न की मिताई सरनागति सहाई आदि
    अ ो यान ज । कलि-काल में न जाति रही ।।४।।

---

१ है की न्या २ है धन धना ३ है जाति रगी ४ अमूल

मति भई भिष्ट, पाप छाय गयौं सिष्टि, माझ
घर तिय छोडि, परतिय धरनें लगे ।
धनवारो देपि गुरु, चेला को करन लागे,
झगरि-झगरि बाप-बेटा लरने लगे ।
धनरुजिगार की घटाई भई माझ,
बिना अन्न नर सब भूपे मरनें लगे ।
'कहत गुपाल" बरसें न मेघ माल, याते
कलि की कुचाल ते अकाल परनें लागे ॥५॥

धरमते हीन, औ' मलीन पर तिय लीन,
बिन रुजिगार, मत्र दुप भरने लगे ।
कीरति, प्रताप धन, धाय, परसपति कौं
आपुस में देपि-देपि नर जरनें लगे ।
ताप सौं तपत, बेटा बाप ते कॅपत नाहि
पाय के सपत झूठी, पाप करने लगे ।
कहत 'गुपाल' बरसें न मेघमाल याते
कलि की कुचाल ते अकाल परनें लगे ॥६॥

हिंसक, हरामजादे, हिजरा, हरीफन, को
चाह रही मीठी मुप आगें कहै तिनकी ।
कपटी, कुकर्मी, डिम्मधारी, औ डिफानिन, की
अनिपुष्ट म्यानन को, लीयें रहै मन की ।
कहत 'गुपाल' चतुराई की न बूझ रही
रह गई चाह भारी चोर चुगलन की ॥
पुम मसपरी, औ पुमामदी बरामदी को,
अब कलिकाल में कमाई रही इन की ॥७॥

दोहा

याते 'सुकव गुपाल' कौं, देबु दोस मति कोइ ।
जामूजिम देपी हुवा, ता सम बरनी गाइ ॥

ग्रंथ अनुपम यथामति बरन्यो 'सुकवि गुपाल' ।
याके पठ करें वडी, बुद्धि होइ ततकाल ॥

नरनारी मूरप सुधर, सब के सुभग गात ।
राज-सभा दुनयान म पर न पानी बात ॥

०औरन को पूठो कहै, गानी निज ठहराइ ।
तासो काई बात में कोइ न जीन भाइ ॥

बिछुरन दुष्य दुराव तिय विप्र निषध आभास ।
आछें यालकार को कियो ग्रंथ परगास ॥

०कवि गुपाल बरनन कर्यो, मन बुधि की सवार ।
ताकों सुनि गुनि रसिक जन लेभु सरस मिति स्वार ॥

फल स्तुति

दंपति वाक्य विलास कौं पढ सुनै चितलाइ ।
कोऊ बातन क करन 'हारि न आव ताइ' ॥

सब जग दुष मय जानि कें, हरि मैं लावें चित्त ।
भजन भावना भगति में पडया रहै नित नित्त ॥

इतिश्री दंपतिवाक्य विलास नाम काव्ये प्रथफन वणन नाम
अष्टाविशो विलास